19.

GANDHI

गांधी-साहित्य—४

पंद्रह अगस्तके बाद

[आजादी और बादकी समस्याओंपर विचार]

•

१५ अगस्त १९४७ से २९ जनवरी १९४८ तकके
गांधीजीके लेख

१९५०

सस्ता साहित्य मंडल • नई दिल्ली

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय,
मंत्री, सस्ता साहित्य मण्डल
नई दिल्ली

पहली बार १९५०

मूल्य
अजिल्द डेढ रुपया
सजिल्द दो रुपये

कृष्ण प्रसाद
इलाहाबाद लॉ जर्नल
इलाहा

१९.

'हे राम !'

प्रकाशककी ओरसे

इस पुस्तकमे गाधीजीके १५ अगस्त १९४७ से लेकर २९ जनवरी १९४८, यानी अतिम समयतकके लेखोका सग्रह है। इन लेखोमे गाधीजीने आजादीके साथ-साथ देशमे पैदा होनेवाली स्थितिपर तथा अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण समस्याओपर अपने विचार प्रकट किए है। बापूकी अतिम रचना भी, जिसमे उन्होने काग्रेसके भावी रूपको सामने रखकर उसके विधानकी रूप-रेखा प्रस्तुत की थी, इस पुस्तकमे सम्मिलित कर दी गई है।

एक प्रकारसे यह पुस्तक १५ अगस्त १९४७ से लेकर बापूके निर्वाणतकके समयका इतिहास है।

पुस्तककी सामग्री 'हरिजन' पत्रोमे इकट्ठी की गई है, जिसके लिए हम 'नवजीवन ट्रस्ट'के आभारी है।

—मत्री

19.

GANDHI

विषय-सूची

पंद्रह अगस्तके बाद

पंद्रह अगस्तके बाद

: १ :

पंद्रह अगस्तका उत्सव

मैने १५ अगस्तको लोगोसे उपवास करने, प्रार्थना करने और चरखा चलानेकी बात कही है। लोग कहते है, "यह क्या है ? क्या यह रज मनानेकी निशानी नही है ?" लेकिन ऐसा नही है। दु खका कारण यह है कि देशके दो टुकडे हो गए है, लेकिन ब्रिटिश हुकूमत हिदुस्तान छोड रही है, इसलिए खुशी मनानेका कारण भी ह। आज उपवास रखकर और प्रार्थना करके अपने आपको पवित्र बनानेका हमारे पास बहुत बडा कारण है। ६ अप्रल, १९१९के दिन पूरी-पूरी खुशी मनानेका कारण मौजूद था, जब कि सारे देशमे जागरणकी लहर फैल गई थी और हिंदू-मुसलमान और दूसरे लोग बिना किसी भेद-भाव या शक-शुबहेके आपसमे प्रेमसे मिलते थे। लेकिन उस दिन भी मैने लोगोको प्रार्थना करके, उपवास रखकर और चरखा चलाकर उत्सव मनानेकी सलाह दी थी। आज तो हमारे लिए अपने-आपको भगवानके सामने झुकानेका बहुत ही ज्यादा बडा कारण मौजूद है, क्योकि आज भाई-भाई आपसमे लड रहे है, खाने और कपडेकी भयकर तगी है, और देशके नेताओपर इतनी बडी जिम्मेदारीका बोझ आ पडा है कि जिसके नीचे भगवानकी कृपाके बिना मजबूत-से-मजबूत आदमीकी कमर भी टूट सकती है।

कुछ लोग १५ अगस्तके दिन काले झंडे दिखानेका विचार कर रहे है। मैं इसका समर्थन नही कर सकता। उस दिन मातम मनानेका कोई कारण नही है।

मैंने सुना है कि लोग खादी-भंडारोके पुराने झंडे नही खरीदना चाहते और नई बनावटके झंडोकी माग करते हैं। नया झंडा भी शुद्ध खादीका ही होगा। जबतक पुराने झंडे बिक न जाय तबतक खादी-भंडारोको नए झंडे बेचनेसे इन्कार कर देना चाहिए। अगर लोग चरखेके पीछे रहनेवाली सच्ची भावनाको समझ ले तो वे खादी-भंडारोके—जो गरीबोकी जायदाद है—पास एक भी पुराना झंडा होगा तबतक उसे खरीदनेमे ही अपनी इज्जत और शान समझेंगे।

नई दिल्ली, २८-७-'४७

: २ :

पंद्रह अगस्तके बाद कांग्रेस

सवाल—१५ अगस्तके बाद हिंदुस्तानके दो राज्योमें दो काग्रेसें होगी या एक ही रहेगी? या काग्रेसकी जरूरत ही न रह जायगी?

जवाब—मेरे विचारसे ऐसी सस्थाकी आजतक जितनी जरूरत थी उससे कही ज्यादा अब बढ जायगी। बेशक उसका काम बदल जायगा। अगर काग्रेसजन नादानीसे दो धर्मोकी बुनियाद पर दो राष्ट्रोके सिद्धात स्वीकार नही कर लेते तब तो एक हिंदुस्तानके लिए एक ही काग्रेस हो सकती है। हिंदुस्तानके

बटवारेसे अखिल भारतीय सस्थाका बटवारा नही होता—होना भी नही चाहिए। हिदुस्तानके दो सार्वभौम राज्योमे बट जानेसे उसके दो राष्ट्र नही हो जाते। मान लीजिए कि एक या ज्यादा रियासते दोनो राज्योसे बाहर रहती है, तो क्या काग्रेस उन्हे और उनके लोगोको राष्ट्रीय काग्रेससे बाहर कर देगी? क्या वे काग्रेससे यह माग नही करेगे कि वह उनकी तरफ विशेष ध्यान दे और उनकी विशेष परवा करे? यह जरूर है कि अब पहलेसे ज्यादा पेचीदा सवाल खडे होगे। उनमेसे कुछको हल करना मुश्किल भी हो सकता है, लेकिन काग्रेसके दो टुकडे करनेका यह कोई कारण नही होगा। इसके लिए काग्रेसको अब तककी अपेक्षा ज्यादा बडी राजनीति, ज्यादा गहरे विचार और ज्यादा ठडे दिमागसे फैसला करनेकी जरूरत होगी। हमे पहलेसे ही लाचार बना देनेवाली मुश्किलोका विचार नही करना चाहिए। आजतक जो बुराइया हो चुकी वे काफी है।

सवाल—क्या काग्रेस अब साप्रदायिक सस्था बन जायगी? आज इसके लिए बार-बार माग की जा रही है। अब जब कि मुसलमान अपने आपको परदेशी समझते है तब हम भी अपने यूनियनको हिंदू हिंदुस्तान कहकर क्यो न पुकारें और उसपर हिंदू-धर्मकी अमिट छाप क्यो न लगावें?

जवाब—यह सवाल पूछनेवालेके घोर अज्ञानको जाहिर करता है। काग्रेस कभी हिदू-सस्था नही बन सकती। जो उसे हिदू-सस्था बनाएगे वे हिदुस्तान और हिदू-धर्मके दुश्मन होगे। हिदुस्तान करोडो लोगोका राष्ट्र है। उनकी आवाज किसीने नही सुनी है। अगर कोई दो राष्ट्रके सिद्धातको मानकर

काग्रेसको हिंदू-सस्था वनानेपर जोर देते है तो वे शहरकी शोर-गुल मचानेवाली सस्थाए ही है। हम उनकी आवाजको हिंदुस्तानके लाखो गावोके करोडो लोगोकी आवाज समझनेकी गलती न करे। तीसरी वात यह है कि सघके मुसलमानोने यह जाहिर नही किया है कि वे परदेशी है। आखीरमे, हिंदुओकी वहुत-सी कमियोके वावजूद भी, विना किसी विरोधके, यह दावा किया जा सकता है कि हिंदू-धर्मने दूसरोका कभी वहिष्कार नही किया। अलग-अलग धर्मोको माननेवाले लोगोसे हिंदुस्तान एक और अखड राष्ट्र बना है। उन सवका हिंदुस्तानके नागरिक होनेका एक-सा हक है। वहुमतवाली जातिको दूसरोको दवानेका कोई हक नही है। तादाद या तलवारकी ताकत सच्चा हक नही माना जायगा। न्यायसे मिला हुआ हक ही सच्ची ताकत होती है, हालाकि इसके खिलाफ भी वहुत-सी मिसाले मिलती है।

सवाल—गैर मुस्लिमोका पाकिस्तानके झडेकी तरफ क्या रुख होना चाहिए ?

जवाब—पाकिस्तानका झडा अभी वना तो नही है। शायद वह मुस्लिम लीगका झडा ही होगा। अगर पाकिस्तान और इस्लाम एक ही चीज है तो उसका झडा वही होना चाहिए, जो दुनियाके सारे मुसलमानोका झडा है। और जो इस्लामके दुश्मन नही, उन सबको उसकी इज्जत करनी चाहिए। मै इस्लाम, ईसाई-धर्म, हिंदू-धर्म या दूसरे किसी धर्मका ऐसा झडा नही जानता। इतिहासका अच्छा जानकार न होनेके कारण मै गलती कर सकता हू। अगर पाकिस्तानका झडा,

फिर वह किसी भी रग और वनावटका हो, पाकिस्तानमे रहनेवाले किसी भी धर्मके लोगोकी एक-सी नुमाइदगी करता है तो मै उसे सलामी दूगा और आपको भी देनी चाहिए। दूसरे शब्दोमे, दोनो उपनिवेशोको एक दूसरेके दुश्मन नही वनना चाहिए। राष्ट्र-सघ (कामनवेल्थ)के उपनिवेश या डोमिनियन एक दूसरेके दुश्मन नही हो सकते। मै दुखभरी दिलचस्पीसे देख रहा हू कि दक्षिण अफ्रीकाका उपनिवेश हिदुस्तानके दो उपनिवेशोके साथ कैसा वरताव करता है। क्या दक्षिणी अफ्रीकाके गोरे अव भी हिंदुस्तानियोसे नफरत कर सकते है ? क्या दक्षिणी अफ्रीकाके यूरोपियन हिदुस्तानियोके साथ, रेलके एक ही डिव्वेमे सफर करनेसे भी, सिर्फ इसलिए इन्कार कर सकेगे कि वे हिदुस्तानी है ?

नई दिल्ली, २९–७–४७

: ३ :

सच्चा इस्लाम

एक मुसलमान भाईने जो पत्र मेरे पास भेजा था, उसमेसे निजी जिक्रको छोडकर वाकी मै नीचे दे रहा हू

"इस्लाम सारी दुनियाका धर्म है। उसका महान् सदेश है सत्यके लिए कोशिश करना और उसे पहचानना। मौलाना जलालुद्दीन रूमीकी नीचे दी गई कवितासे यह साफ मालूम होता है कि खलीफा अली जैसे महात्माओको भी सत्यको पानेके लिए कितनी वडी कोशिश करनी पडती है

१ पैगम्बर साहबने अलीसे कहा—'ऐ अली, तुम खुदाके शेर हो, सबसे बडे बहादुर हो। फिर भी तुम अपनी शेर-जैसी बहादुरी और ताकतके भरोसे मत बैठो।

(लेकिन) तुम सत्यके पेडके नीचे आसरा लो और जिसकी बुद्धि ज्ञानमय हो, उस आदमीकी शरणमें जाओ।

रूढिवादी धर्मको माननेवाले पुराणपंथी आदमीके रास्ते चलकर तुम सत्यको नही पा सकोगे।

धरतीपर उस पुरुषकी छाया काफके परवत जैसी है।

उसकी आत्मा ऊचे आसमानमें उडनेवाले गरुड जैसी है।

कयामतके दिनतक मै उसका गुणगान किया करू, तो भी वह अधूरा ही रहेगा।

याद रखो, वह सत्य मनुष्यकी शक्लमे छिपा हुआ है।

और, एक अल्ला ही उस सत्यको जाननेवाला है।

२. तुम नाम और रूपको छोडकर गुणोको पहचाननेकी कोशिश करो, जिससे ये गुण तुम्हें दुनियाके सारतक ले जाय।

इस दुनियाके सप्रदायो या फिरकोंके भेद उनके नामोसे पैदा हुए है, लेकिन जब ये सारे सप्रदाय दुनियाके सारतक पहुचते है तभी उनके माननेवाले खुदाकी शाति पाते है।

आज मुस्लिम हिंदुस्तानके बारेमे सबसे बडे दुखकी बात यह है कि वह नामोके जालमें फँस गया है। उसने इस्लामकी सच्ची सीखको भुला दिया है। इस सीखको मानकर ही वह सत्यको पहचान सकता था।

हिंदुस्तानके रहनेवाले इस्लामके अनुयायी अपनी-अपनी मरजीके मुताबिक काम करते है और फिर भी यह कहते है कि हम इस्लामके आदेशके माफिक काम करते है, लेकिन उन्हें इस बातका ध्यान नही रहता कि

चाद अपनी चादनी फैलाकर दुनियाको ठडक देता है और कुत्ते उसके सामने भूकते है

हर प्राणी अपने स्वभावके मुताबिक काम करता है और हर प्राणी और हर चीजको खुदाके हुक्मसे उसके लायक काम मिला हुआ है ।

सनातन समयकी सौगध खाकर मै कहता हू कि जो अच्छे कामोमे विश्वास रखते हैं और उन्हें करते है और जो सत्य व अहिसाका प्रचार करते है, उनके सिवा दूसरे सारे आदमी अपना सब कुछ खो देते है ।

इसलिए मै आपसे विनती करता हू कि जब आप मुसलमानोके कामोकी चर्चा करें तब मेहरबानी करके इस्लामका जिक्र न कीजिए, क्योकि आज ये दोनो एक-दूसरेसे बहुत दूर हो गए है ।"

काश, यह इस्लाम पाकिस्तानके कामोमे दिखाई दे और इस खत लिखनेवाले भाईका उलाहना गलत साबित किया जा सके ।

नई दिल्ली, २०-७-'४७

: ४ :

जिंदा दफनाया ?

एक हैदराबादी भाई लिखते है --

"गाधीको जिदा दफनाया जा रहा है ।

गाधीके माने गाधीके उसूल । इन्हीं उसूलोसे हम इस दर्जेपर पहुचे है, लेकिन जिस सीढीसे हम ऊपर उठे, उसीको तोड-ताडकर फेंक दिया

जा रहा है। यह काम वे लोग कर रहे है जो गाधीके सबसे बड़े अनुयायी भी कहलाते है। हिंदू-मुस्लिम एकता, हिंदुस्तानी, खद्दर, ग्रामोद्योग—ये सब खतम कर दिए गए है। फिर भी जो इनकी बातें करते है, वे या तो धोखेमें है, या जान-बूझकर धोखा दे रहे है।"

मुझे जिंदा दफनानेका यह तरीका सबसे अच्छा है। 'दफनाया गया' ऐसे तो मै कैसे कबूल करू ? मेरे सबसे बडे अनुयायी कौन, और सबसे छोटे कौन ? मेरा तो एक ही अनुयायी है---वह मै या सब हिंदी। मेरे अनुयायी वे ही है, जो ऊपरकी बाते मानते है। मेरी उम्मीद तो अब भी रहती है कि करोडो देहाती ये चारो चीजे मानते है। फिर भी इस इल्जाम मे काफी सचाई है। लेकिन अब मै देख रहा हू कि मुस्लिमलीगी भाई यह कहने लगे है कि हम सब भाई-भाई है। अब तो यह भी तय हो गया है कि हम सब दोनो हिस्सोके शहरी है। पासपोर्टकी जरूरत आज तो नही मानी जायगी। कोई एक हुकूमत शुरू करे तभी ऐसा हो सकता है। हम आशा रखे और ऐसा बरताव करे जिससे पासपोर्टकी जरूरत ही न रहे। यह भी आशा रखे कि दोनोमे-से कोई भी खद्दर नही छोडेगे, देहाती उद्योग-धन्धोको नुकसान नही पहुचाएगे। हिदुस्तानीके बारेमे लिख चुका हू। उसे कैसे छोडा जाय ? मुसलमान जिनकी मातृभापा उर्दू है, उर्दू कैसे छोडे ? उन्हे अपनी उर्दू आसान करनी होगी और हिदुओको, जो उर्दू नही जानते, अपनी हिदी आसान करनी होगी। तभी दोनो एक दूसरेको समझ सकेगे। सबसे बडी बात तो लेखकने छोड ही दी है। हिदुओको अस्पृश्यता और जात-

पात छोडकर शुद्ध बनना होगा। मुसलमानोको हिंदुओकी नफरत छोडकर साफ होना होगा।

श्रीनगर, ३–८–'४७

: ५ :

तिरंगा झंडा

जिन हैदराबादी भाईने यह लिखा है कि 'गाधीको जिदा दफनाया जा रहा है' वे ही आगे चलकर झडेके बारेमे लिखते है —

"तिरगा झडा हमारे आदोलनका प्रतीक था। उससे चरखा हटाकर सबसे बडा अपराध किया गया है। नए चक्का या पुराने अशोकके चक्रका गाधीके चरखेसे कोई सबध नही है, बल्कि वे परस्पर विरोधी है। गाधीका चरखा धर्मसे, मजहबसे परे है, मगर नया चक्र हिंदू-धर्मका प्रतीक है। गाधीका चरखा 'अहिंसक परिश्रम' का प्रतीक है, मगर नया चक्र 'सुदर्शन चक्र' का प्रतीक है (ऐसा मुशीजी अपने भाषणमें कहते है)। सुदर्शन चक्र हिंसाका प्रतीक है। इस प्रकार नए झडेसे हिंदू-धर्मके नामपर राष्ट्रकी हिंसावृत्तिको उत्तेजन मिलेगा। उस दिशामें यह जान-बूझकर प्रयत्न किया जा रहा है। यह पाकिस्तानको मिलानेका नही, बल्कि पाकिस्तानको पक्का करनेका तरीका है।"

मुशीजीने जो कहा उसे मैंने पढा नही है। अगर झडेका वही अर्थ है, जो ऊपर बताया गया है तो राष्ट्रीय झडा गया। अशोकका चक्र किसी भी हालतमे हिंसाका प्रतीक नहीं बन सकता। महाराज अशोक बौद्ध थे, अहिंसाके पुजारी थे।

सुदर्शन चक्रका तो झंडेके चक्रके साथ ताल्लुक नही हो सकता। सुदर्शन चक्र मेरी दृष्टिसे अहिंसाकी निशानी है। लेकिन यह मेरी ही बात हुई। साधारण रूपसे सुदर्शन चक्र हिंसाका साधन माना जाता है। इसमे शक नही कि नए झंडेमे और उसपर जो बहस हुई है, उससे यह कहा जा सकता है कि अगरचे चरखेका मूल्य गया नही है, फिर भी कम तो जरूर हुआ है। अशोक-चक्र और सूत कातनेका चरखा एक है या नही, यह तो आखिरकार लोगोके आचारपर निर्भर रहेगा।

श्रीनगर, ३–८–'४७

: ६ :

चार सवाल

श्रीनगरमे मुझे लाला किशोरीलालके बंगलेमे ठहराया गया था। वहा मै तीन दिन रहा। इस दरमियान मैने लालाजीके कंपाउंडमे प्रार्थना तो की, मगर कोई भाषण नही दिया। दिल्ली छोडनेके पहले मैने यह ऐलान कर दिया था कि काश्मीरमे मै कोई भाषण नही दूंगा। मगर प्रार्थनामे शामिल होनेवाले भाइयोमेसे कुछने मुझसे सवाल पूछे। उनमेसे एक सवाल यह था—

"पिछली शामको मैं आपकी प्रार्थना-सभामे हाजिर था जिसमें आपने दूसरी जातियोकी दो प्रार्थनाए पढी थी। क्या आप बतलानेकी

कृपा करेंगे कि ऐसा करनेमें आपका क्या ख्याल है ? और मजहब या धर्मसे आपका क्या मतलब है ?"

जैसा कि मै आजसे पहले भी बतला चुका हू--रेहाना तैयबजीकी सलाहसे कुछ बरस पहले कुरानकी आयते मेरी प्रार्थनामे शामिल की गई थी। उन दिनो रैहानाबहन सेवाग्राम-आश्रममे रहती थी। दूसरी प्रार्थना, डॉ० गिल्डरकी प्रेरणासे पारसी प्रार्थनाओमेसे ली गई है। आगाखा-महलमे नजरबद-की हालतमे रहते हुए मैने जब अपना उपवास तोडा तब डाक्टर साहबने पारसी धर्मकी प्रार्थनाए पढी थी। मेरी रायमे इनको शामिल कर लेनेसे प्रार्थनाका महत्त्व बढा है। अब वह पहलेसे ज्यादा लोगोके दिलोतक पहुचती है। इससे हिंदू-धर्मकी विशालता और सहिष्णुता जाहिर होती है। सवाल पूछने-वाले भाईको यह भी पूछना चाहिए था कि प्रार्थनाकी शुरुआत जापानी भाषामे गाई जानेवाली बौद्ध प्रार्थनासे क्यो होती है ? इस बौद्ध प्रार्थनाके पीछे, उसकी पाकीजगीके अनुकूल ही एक इतिहास है। जब एक भले जापानी साधु सेवाग्राम-आश्रममे ठहरे हुए थे तब रोज सवेरे इस बौद्ध प्रार्थनासे सारा सेवाग्राम गूजता था। ये जापानी सत अपने मौन और गौरवभरे स्वभावकी वजहसे सारे आश्रमवासियोके प्यारे बन गए थे।

जम्मू, ५-८-'४७

उन भाईका दूसरा सवाल यह था--

"लार्ड माउटबेटनको पहला गवर्नर जनरल क्यो चुना गया ?"

जहातक मेरा ख्याल है, सवाल पूछनेवाले भाईने इसके कारणका सही अदाज लगाया है। इस ओहदेके लिए इतना

योग्य कोई हिंदुस्तानी नही था। हिंदुस्तान आजादी-विलकी कल्पना करनेमे लार्ड माउटवेटनका पूरा नही तो कुछ हिस्सा जरूर था, इसलिए राष्ट्रके जहाजको तूफानमेसे सुरक्षित निकाल ले जानेमे वे आरजी सरकारके मेम्वरोको सवमे काविल आदमी जान पडे। इसमे अगर एक तरफ अग्रेजोकी तारीफकी वात है तो दूसरी तरफ हिंदुस्तानके राजनीतिज्ञोको भी इसके लिए उतना ही श्रेय दिया जाना चाहिए, जिन्होने यह वतला दिया कि तरफदारीसे ऊपर उठनेकी उनमे योग्यता है। साथ ही उन्होने दिखला दिया कि अभीतक जो उनके विरोधी रहे है, उनपर भरोसा करनेकी वहादुरी उनमे है।

उनका तीसरा सवाल था—

"आप इस वातके लिए राजी क्यो नही होते कि अल्पसख्यक लोग अपने-अपने उपनिवेशोको छोड़ दें ?"

इस वातपर राजी होनेके लिए मुझे किसीने नही कहा। मगर मुझे ऐसी किसी भी हलचलका विरोध करना चाहिए। किसी भी उपनिवेशके वहुसख्यकोपर अविश्वास करनेका कोई कारण नही है। और अव तो हर हालतमे, जव हिंदुस्तानमे दो सार्वभौम राज वन गए है, तव इनमेसे हर राजको अपने यहा रहनेवाले दूसरे राजके अल्पसख्यकोके प्रति उचित व्यवहार-की गारटी देनी होगी। मगर हम उम्मीद करे कि ऐसा मौका कभी नही आएगा। मै भी मानता हू कि हर एक हकके साथ एक फर्ज जुडा हुआ है। ऐसा कोई हक नही जो ठीक तरहसे अदा किए हुए फर्जसे न निकलता हो।

उन भाईका चौथा सवाल है—

"क्या आप १५ अगस्तको हिंदुस्तानके आजाद हो जानेपर देशकी राजनीतिमें भाग लेना छोड देंगे ?"

पहली वात तो यह है कि हमे जो आजादी मिल रही है वह राम-राजके नजदीक ले जानेवाली नही है। राम-राज तो पहलेकी तरह आज भी हमसे करोडो मील दूर है। और फिर करोडोका जीवन ही हर हालतमे मेरी राजनीति है। उसे छोडनेकी हिम्मत मुझमे नही है। उसे छोडनेका मतलव होगा मेरे जीवनके काम और भगवानको माननेसे इन्कार करना। यह वहुत सभव है कि १५ अगस्तके वाद मेरी राजनीति कोई दूसरा रास्ता ले ले। लेकिन इसका फैसला तो परिस्थितिया ही करेगी।

आखिरमे उन्होने पूछा है—

'आपने विहारमें काफी काम किया है, लेकिन पजावको क्यो भुलाया ?'

इसके जवावमे मै इतना ही कह सकता हू कि मेरे पजाव न जानेका यह मतलव न लगाया जाय कि मैने उस सूवेको भुला दिया है। फिर भी यह सवाल विलकुल ठीक है और कई वार मुझसे पूछा भी गया है। मैने पूरी ईमानदारीसे इसका यही जवाव दिया है कि न तो मुझे पजाव जानेके लिए अपनी अतरात्मासे कोई प्रेरणा मिली और न मेरे सलाहकारोने मुझे प्रोत्साहन दिया।

पटना जाते हुए, ट्रेनमे, ७-८-'४७

: ७ :

हलफनामेका मसविदा

श्री ब्रजलाल नेहरूने 'हरिजन'मे छापनेके लिए जो हलफनामेका मसविदा भेजा है, वह नीचे दिया जाता है--

इस हलफनामेपर हिंदुस्तानकी फौजी या गैर-फौजी सरकारी नौकरियोके सारे मेम्बरोको, केन्द्रकी, सूबोकी या स्थानीय नौकरियोके सारे उम्मीदवारोको, इन सरकारोके मातहत दूसरी बडी-बडी तनखाहोवाली नौकरियोके लिए अर्जी करनेवालोको और धारासभाओके मेम्बरोके साथ-साथ विधान-सभाके मेम्बरोको भी दस्तखत करने होगे।

मै ईमानदारीके साथ यह सौगध लेता हू कि--

१. मै हिंदुस्तानी सघका नागरिक हू, जिसके प्रति हर हालतमें वफादार रहनेका मै वचन देता हू।

२. मै इस उसूलको नही मानता कि हिंदू और मुसलमान दो अलग राष्ट्र है। मेरी यह राय है कि हिंदुस्तानके सब लोग--फिर वे किसी भी जाति या धर्मके हो--एक ही राष्ट्रके अग है।

३. मै अपने सारे कामो और भाषणोमें ऐसी कोशिश करूगा, जिससे इस पुराने और पवित्र देशके सब लोगोकी एक-राष्ट्रीयताके विचारको शक्ति मिले।

४. अगर किसी समय मै इस प्रतिज्ञाको तोड़नेका अपराधी साबित होऊ तो मुझे उस समयकी अपनी किसी भी बडी तनखाहकी नौकरी या ओहदेसे हटा दिया जाय।"

इस हलफनामेके शब्दोमे सुधारकी गुजाइश हो सकती है, लेकिन अगर हम राजनैतिक मैदानमे बढनेवाले रोगसे

मुक्त होना चाहते है तो इस मसविदेके भीतर रही भावना सचमुच तारीफके लायक और अपनाने-जैसी है।

पटना जाते हुए, ट्रेनमे, ७–८–'४७

: ८ :

विद्यार्थियोंकी कठिनाइयां

सवाल—"आजकल विद्यार्थियोके तमाम मौजूदा सघोको एक राष्ट्रीय परिषद्का रूप देने, विद्यार्थियोके आदोलनकी वुनियादको फिरसे वदलने और विद्यार्थियोके एक सयुक्त राष्ट्रीय सघको जन्म देनेकी कोशिश हो रही है। आपकी रायमें इस नए सघका क्या मकसद होना चाहिए ? आज देशमें जो नई हालतें पैदा हो गई है उनमें इस विद्यार्थी सघको कौनसे काम करने चाहिए ?"

जवाब—इसमे कोई शक नही कि हिंदू, मुसलमान और दूसरे विद्यार्थियोका एक राष्ट्रीय सघ होना चाहिए । विद्यार्थी राष्ट्रके भविष्यको वनानेवाले होते है। उनका वटवारा नही किया जा सकता। मुझे यह कहते दुख होता है कि न तो विद्यार्थियोने खुद अपने लिए कभी यह सोचा और न नेताओने उन्हे सिर्फ अभ्यासमे ही मन लगानेका मौका दिया, ताकि वे अच्छे नागरिक वन सके। यह सडाँद विदेशी हुकूमतके साथ हमारे देशमे शुरू हुई। उस हुकूमतके वारिस वननेवाले हम लोगोने भी वीते जमानेकी गलतियोको सुधारनेकी तकलीफ नही की। इसके अलावा, अलग-अलग सियासी पार्टियोने

विद्यार्थियोको अपने जालमे फँसानेकी कोशिश की, मानो वे मछलियोके झुड हो। और विद्यार्थी नादानीसे इस फैलाए हुए जालमे फँस गए।

इसलिए किसी भी विद्यार्थी-सघके लिए यह काम हाथमे लेना वडा कठिन है। लेकिन उनमे ऐसे वहादुर लोग जरूर होगे जो इस जिम्मेदारीसे पीछे नही हटेगे। उनका ध्येय होगा, सव विद्यार्थियोको एक सस्थाके मातहत सगठित करना। यह काम वे तवतक नही कर सकेगे, जवतक वे सक्रिय राजनीतिसे विलकुल अलग रहना नही सीखेगे। विद्यार्थीको चाहिए कि वह ऐसे कई सवालोका अध्ययन करे जिनका हल किया जाना जरूरी हो। उसके काम करनेका वक्त पढाई खतम करनेके वाद ही आता है।

सवाल—"**आज विद्यार्थियोके सघ राष्ट्र-निर्माणके काममें अपनी शक्ति लगानेके वनिस्वत राजनैतिक मामलोपर प्रस्ताव पास करनेकी तरफ ज्यादा ध्यान देते हैं। इसका एक कारण यह है कि देशकी राजनैतिक पार्टिया अपना मतलब निकालनेके लिए विद्यार्थियोकी सस्थाओको हथियानेकी कोशिश करती रही हैं। हमारी आजकी फूट भी इस राजनैतिक दलवदीके कारण ही है। इसलिए हम कोई ऐसा तरीका काममें लाना चाहते हैं जिससे विद्यार्थियोके नए राष्ट्रीय सघमें दलवदी और फूटके विचार फिर न फैल सकें। क्या आप यह सोचते हैं कि विद्यार्थियोके सघ राजनीतिसे विल्कुल अलग रह सकते हैं? अगर नहीं तो आपकी रायमें विद्यार्थीसघोको देशकी राजनीतिमें किस हदतक दिलचस्पी लेनी चाहिए?**"

जवाब—कुछ हदतक इस सवालका जवाव ऊपर दिया जा

चुका है। विद्यार्थियोको सक्रिय राजनीतिसे विलकुल अलग रहना चाहिए। यह देशके एकतरफा विकासकी निशानी है कि तमाम पार्टियोने अपना मतलव पूरा करनेके लिए ही विद्यार्थियोका उपयोग किया है। शायद ऐसी हालतमे यह लाजिमी भी था, जव कि शिक्षाका एकमात्र ध्येय गुलामीसे चिपटे रहनेवाले गुलामोकी एक जाति पैदा करना था। मुझे उम्मीद है कि यह काम अव खतम हो गया। आज विद्यार्थियोका पहला काम उस शिक्षापर पूरी तरह विचार करना है जो आजाद राष्ट्रके वच्चोको दी जानी चाहिए। आजकी शिक्षा तो हरगिज ऐसी नही है। मेरे लिए यहा इस सवालपर विचार करना जरूरी नही कि वह कैसी होनी चाहिए। मै तो सिर्फ यही कहना चाहता हू कि विद्यार्थी अपने-आपको इस धोखेमे न रखे कि तालीमके सवाल पर हर पहलूमे सोचना और उसकी योजना वनाना सिर्फ यूनिवर्सिटी सीनेटके मेम्वरोका ही काम है। उन्हे अपने अदर सोचने-विचारनेकी शक्ति वढानी चाहिए। यहा मै इस वातकी सलाह तो दे ही नही सकता कि विद्यार्थी हडतालो या दूसरी इसी तरहकी हलचलोके दवावसे यह हालत पैदा कर सकते है। उन्हे तालीमके मौजूदा ढगकी रचनात्मक और जाग्रत टीका करके जन-मत तैयार करना चाहिए। सीनेटके मेम्वर पुराने ढगसे पले-पुसे है और शिक्षित हुए है। इसलिए वे इस दिशामे जल्दी-जल्दी आगे नही वढ सकते। लेकिन यह सच है कि जागृति पैदा करके उनसे यह काम कराया जा सकता है।

सवाल—"आज ज्यादातर विद्यार्थी राष्ट्रीय सेवामें दिलचस्पी नहीं

लेते। उनमेंसे बहुतसे तो पश्चिमकी फैशनेबल आदतोंके गुलाम बन रहे हैं और अधिकाधिक तादादमें शराब पीने वगैरहकी बुरी आदतोंके शिकार हो रहे हैं। आजादीसे किसी विषयपर सोचनेकी न तो उनमें काबलियत है, न इच्छा। हम इन सारी समस्याओंको हल करना चाहते हैं और नौजवानोंमें उच्च चरित्र, निजाम और काबलियत पैदा करना चाहते हैं।"

जवाब—इसमे विद्यार्थियोकी मौजूदा अस्थिर मनोवृत्तिका वर्णन है। जब शात वातावरण पैदा होगा और विद्यार्थी आदोलन करना छोडकर गभीरतासे अपनी पढाईमे जुट जायगे तब उनकी यह हालत नही रहेगी। विद्यार्थीकी जिदगीकी जो सन्यासीकी जिदगीसे तुलना की गई है वह ठीक है। उसे सादा रहन-सहन और ऊचे विचारकी जीती-जागती मूर्ति होना चाहिए। उसे निजाम या अनुशासनका अवतार होना चाहिए। विद्यार्थीका आनद उसकी पढाईमे है। जब विद्यार्थी अपनी पढाईको लाजमी टैक्सके रूपमे देखना छोड देता है तब वह जरूर उसको सच्चा आनद देती है। विद्यार्थीके लगातार अधिकाधिक ज्ञान हासिल करते जानेसे बढकर उसके लिए दूसरा आनद और क्या हो सकता है?

पटना जाते हुए, ट्रेनमे, ७-८-'४७

: ६ :

घुड़दौड़की लत

नीचे दिया हुआ अश 'हरिजनबधु' मे छपे एक गुजराती पत्रका सार है—

"वरसातके मौसममें पूनामें घुडदौड होती है। तीन स्पेशल गाडिया हर रोज पूना जाती हैं और वापिस आती है। और यह तब होता है जब गाडियोमें जगह नही मिलती और कामकाजी लोगोको मुसाफिरोसे ठसाठस भरी हुई गाडियोमें सफर करना पडता है। मुसाफिर अक्सर पायदानोपर लटके जाते हैं। नतीजा यह होता है कि कभी-कभी प्राण-घातक दुर्घटनाए हो जाती हैं। एक बात और भी है, और वह यह कि जब पेट्रोलकी सब जगह कमी है तब अतिरिक्त मोटरगाडिया भी बम्बईसे पूना दौडती हैं। क्या ये मुसाफिर बम्बईमें अपना हमेशाका राशन नहीं लेते ? क्या इनको स्पेशल गाडियोमें और घुडदौडके मैदानमें नाश्ता नहीं मिलता ?

इसपरसे मेरे मनमें सिविल सर्विसकी जाच करनेकी बात पैदा होती हैं। जिन लोगोके बुरे इतजामकी हम पहले निंदा किया करते थे, क्या वे ही लोग आज देशका राजकाज नहीं चला रहे हैं ? हमारी आज क्या हालत हो रही है ? हमें जरूरतका अनाज और कपडा भी मयस्सर नहीं होता। और हम अपनेको खर्चीले खेल-तमाशोमें फँसा हुआ पाते हैं।"

मै अक्सर घुडदौडकी बुराइयोके बारेमे लिख चुका हू। मगर उस वक्त मेरी बातपर कोई ध्यान नही देता था। विदेशी शासक इस बुरी आदतको पसद करते थे और उन्होने इसे एक किस्मकी अच्छाईका जामा पहना दिया था। मगर अब उस गदी आदतसे चिपके रहनेकी कोई वजह नही है। या कही यह तो न हो कि हम विदेशी हुकूमतकी बुराइयोको तो बनाए रखे और उसकी अच्छाइया उसके साथ ही खत्म हो जाए ?

पत्र लिखनेवाले भाई सिविल सर्विसके बारेमे जो कहते है, उसमे बहुत कुछ सचाई है। वह एक ऐसी सस्था है जिसके आत्मा नही है। वह अपने मालिकके रग-ढगपर चलती है।

इसलिए अगर हमारे नुमाइदे सचेत रहे और हम उनपर अपना कर्त्तव्य-पालन करनेके लिए जोर दे तो सिविल सर्विसके जरिए बहुत कुछ काम किया जा सकता है। आलोचना किसी भी जनतत्रीय सरकारका भोजन है। मगर वह रचनात्मक और समझदारीभरी होनी चाहिए। जन-आदोलनकी शुरु-आतमे काग्रेस अपनी जिस बुनियादी पवित्रताके लिए मशहूर थी, उसपर ही जनताकी आशा टिकी हुई है। और अगर हमे जिदा रहना है तो काग्रेसमे वह पवित्रता फिरसे लौटानी होगी।

पटना जाते हुए, ट्रेनमे, ७-८-'४७

: १० :

चमत्कार या संयोग ?

शहीदसाहब सुहरावर्दी और मै बेलियाघाटाके एक मुस्लिम मजिलमे साथ-साथ रहते है। कहा जाता है कि यहा दगेमे मुसलमानोको नुकसान पहुचा है। हम १३ अगस्त, बुधवारको इस घरमे आए और १४ अगस्तको ऐसा मालूम हुआ मानो यहाके हिदुओ और मुसलमानोमे कभी कोई अदावत या दुश्मनी थी ही नही। हजारोकी तादादमे वे एक-दूसरेसे गले मिलने लगे और निडर बनकर उन जगहोसे गुजरने लगे जिन्हे एक या दूसरी पार्टी खतरनाक समझती थी। सचमुच मुसलमान-भाई अपने हिदू भाइयोको मसजिदोमे ले गए और

हिंदू अपने मुसलमान भाइयोको मदिरोमे । दोनोने एक साथ 'जय हिंद' और 'हिंदू-मुस्लिम एक हो' के नारे लगाए । जैसा कि मैने ऊपर कहा है, हम एक मुसलमानके घरमे रहते है और मुसलमान सेवक और सेविकाए हमारे सुख-सुभीतोका ज्यादा-से-ज्यादा ध्यान रखती है । मुसलमान स्वयसेवक हमारा खाना बनाते है । खादी प्रतिष्ठानसे बहुतसे लोग मेरी सेवाके लिए आना चाहते थे, लेकिन मैने उन्हे रोक दिया । मैने यह पक्का इरादा कर लिया था कि मुसलमान भाई और बहने जो कुछ भी सुख-सुभीते हमे दे सकेगे, उन्हीसे हमे पूरा सतोष मानना चाहिए । और, मुझे यह कहना चाहिए कि अपने इस इरादेसे मुझे ज़रा भी नुकसान नही हुआ । मकानके अहातेमे 'जय हिंद' और 'हिंदू-मुस्लिम एक हो' के नारे लगाने-वाले अनगिनत हिंदू-मुसलमानोका ताता बधा रहता है । मै तो यहातक सुनता हू कि भाईचारेका उत्साह लगातार बढता जा रहा है ।

इसे चमत्कार कहा जाय या सयोग ? इसको किसी भी नामसे क्यो न पुकारा जाय यह तो साफ है कि चारो तरफसे इसका जो श्रेय मुझे दिया जाता है उसके लायक मै नही हू । तब क्या शहीदसाहबको इसका श्रेय है ? उन्हे भी इसका श्रेय नही मिलना चाहिए । एकाएक होनेवाला यह भारी फेरफार एक या दो आदमियोका काम नही है । हम तो भग-वानके हाथके खिलौने है । वह हमे अपने इशारेपर नचाता है । इसलिए आदमी ज्यादा-से-ज्यादा यही कर सकता है कि वह इस नाचमे कोई रुकावट न डाले और अपने भगवानकी

इच्छाको अच्छी तरह पूरी करे। इस तरह विचार करनेपर यह कहा जा सकता है कि इस चमत्कारमे भगवानने हम दोनोको अपना साधन बनाया है। मै अपने आपसे यही पूछता हू कि क्या मेरा बचपनका सपना बुढापेमे पूरा होगा ? देखू क्या होता है।

जो भगवानमे पूरी श्रद्धा रखते है उनके लिए न तो यह चमत्कार है और न सयोग। घटनाओका सिलसिला यह साफ बताता है कि दोनो जातिया, अनजानमे ही, इस भाई-चारेके लिए तैयार की जा रही थी। इस जगह हम दोनोके पहुच जानेसे देखनेवालोको आनदसे भरी इस घटनाके लिए हमे श्रेय देनेका मौका मिल गया।

कुछ भी हो, खुशीसे पागल बना देनेवाली ये घटनाएं मुझे खिलाफत आदोलनके शुरुआतके दिनोकी याद दिलाती है। तब जनतामे भाईचारेकी भावना नए अनुभवके रूपमे फूट पडी थी। इसके अलावा, तब हमारे खिलाफत और स्वराजके आदर्श एक-दूसरेसे जुडे हुए थे। आज उस तरहकी कोई बात नही है। हमने आपसी नफरतका जहर पी लिया है। इसलिए भाईचारेका यह अमृत हमे बहुत ज्यादा मीठा लगना चाहिए और उसकी मिठास कभी कम न होनी चाहिए।

आजके नारोमे हिदुओ और मुसलमानोके मुहसे एक साथ 'हिदुस्तान-पाकिस्तान जिदाबाद' का स्वर भी सुनाई देता है। मेरे विचारसे यह बिलकुल ठीक है। पाकिस्तानको मजूर करनेका कोई भी कारण क्यो न रहा हो, तीन पार्टियोने उसे मान लिया है। तब अगर दो पार्टिया एक दूसरेकी

दुश्मन न हो—और यहा तो वे साफ तौरपर एक-दूसरीकी दुश्मन नही मालूम होती—तो ऊपरका नारा लगानेमे कोई बुराई नही है। अगर दोनो जातिया सचमुच दोस्त बन जाए तो दोनो राज्योकी लबी जिदगीकी कामना न करना बेवफाई होगी।

बेलियाघाटा, १६-८-'४७

: ११ :

हिंदुस्तानी गवर्नर

यहा 'इडिया' शब्दके मानोमे हिदुस्तान और पाकिस्तान दोनो शामिल है। शब्दोका ठीक-ठीक अर्थ किया जाय तो हिदुस्तानसे हिंदुओका देश और पाकिस्तानसे मुसलमानोका देश समझा जा सकता है। मेरी रायमे दोनो शब्दोका ऐसा इस्तेमाल कायदेके खिलाफ है। इसलिए मैने यहा जान-बूझकर 'हिदुस्तान' शब्दका इस्तेमाल किया है।

ब्रिटिश जुएसे आजादी दिलानेवाली काग्रेसका जो खास जलसा १९२०मे कलकत्तेमे हुआ था, उसमे खिलाफत-स्वराज-असहयोगका प्रस्ताव पास हुआ था। वह हिंदू और मुसलमान दोनोके लिए था। उसका मकसद लोगोमे आत्म-शुद्धिकी भावना पैदा करना था, जिससे अच्छी और बुरी ताकतोके बीच असहयोग किया जा सके। इसलिए,

१ हिंदुस्तानी गवर्नरको चाहिए कि वह खुद पूरे सयमका

पालन करे और अपने आसपास सयमका वातावरण खडा करे। इसके विना शराव-वदीके वारेमे सोचा भी नही जा सकता।

२ उसे अपनेमे और अपने आसपास हाथ-कताई और हाथवुनाईका वातावरण पैदा करना चाहिए, जो हिदुस्तानके करोडो गूगोके साथ उसकी एकताकी जाहिरा निशानी हो, 'मेहनत करके रोटी कमाने' की जरूरतका, और सगठित हिंसाके खिलाफ---जिसपर आजका समाज टिका हुआ मालूम होता है---सगठित अहिसाका जीता-जागता प्रतीक हो।

३ अगर गवर्नरको अच्छी तरह काम करना है तो उसे लोगोकी निगाहोसे वचे हुए, फिर भी सवकी पहुचके लायक, छोटेसे मकानमे रहना चाहिए। ब्रिटिश गवर्नर स्वभावसे ब्रिटिश ताकतको दिखाता था। उसके और उसके लोगोके लिए सुरक्षित महल वनाया गया था---ऐसा महल जिसमे वह और उसके साम्राज्यको टिकाए रखनेवाले उसके सेवक रह सके। हिदुस्तानी गवर्नर राजा-नवावो और दुनियाके राज-दूतोका स्वागत करनेके लिए थोडी शान-शौकतवाली इमारते रख सकते है। गवर्नरके मेहमान बननेवाले लोगोको उसके व्यक्तित्व और आसपासके वातावरणसे 'ईवन अण्टु दिस लास्ट' (सर्वोदय)---सवके साथ समान वरताव---की सच्ची शिक्षा मिलनी चाहिए। उसके लिए देशी या विदेशी महगे फर्निचरकी जरूरत नही। 'सादा जीवन और ऊंचे विचार' उसका आदर्श होना चाहिए। यह सिर्फ उसके दरवाजेकी ही शोभा न वढाए, वल्कि उसके रोजके जीवनमे भी दिखाई दे।

४ उसके लिए न तो किसी रूपमे छुआछूत हो सकती है

और न जाति, धर्म या रगका भेद। हिंदुस्तानका नागरिक होनेके नाते उसे सारी दुनियाका नागरिक होना चाहिए। हम पढते है कि खलीफा उमर इसी तरह सादगीसे रहते थे, हालाकि उनके चरणोपर लाखो-करोडोकी दौलत लोटती रहती थी। इसी तरह पुराने जमानेमे राजा जनक रहते थे। इसी सादगीसे ईटनके स्वामी, जैसा कि मैने उन्हे देखा था, अपने भवनमे ब्रिटिश द्वीपोके लार्ड और नवावोके लडकोके बीच रहा करते थे। तव क्या करोडो भूखोके देश हिंदुस्तानके गवर्नर इतनी सादगीसे नही रहेगे ?

५ वह जिस प्रातका गवर्नर होगा, उसकी भापा और हिंदुस्तानी बोलेगा, जो हिंदुस्तानकी राप्ट्रभापा है और नागरी या उर्दू लिपिमे लिखी जाती है। वह न तो सस्कृत शब्दोसे भरी हुई हिंदी है और न फारसी शब्दोसे लदी हुई उर्दू। हिंदुस्तानी दरअसल वह भापा है, जिसे विध्याचलके उत्तरमे करोडो लोग वोलते है।

हिंदुस्तानी गवर्नरमे जो-जो गुण होने चाहिए उनकी यह पूरी सूची नही है। यह तो सिर्फ मिसालके तौरपर दी गई है।

हम आशा करे कि वे अग्रेज भी, जिन्हे हिंदुस्तानी नुमाइदोने गवर्नर चुना है और जिन्होने हिंदुस्तान और उसके करोडोकी वफादारीकी सौगध ली है, वही सादा जीवन वितानेकी भरसक कोशिश करेगे, जिसकी हिंदुस्तानी गवर्नरसे आशा की जाती है। वे ब्रिटेनके उन अच्छे-से-अच्छे गुणोका प्रदर्शन करेगे, जो वह हिंदुस्तान और दुनियाको दे सकता है।

कलकत्ता, १७–८–'४७

: १२ :

भगवान भला है

भगवान उसी अर्थमे भला नही है, जिसमे इन्सान भला है। इन्सान तुलनामे भला है। वह बुरेके बनिस्बत भला ज्यादा है। लेकिन भगवान तो भला-ही-भला है। उसमे बुराईका नाम भी नही है। भगवानने इन्सानको अपनी ही तरह बनाया। लेकिन हमारे दुर्भाग्यसे इन्सानने भगवानको अपने-जैसा बना डाला है। इस घमडसे मनुष्य-जाति दु खो और कठिनाइयोके समुद्रमे जा पडी है। भगवान सबसे बडा रसायन-शास्त्री है। वह जहा मौजूद रहता है, वहा लोहा और कचरा भी खरा सोना बन जाता है। उसी तरह सारी बुराई भलाईमे बदल जाती है।

फिर, भगवान है, लेकिन हमारी तरह नही। उसके प्राणी मरनेके लिए ही जीते है। लेकिन भगवान तो खुद जीवन है। इसलिए भलाई, अपने हर मानीमे, भगवानका गुण नही है। भलाई भगवान ही है। भगवानसे अलग जिस भलाईकी कल्पना की जाती है, वह बेजान चीज है और वह तभी-तक टिकती है जबतक उससे हमे फायदा पहुचता है। यही बात सारे सदाचारोके बारेमे भी सच है। अगर उन्हे हमारे जीवनमे जिदा रहना है तो हमे यह सोचकर अपनेमे उन्हे बढाना होगा कि भगवानसे उनका सबध है। वे भगवानके दिए हुए है। हम भले बनना चाहते है, क्योकि हम भगवानको पाना और उसमे मिल जाना चाहते है।

दुनियाके सारे निर्जीव नैतिक सिद्धात बेकार है, क्योकि भगवानसे अलग उनकी कोई हस्ती नही है—वे बेजान है। भगवानके प्रसादके रूपमे वे जानदार बनकर आते है। वे हमारे जीवनके अग बन जाते है और हमे ऊचा उठाते है। इसके खिलाफ, भलाईके बिना भगवान भी बेजान है। हम अपनी झूठी कल्पनाओमे ही उसे जिदा बनाते है—उसमे प्राण फूकनेकी कोशिश करते है।

कलकत्ता, १७–८–'४७

: १३ :

गायको कैसे बचाया जाय ?

हिंदू-धर्ममे और हिंदुस्तानी जीवनकी आर्थिक व्यवस्थामे गायकी क्या जगह है, इसके बारेमे लोग बहुत ही कम जानते है। हिंदुस्तान विदेशी हुकूमतसे आजाद तो हो गया, लेकिन साथ ही देशकी सारी पार्टियोकी एक रायसे उसके दो टुकडे भी हो गए है। इससे आम लोगोमे ऐसा विश्वास पैदा हो गया है कि वे एक हिस्सेको हिंदू हिंदुस्तान और दूसरेको मुस्लिम हिंदुस्तान कहने लगे है। इस विश्वासका समर्थन नही किया जा सकता। फिर भी दूसरे सारे झूठे विश्वासोकी तरह हिंदू हिंदुस्तान और मुस्लिम हिंदुस्तानका यह विश्वास भी बडी कठिनाईसे दूर होगा। सच बात तो यह है कि जो कोई अपने आपको इस देशकी सतान कहते है और है, वे सब हिंदुस्तानी

सघ और पाकिस्तानके एक-से नागरिक है, भले ही वे किसी भी धर्म या रगके हो।

फिर भी, प्रभावशाली हिंदू बहुत बडी तादादमे यह झूठा विश्वास करने लगे है कि हिंदुस्तानी सघ हिंदुओका है और इसलिए उन्हे कानूनके जरिये अपने इस विश्वासको गैर-हिंदुओसे भी जबरन मनवाना चाहिए। इसलिए यूनियनमे गायोकी हत्याको रोकनेका कानून बनवानेके लिए सारे देशमे जोशकी एक लहर-सी फैल रही है।

ऐसी हालतमे—जिसकी नीव मेरी रायमे अज्ञान है—हिंदुस्तानमे दूसरो-जैसा ही गायका भक्त और समझदार प्रेमी होनेका दावा करते हुए मुझे अच्छे-से-अच्छे ढगसे लोगोके इस अज्ञानको दूर करनेकी कोशिश करनी चाहिए।

सबसे पहले हम यह समझ ले कि धार्मिक मानोमे गायकी पूजा बडे पैमानेपर सिर्फ गुजरात, मारवाड, युक्तप्रात और बिहारमे ही होती है। गुजराती और मारवाडी लोग साहसी व्यापारी होते है। इसलिए वे इस बारेमे बडी-से-बडी आवाज उठानेमे कामयाब हुए है। लेकिन गो-हत्याके खिलाफ आवाज उठानेके साथ-ही-साथ वे अपनी व्यापारी बुद्धिको हिंदुस्तानके पशु-धनकी रक्षाके बडे मुश्किल सवालको हल करनेमे नही लगा रहे है।

अपने धर्मके आचार-विचारको कानूनके जरिये दूसरे धर्मके लोगोपर लादना बिलकुल गलत चीज है।

अगर गो-रक्षाके सवालको सिर्फ आर्थिक आवश्यकताकी निगाहसे ही देखा जाय तो वह बडी आसानीसे हल किया जा

सकता है, लेकिन शर्त यही है कि उसपर सिर्फ आर्थिक आधारसे ही विचार किया जाय। उस हालतमे दूध न देनेवाले सारे मवेशी, अपने पालनेके खर्चसे भी कम दूध देनेवाली गाये, और बूढे व बेकार जानवर बिना किसी हिचकिचाहटके मार डाले जाने चाहिए। इस बेरहम आर्थिक व्यवस्थाकी हिंदुस्तानमे कोई जगह नही है, हालाकि आपसी विरोधवाले मतोके इस देशके लोग कई कठोर काम करनेके अपराधी हो सकते है और सचमुच है।

अब सवाल यह है कि जब गाय अपने पालन-पोषणके खर्चसे भी कम दूध देने लगती है या दूसरी तरहसे नुकसान पहुचानेवाला बोझ बन जाती है तब बिना मारे उसे कैसे बचाया जा सकता है? इस सवालका जवाब थोडेमे इस तरह दिया जा सकता है।

१ हिंदू गाय और उसकी सतानकी तरफ अपना फर्ज पूरा करके उसे बचा सकते है। अगर वे ऐसा करे, तो हमारे जानवर हिंदुस्तान और दुनियाके गौरव बन सकते है। आज इससे बिलकुल उलटा हो रहा है।

२ जानवरोके पालन-पोषणका विज्ञान सीखकर गायकी रक्षा की जा सकती है। आज तो इस काममे पूरी अधाधुधी चलती है।

३ हिंदुस्तानमे आज जिस बेरहमी तरीकेसे बैलोको बधिया बनाया जाता है, उसकी जगह पश्चिमके हमदर्दी-भरे और नरम तरीके काममे लाकर इन्हे बचाया जा सकता है।

४ हिदुस्तानके सारे पिजरापोलोका पूरा-पूरा सुधार किया जाना चाहिए। आज तो हर जगह पिजरापोलका इतजाम ऐसे लोग करते है जिनके पास न कोई योजना होती है और न वे अपने कामकी जानकारी ही रखते है।

५ जब ये महत्त्वके काम कर लिए जायगे तो मुसलमान खुद, दूसरे किसी कारणसे नही तो अपने हिंदू भाइयोके खातिर ही, मास या दूसरे मतलबके लिए गायको न मारनेकी जरूरत समझ लेगे।

पढ़नेवाले यह देखेगे कि ऊपर बताई हुई जरूरतोके पीछे एक खास चीज है। वह है अहिसा, जिसे दूसरे शब्दोमे प्राणी-मात्रपर दया कहा जाता है। अगर इस सबसे बड़े महत्त्वकी बातको समझ लिया जाय तो दूसरी सब बातें आसान बन जाती है। जहा अहिसा है, वहा अपार धीरज, भीतरी शाति, भले-बुरेका ज्ञान, आत्म-त्याग और सच्ची जानकारी भी है। गो-रक्षा कोई आसान काम नही है। उसके नामपर देशमे बहुत पैसा बरबाद किया जाता है। फिर भी अहिसाके न होनेसे हिंदू गायके रक्षक बननेके बजाय उसके नाश करनेवाले बन गए है। गो-रक्षाका काम हिदुस्तानसे विदेशी हुकूमतको हटानेके कामसे भी ज्यादा कठिन है।

कलकत्ता, २२–८–'४७

[नोट कहा जाता है कि औसतन हिदुस्तानकी गाय रोजाना २ पौडके करीब दूध देती है, जब कि न्यूजीलैडकी १४ पौड, इग्लैडकी १५ पौड और हालैडकी २० पौड दूध

देती है । जैसे-जैसे दूधकी पैदावार वढती है, वैसे-वैसे तदुरुस्तीके आकडे भी वढते है ।]
२३–८–'४७

: १४ :

क्या 'हरिजन'की जरूरत है ?

मुझे लगता है कि अव चूकि अग्रेजी हुकूमतसे हिंदुस्तानको आजादी मिल गई है, इसलिए 'हरिजन' अखवारोकी अब और ज्यादा जरूरत नही है । मेरे विचार जैसे है वैसे ही सदा रहेगे । आजाद हिंदुस्तानकी पुनर्रचनाकी योजनामे इस वातका ध्यान रखनेकी जरूरत है कि उसके देहात आजकी तरह उसके शहरोपर निर्भर न रहे, वल्कि इससे उलटे, शहरोका वना रहना सिर्फ देहातोके लिए और देहातोको फायदा पहुचानेके लिए ही हो । इसलिए केद्रकी गौरवभरी जगहपर चरखेको रखकर उसके आसपास देहातोको जीवन देनेवाले गृह-उद्योगो-को सजाया जाय । मगर जान पडता है कि इस चीजको सवसे पीछे ढकेला जा रहा है । यही वात दूसरी कई चीजोके वारेमे कही जा सकती है, जिनके मै मोहक चित्र खीचा करता था । मै और ज्यादा दिनोतक ऐसा करनेका साहस नही कर सकता । पहलेसे ज्यादा वडे तूफानमे आज मेरी नाव चल रही है । यह भी कहा जा सकता है कि मेरे ठहरनेकी कोई एक निश्चित जगह नही है । 'हरिजन'के पृष्ठ ज्यादातर

मेरे प्रार्थना-सभाके बादके भाषणोसे ही भरे रहते है। मेरे खुदके लिखे हुए मजमूनका औसत तो उसमे हर हफ्ते सिर्फ डेढ कॉलम ही होता है। यह जरा भी सतोषकी बात नही है। इसलिए मै चाहता हू कि 'हरिजन' साप्ताहिकोके पाठक मुझे अपनी साफ राय दे कि वे अपनी राजनैतिक और आध्यात्मिक भूख बुझानेके लिए सचमुच अपने 'हरिजन' साप्ताहिककी जरूरत महसूस करते है या नही। पाठक जिस किसी भाषाके 'हरिजन' साप्ताहिकके ग्राहक हो, उसी भाषामे सपादक, 'हरिजन' अहमदाबादके नामपर अपने जवाब भेजे और अगर वे चाहते है कि 'हरिजन' निकलता रहे तो वे सक्षेपमे मुझे यह बतला दे कि वे ऐसा क्यो चाहते है। जिस लिफाफेमे वे अपना जवाब भरकर भेजे, उसकी बाईं ओरके ऊपरके कोनेमें यह जरूर लिखे—'हरिजनके बारेमे।'

कलकत्ता, २४–८–'४७

: १५ :

विद्यार्थियोंके बारेमें

एक भाई लिखते है :

"विद्यार्थियो और उनके संघोके बारेमें आपने 'हरिजन' में इस समय बड़े मौकेकी चर्चा शुरू की है। स्वर्गीय एच० जी० वेल्सने एक जगह विद्यार्थियोके लिए 'अंडरग्रेज्युएट इंटेलिजेंस' शब्दका इस्तेमाल किया है। कच्ची समझवाले विद्यार्थियोका बेजा फायदा उठानेका काम

इस नए जमानेमें भयकर नुकसान करता है । वह विद्यार्थियोको पढाईसे दूर हटाता है और आजकी विषम परिस्थितिमें अपने पैरो आप कुल्हाडी मारता है ।

"आपके जिस लेखका मैंने ऊपर जिक्र किया है, उसके बारेमें सवाल पूछा जा सकता है "क्या गाधीजीने ही पहले-पहल विद्यार्थियोको राजनीतिकी तरफ नहीं खींचा ? फिर आज वह ऐसा कैसे कहते हैं ?" मैं जानता हू कि यह सच नहीं है, लेकिन यह जरूरी है कि आप अपने विचारोको फिरसे जाचें ।

"दूसरी बात यह है कि विद्यार्थियोके सघ क्या करें ? इसे कुछ विस्तारसे आपको बताना होगा । देशमें उनका एक सघ किस उद्देश्यसे बने ? आज तो आप जानते है कि विद्यार्थी-सघ राजनैतिक जीवनमें पाव रखनेके साधन समझे जाते हैं । कुछ लोग उनसे यही बेजा फायदा उठाते है । सिर्फ विद्याके लिए ही सघ बनाया जाय तो उसके लिए क्या करना चाहिए, यह आप लिखें तो बडा लाभ हो ।

"गुजरातके लिए नई यूनिवर्सिटीका विचार करनेके लिए बम्बई-सरकारने एक कमेटी कायम की है । उसके बारेमें लोग आपके विचार जानना चाहते हैं । अब आपको इसके लिए भी समय निकालना होगा ।"

कच्ची बुद्धि कैसा नुकसान करती है यह तो मैंने इसी हफ्तेमे देख लिया । विद्यार्थियोकी एक खास सभामे मुझे यहाके वाइसचासलर ले गए थे । विद्यार्थियोने विना विचारे शहीदसाहबके बारेमे बदतमीजी दिखाई । बादमे वे ठीक रास्तेपर आए और पछताने लगे । और उन्होने यह बात कर दिखाई कि सच्चा रास्ता दिखानेवाला मिले तो वह उनकी कच्ची बुद्धिका अच्छा इस्तेमाल करके उसे कैसे पक्की

बना देता है। यह चीज इस अकमे[१] छपे मेरे प्रार्थनाके वादके भापणोसे साफ समझमे आ जायगी।

'हरिजनवधु'मे अग्रेजीसे गुजरातीमे तरजुमा किया गया होगा। मुझे आशा है कि यह तरजुमा बिलकुल ठीक होगा। अग्रेजी, मेरे हिदुस्तानीमे दिए गए भापणका तरजुमा है। असल हिदुस्तानी तो कौन भेज सकता है ? ऐसी सहूलियत मै अपने आप खो वैठा हू। प्यारेलालजी और सुगीलावहन ज्यादा उपयोगी सेवामे लगे हुए है। राजकुमारीकी सेवा और मदद तो मुझे महीनोसे नही मिल रही है। उनका उपयोग भी आज ज्यादा वडे काममे हो रहा है।

आखिरी सवाल मै पहले लेता हू .

विद्यार्थियोका एक ही सघ बने तो उसमेसे बडी भारी ताकत पैदा होगी और वह देशकी वहुत सेवा कर सकेगा। उसका ध्येय एक ही हो सकता है देशकी सेवा करना, पैसा कमाना नही। अगर विद्यार्थी ऐसा करेगे तो उनका ज्ञान खूब वढेगा। हलचलोमे सिर्फ वे ही लोग हिस्सा ले, जो पढाई खतम कर चुके है। पढते समय तो विद्यार्थियोंको अपना ज्ञान वढानेका काम ही करना चाहिए। आजकी शिक्षा देशके हितको नुकसान पहुचानेवाली है। यह दिखाना सभव है कि आजकी शिक्षासे देशको थोडा फायदा हुआ और हो रहा है, लेकिन मेरी नजरमे वह कुछ नही है। कोई उससे

---

[१] ७ सितम्बर १९४७ के 'हरिजनवधु'में प्रकाशित २९ अगस्त १९४७ को कलकत्तेमें दिया गया भाषण।

धोखा न खाय। उसके फायदेमद होनेकी सबसे बडी कसौटी है कि आज खाने और कपडेकी जो भारी तगी है उसमे—खूराक और कपडेकी पैदावारमे—क्या यह शिक्षा कोई मदद पहुचाती है? आजकी नादानीभरी हत्या और खूरेजीको दबानेमे वह क्या हिस्सा लेती है? हर देशकी पूरी शिक्षा उसे तरक्की-की तरफ ले जानेवाली होनी चाहिए। इससे कौन इन्कार करेगा कि हिंदुस्तानमे दी जानेवाली शिक्षासे यह उद्देश्य पूरा नही होता? इसलिए विद्यार्थियोके सघका एक ध्येय यह होना चाहिए कि वे आजकी शिक्षाके दोष खोजे और अपनेमे पाए जानेवाले उन दोषोको दूर करे। अपने सही कामसे वे शिक्षाके महकमोको अपने विचारका बना सकेगे। अगर विद्यार्थी ऐसा करेगे तो वे राजनैतिक दलबदीमे नही फँसेगे। सघकी नई योजनामे रचनात्मक कामको कुदरती तौर-पर उचित जगह मिलेगी। इससे देशकी राजनीति शुद्ध बनी रहेगी।

अब मै पहला सवाल लेता हू

आजादीकी लडाईके समय मैने विद्यार्थियोकी शिक्षाके बारेमे क्या कहा था वह भुला दिया गया मालूम होता है। स्कूलो और कालेजोमे रहकर मैने विद्यार्थियोको राजनीतिमें पडनेकी बात नही सिखाई थी। मैने तो उन्हे अहिंसक असहयोग सिखाया था, स्कूल और कालेज खाली करके देश-सेवाके काममे लगना सिखाया था। नए विद्यापीठ और नए कालेज या स्कूल खोलनेकी कोशिश की थी। बदकिस्मतीसे चालू शिक्षाका जाल इतना मजबूत था कि उसमेसे थोडे ही लोग

वाहर निकल पाए थे। इसलिए यह कहना ठीक नही कि पहले मैंने विद्यार्थियोको राजनीतिमे खीचा था। इसके सिवा जव मै २० सालतक दक्षिण अफ्रीकामे रहकर १९१५मे वापिस आया तब स्कूलो और कालेजोमे पढते हुए भी, विद्यार्थी देशकी राजनीतिकी तरफ खिच चुके थे। उस समय शायद इसके सिवा दूसरा कुछ करना असभव था। विदेशी शासकोने देशकी सारी रचना ऐसी वना रखी थी कि देगको गुलामीके फदेसे छुडाने लायक राजनीतिमे कोई पड ही नही सकता था। उन्होने गिक्षाका सारा काम अपने हाथमे रखकर करोडोको अज्ञानके अधेरेमे पडे रहने दिया और विदेशी हुकूमतको मजवूत वनाया। इससे विदेगी हुकूमतके कायम किए हुए स्कूलो और कालेजोके सिवा दूसरा कोई साधन देगभक्त कार्यकर्ताओके सामने रह नही गया था। इस साधनसे कहा-तक वेजा फायदा उठाया गया है, इसकी यहा जाच करनेकी जरूरत नही।

कलकत्ता, ३०–८–'४७

: १६ :

अहिंसा सफल या असफल ?

सवाल—जव आप नोआखालीमें थे तव अक्सर कहा करते थे कि अगर मुझे अपने मिशनमें कामयावी न मिली तो वह मेरी अपनी अहिंसाकी नाकामयावी—होगी, खुद अहिंसाकी नही। यहां कलकत्तेमें जो सफलता

मिली है उसे देखते हुए क्या आप सोचते है कि आपकी अहिंसा कामयाब हुई है या कामयाबीके रास्तेपर है ?

जवाब—अहिसाके बारेमे मेरे विचारोका यह सही बयान है। अहिसा हमेशा अचूक होती है। इसलिए जब वह नाकाम हुई दिखाई पडे तो वह नाकामी, अहिसाका उपयोग करनेवालेकी अयोग्यताकी वजहसे है। मैने कभी यह महसूस नही किया कि नोआखालीमे मेरी अहिसा असफल रही है, न यही कहा जा सकता कि वह सफल हुई है। अभी तो उसकी जाच हो रही है। और जब मै अपनी अहिसाके बारेमे बोलता हू तो मै उसे अपने तक ही सीमित नही मानना। उसमे नोआखालीमे मेरे साथ काम करनेवाले भाई भी शामिल है। इसलिए वहा मिलनेवाली सफलता या असफलताका श्रेय मेरे और मेरे साथियोके सम्मिलित कामको मिलेगा।

नोआखालीके बारेमे मैने जो कुछ कहा है, वह कलकत्तेपर भी लागू होता है। अभी यह नही कहा जा सकता कि इस बडे शहरमे साम्प्रदायिक सवालको हल करनेमे जो अहिसाका उपयोग किया गया है, उसकी सफलतामे कोई सदेह नही है। जैसा कि मै पहले ही कह चुका हू, कलकत्तेके दो फिरकोमे दोस्ती कायम होनेकी बातको चमत्कार मानना गलती है। इसके लिए परिस्थिति तो पहलेसे ही तैयार थी। इतनेमे शहीदसाहब और मै इसका श्रेय लेनेके लिए सामने आ गए। जो हो, अहिसाके प्रयोगकी सफलता या असफलताके बारेमे अभीसे कोई बात कहना जल्दबाजी होगी। सबसे पहली

दात तो यह है कि हम दोनों साथियोके विचार एक-से हो और हम दोनो अहिसामे विश्वास करे। इसका पूरा भरोसा हो जानेपर मै कहूगा कि अगर हम अहिसाके विज्ञानको और उसके प्रयोगको जानते है तो हम जरूर कामयाव होगे।

कलकत्ता, ३१-८-'४७

: १७ :

कलकत्तेका दंगा

आपको यह रिपोर्ट देते हुए मुझे अफसोस होता है कि पिछली रातको कुछ नौजवान मेरे पास एक आदमीको लाए, जिसे पट्टी वधी हुई थी। मुझसे कहा गया कि उस आदमीपर किसी मुसलमानने हमला किया है। प्रधान-मत्रीने उसकी जाच कराई तो पता चला कि उसके शरीरपर चाकूके कोई निशान नही थे, जैसा कि उन लोगोने वतलाया था। यहापर खास वात यह नही है कि उस आदमीको लगी हुई चोट कितनी भयकर थी। जिस वातपर मै जोर देना चाहता हू, वह यह है कि इन नौजवानोने खुद ही न्यायाधीश और खुद ही सजा देनेवाले वननेकी कोशिश की।

यह कलकत्ता-समयके अनुसार १० वजे रातकी वात है। वे लोग वडे जोर-जोरसे चिल्लाने लगे। मेरी नीदमे विघ्न पड चुका था, मगर क्या हो रहा है इस वातको न जानते हुए मैने चुपचाप पडे रहनेकी कोशिश की। मैने खिडकीके

काचोके टूटनेकी आवाज सुनी । मेरे दोनो तरफ दो वहुत वहादुर लडकिया लेटी हुई थी । वे सोई नही थी । मेरे विना जाने—क्योकि मेरी आखे वद थी—वे उस थोडी-सी भीडमे गई और उसे शात करनेकी उन्होने कोशिश की । भगवानको धन्यवाद है कि उस भीडने उन्हे कोई नुकसान नही पहुचाया । उस परिवारकी वूढी मुस्लिम महिला, जिसे सव वडे प्रेमसे 'वी अम्मा' कहते थे, और एक मुस्लिम नोजवान, शायद खतरेसे मेरी हिफाजत करनेके लिए, मेरे विस्तरके पास आकर खडे हो गए । भीडका शोर-गुल वढता ही गया । कुछ लोग वीचके वडे कमरेमे घुस आए और कई दरवाजोको धक्के मारकर खोलने लगे । मैने महसूस किया कि मुझे उठकर गुस्सेसे भरी उस भीडके सामने जरूर जाना चाहिए । मै उठा और एक दरवाजेकी देहलीजपर जाकर खडा हो गया । दोस्तोने मुझे घेर लिया और आगे जानेसे मुझे रोकने लगे । मै अपने मौन-व्रतको ऐसे मौकोपर तोड देता हू । इसलिए मैने अपना मौन तोडकर उन गुस्सेसे भरे हुए नौजवानोसे शात होनेकी अपील करना शुरू किया । मैने कनु गाधीकी वगाली पत्नी आभासे कहा कि वह मेरे कुछ शब्दोका वगालीमे तरजुमा कर दे । वह भी किया गया, मगर कोई फायदा नही हुआ । मानो उन लोगोने समझदारीकी कोई भी वात सुननेके लिए अपने कान वद कर लिए थे ।

मैने और कुछ न करके हिदू ढगसे अपने दोनो हाथ जोडे । और ज्यादा खिडकियोके काच टूटनेकी आवाज आने लगी । उस भीडमे जो दोस्ताना रुखवाले लोग थे, उन्होने भीडको

शात करनेकी कोशिश की। पुलिस अफसर भी वहा मौजूद थे। उनके लिए यह तारीफकी बात है कि उन्होने अपनी सत्ताका उपयोग करनेकी कोशिश नही की। उन्होने भी भीडसे शात होनेकी अपील करते हुए अपने हाथ जोडे। मुझपर लाठीका एक वार हुआ, जो मुझे और मेरे आसपास खडे हुए लोगोको लगते-लगते बचा। मुझे निशाना बनाकर फेकी गई एक ईट मेरे पास खडे हुए एक मुसलमान दोस्तको लगी। वे दो लडकिया मुझे जरा-सी देरके लिए भी नही छोडना चाहती थी और आखिरतक वे मेरे पास बनी रही। इतनेमे पुलिस सुपरिटेडेट और उनके अफसर भीतर आए। उन्होने भी जोर-जबरदस्ती नही की। उन्होने मुझसे दरख्वास्त की कि मै भीतर चला जाऊ, तब उन्हे उन नौजवानोको शात करनेका मौका मिलेगा। कुछ देर बाद भीड वहासे हट गई।

अहातेके फाटकके बाहर जो कुछ हुआ, उसके बारेमे मै सिर्फ इतना ही जानता हू कि भीडको हटानेके लिए पुलिसको अश्रुगैसका इस्तेमाल करना पडा था। इसी बीच डा० पी० सी० घोष, आनदबाबू और डा० नृपेन भीतर आए और मुझसे कुछ चर्चा करनेके बाद चले गए। दूसरे दिन मेरा नोआखाली जानेका इरादा था, इसलिए खुशकिस्मतीसे शहीदसाहब उसकी तैयारी करनेके लिए उस दिन अपने घर चले गए थे। ऊपर दी हुई बेहूदा घटनाका खयाल करके मै कलकत्ता छोडकर नोआखाली जानेकी बात सोच भी न सका, क्योकि वह घटना कलकत्ताको किस हालतमे पहुचा देगी यह कोई नही कह सकता था।

इस घटनाका मवक क्या है ? मै साफ तौरपर समझ गया हू कि अगर हिदुस्तानको महगे दामो हासिल की हुई अपनी आजादीको टिकाए रखना है तो सव मर्दो और औरतोको मारपीट और जोर-जवरदस्तीके कानूनको पूरी तरह भूल जाना होगा। जो कुछ लोगोने करना चाहा वह तो इस जगली कानूनकी भद्दी नकलमात्र है। अगर मुसलमानोने वुरा वर्ताव किया था और इसकी शिकायत करनेवाले लोग मत्रियोके पास नही जाना चाहते थे तो वे मेरे या मेरे दोस्त शहीद-साहवके पास आ सकते थे। यही वात उन मुसलमानोपर भी लागू होती है जिन्हे कोई शिकायत करनी है। अगर सभ्य समाजके वुनियादी नियमोपर अमल नही किया जाता तो कल-कत्ता या दूसरी किसी भी जगह शाति वनाए रखनेका कोई रास्ता नही है। जनता, पजावमे या हिदुस्तानके वाहर होने-वाले वहशियाना कामोपर ध्यान न दे। यह सुनहला नियम सवपर एक ही रूपमे लागू होता है कि कोई शख्स कानूनको कभी भी अपने हाथमे न ले।

मेरे सेक्रेटरी देवप्रकाशने, जो पटनामे है, तारके जरिये मुझे यह खवर दी है—"पजावकी घटनाओसे जनतामे उत्तेजना है। अखवारोको और जनताको उनके कर्त्तव्यकी याद दिलाने-वाला आपका वयान जरूरी मालूम होता है।" श्रीदेवप्रकाश कभी विना कारण उत्तेजित नही होते। अखवारोमे जरूर कुछ गैर-जिम्मेदार शब्द निकले होगे। इस समय जव कि हम वारूदखानेपर वैठे हुए है, चौथा स्टेट—प्रेस—को वहुत ज्यादा समझदार और मौन होनेकी जरूरत है। इस समय

अविवेक चिनगारीका काम करेगा। मुझे उम्मीद है कि हर सपादक और सवाददाता पूरी तरह अपने फर्जको समझेगा।

मुझे एक वात यहा जरूर कह देनी चाहिए। पजावसे मुझे एक जरूरी सदेशा मिला है कि मै जल्दी-से-जल्दी वहा पहुचू। मै कलकत्तासे होनेवाली अशातिके वारेमे सव तरहकी अफवाहे सुनता हू। मुझे उम्मीद है कि अगर वे विलकुल बेवुनियाद नही है तो वढा-चढाकर जरूर कही गई है। कलकत्ताके लोगोको फिरसे मुझे विश्वास दिलाना होगा कि यहा कोई गडवडी नही होगी और जो शाति एक वार कायम हो चुकी है, वह भग नही होगी।

पिछली १४ अगस्तसे जव यहा शाति नजर आई तभीसे मै कहता आया हू कि यह सिर्फ थोडे ही दिनोकी शाति हो सकती है। इस शातिके कायम होनेका कारण कोई चमत्कार नही था। क्या मेरी आशका सच्च सावित होगी और कलकत्तामे फिरसे वहशियाना वारदाते होने लगेगी? हम उम्मीद करे कि ऐसा नही होगा। हम प्रभुसे प्रार्थना करे कि वह हमारे दिलोको छू दे, ताकि हम अपने पागलपनको फिरसे न दोहरावे।

ऊपरकी वाते लिखनेके वादसे, यानी करीव चार वजेके वादसे शहरके अलग-अलग हिस्सोमे होनेवाली घटनाओका पूरा-पूरा हाल मेरे पास आ रहा है। कुछ जगहे, जो कलतक सुरक्षित थी, अचानक खतरनाक वन गई है। कई लोग मारे गए है। मैने दो वहुत गरीव मुसलमानोकी लाशे देखी। कुछ फटेहाल मुसलमानोको किसी हिफाजतकी जगहकी तरफ

गाडियोमे हटाए जाते हुए देखा। मै अच्छी तरह जानता हू कि पिछली रातकी जिन घटनाओका इतने विस्तारसे ऊपर बयान किया गया है, वे इस आगके सामने बहुत मामूली है। इस खुली आगमे घुसकर मै जो कुछ करू, उसमेसे एक भी ऐसी बात मुझे नजर नही आती, जो इस आगको काबूमे कर सके।

जो मित्र मुझे शामको मिले थे उन्हे मैने बतला दिया है कि इस समय उनका फर्ज क्या है, दगेको रोकनेके लिए मुझे क्या करना चाहिए। सिक्खो और हिंदुओको भूलना नही चाहिए कि इन कुछ दिनोमे पूरबी पजाबने क्या किया है। अब पश्चिमी पजाबके मुसलमानोने अपने पागलपनभरे काम शुरू किए है। कहा जाता है कि पजाबकी वारदातोसे सिक्ख और हिंदू गुस्सा हो उठे है।

मै ऊपर बतला चुका हू कि पजाबसे मुझे जरूरी बुलावा आया है, मगर जब कलकत्तामे दगेकी आग फिरसे भडकी हुई जान पडती है तब मै कौन-सा मुह लेकर पजाब जा सकता हू? अभीतक जो हथियार मेरे लिए अचूक साबित हुआ है, वह है उपवास। जोर-जोरसे चिल्लाती हुई भीडके सामने जाकर खडे हो जाना हमेशा काम नही देता। पिछली रातको उससे सचमुच कोई फायदा नही हुआ। जो काम मेरे मुहसे निकले हुए शब्द नही कर सकते, उसे शायद मेरा उपवास कर दे। अगर कलकत्ताके सारे दगाइयोके दिलोपर उसका असर हो जाय तो पजाबके दगाइयोके दिलोको भी वह छू सकता है। इसलिए आज रातको सवा आठ बजेसे मै अपना उपवास शुरू करता हू। वह सिर्फ उसी हालतमे और तभी खतम होगा

जब कलकत्ताके लोग अपना पागलपन छोड देगे । उपवासके दरमियान जब मेरी पानी पीनेकी इच्छा होगी तब मै हमेशाकी तरह नमक और सोडा-बाइकार्ब मिला हुआ पानी लूगा ।

अगर कलकत्ताके लोग चाहते है कि मै पजाब जाकर वहाके लोगोकी मदद करू तो उन्हे जितनी हो सके उतनी जल्दी मेरा उपवास तुडवाना चाहिए ।

कलकत्ता, १–९–'४७

: १८ :

सही या गलत ?

गुजरातीमे मुझे लिखे गए एक खतका साराश नीचे देता हू

"१५ सितबर १९२७ के 'यग इडिया'मे आपका मद्रासमें दिया हुआ जो भाषण छपा है उसमें आपने कहा है कि जो धर्म, शुद्ध अर्थके खिलाफ हो, वह धर्म नहीं है; और जो अर्थ धर्मके खिलाफ हो, वह शुद्ध नहीं है, इसलिए वह छोड़ देने लायक है।

"मै तो जानता ही हूं कि एक अरसेसे आपका यह मत रहा है। मगर इसे सबने माना कब है ? इसलिए मुझे लगता है कि आज धर्मके नामपर होनेवाली खूरेजीको शांत करनेमें आप जो अपना सारा वक़्त और ताकत खर्च कर रहे है, यह ठीक नही है। आपका रचनात्मक कार्यक्रम आज कहां चल रहा है ? कांग्रेसके हाथमें आज हिंदुस्तानके बड़े हिस्सेकी बागडोर है। अब तो आजादी मिल गई। अग्रेज चले गए। तब फिर

आप अपने रचनात्मक कामको आगे बढाकर यह साबित करनेमें पूरा वक्त क्यो नहीं लगाते कि धर्म और अर्थ दो विरोधी चीजें नहीं है ? आजकल होनेवाले आर्थिक अन्यायके खिलाफ आप कुछ भी नहीं लिखते, इससे भले लोग यही मानते है कि काग्रेस-सरकार जो कुछ करती है, उसमें आपका आशीर्वाद होता ही है। लेकिन मै तो यह मानता हू कि आप ही रचनात्मक कामके जन्मदाता होकर आज उसे दफना रहे है। आज खादी या ग्रामोद्योगके अर्थशास्त्रके आधारपर स्वावलबनसे चलनेवाली एक भी सस्था कहीं देखनेमें नहीं आती।"

ऊपर की बात आवेशमे लिखी गई है। इससे लिखनेवाले भाई आधी सच बात ही कह सके है। खास बात यह है कि हिदू-मुस्लिम-एकताकी बात मेरे मनमे तबसे समाई हुई है, जब कि खादी और उसके आसपासके ग्राम-उद्योगोकी बात मेरे सपनेमे भी नही थी।

जब मै बारह वर्षकी उम्रमे एक मामूली विद्यार्थीकी तरह पहली अग्रेजी क्लासमे भर्ती हुआ था, तभीसे मै अपने मनमें यह मानने लगा था कि हिदू, मुसलमान, पारसी सब एक ही हिदुस्तानकी सतान है और इसलिए उनमे आपसमे भाईचारा होना चाहिए। यह सन् १८८५ से पहलेकी बात है, जब कि काग्रेसका जन्म भी नही हुआ था। इसके सिवा यह एकता कायम करनेका काम रचनात्मक कामका एक ऐसा अग है, जिसे अलग नही किया जा सकता। इसके लिए मैने बहुतसे खतरे मोल लिए है और मै मानता हू कि अगर यह न हो तो दूसरे रचनात्मक काम चल ही न सके। कम-से-कम मेरे हाथो तो चल ही न सके। मुझसे यह नही हो सकता। खत लिखनेवाले भाईकी दलीलके मुताबिक तो मुझे नोआखाली नही जाना चाहिए था, बिहार

नही दौडना था। यानी जो काम मै जानता हू, जिसे मैंने बरसोसे किया है, उस कामको कसौटीके वक्त भूल जाऊ। यह कैसे हो सकता है? इसे भूलकर मै दूसरे रचनात्मक कामके पीछे दौड़ू तो यह अपना धर्म छोडना होगा और इससे फायदा तो कुछ होनेवाला है नही।

जिन काग्रेस-सेवकोके हाथमे आज बागडोर है, वे मेरे साथी है। यह भी कहा जा सकता है कि इन सबने मेरे साथ ही काग्रेसमे तरक्की की और ऊचे उठे। अगर मै अपना अर्थशास्त्र इनके गले न उतार सका तो फिर किसे समझा सकूगा? शासनकी बागडोर हाथमे आनेके बाद उनकी बुद्धि कबूल नही करती कि वे जनतासे खादीशास्त्र मजूर करा सकेगे या ग्राम-उद्योगोके मारफत गावोको नई जिदगी दे सकेगे। खत लिखनेवाले भाईका सुझाव है कि मुझे श्री जाजूजी[1]को और श्रीकुमारप्पा[2]-को हिंदुस्तानकी बागडोर लेनेके लिए तैयार करना चाहिए। यह कैसा भ्रम है? इस तरह किसीको तैयार करनेवाला मै कौन होता हू? पचायत-राज एक हाथसे नही चल सकता। जिनके हाथोमे शासन है, उनकी जगह लेनेवाला कोई ज्यादा बलवान और विवेकशील आदमी हो, तो आज उन्हे हटना पडे। जहातक मै इन लोगोको जानता हू, वहातक कह सकता हू कि ये लोग हुकूमतके भूखे नही है। इसलिए जब कोई ज्यादा लायक आदमी पैदा होगा तब उसे पहचाननेमे इन्हे देर नही

---

[1]श्री कृष्णदास जाजू।

[2]श्री जे० सी० कुमारप्पा।

लगेगी और ये लोग खुशीसे उसके हाथमे हुकूमत सौपकर अपना जीवन सफल मानेगे ।

ऐसी भूल कोई न करे कि मै यह जगह ले सकता हू । अगर मै प्रधान बननेके लिए तैयार होऊ तो ये लोग मेरा स्वागत करेगे, मगर मुझमे राम नही है । मै खुद रामका पुजारी हू, उसका भक्त हू । मगर रामके सब भक्त, राम थोडे ही बन सकते है ? हमे तो राम रखे, उसी तरह रहना चाहिए ।

इसके सिवा, यह बात ध्यान देने लायक है कि जो काम मै अपने तरीकेसे कर रहा हू, वही काम उनके अपने तरीकेसे करनेमे ही उनका सारा वक्त जाता है, क्योकि वे समझते है कि जबतक साप्रदायिक सवाल नही सुलझता तबतक हिदुस्तानमे शाति नही हो सकती । और जबतक शाति नही होगी तबतक प्रजाके दूसरे सारे काम यो ही पडे रहेगे ।

अतमे मुझे खत लिखनेवाले भाईने अपने जैसे विचार प्रकट किए है, वैसे विचार रखनेवालोको समझना चाहिए कि अगर रचनात्मक कार्यक्रमपर करोडो इन्सानोसे अमल कराना हो तो इसके लिए हजारो कार्यकर्ताओकी जरूरत है, भले ही यह योजना एक इन्सानके दिमागसे निकली हो । लोगोके सामने इसे रखे बरसो बीत गए है । अखिल भारत-चरखा-सघ, ग्राम-उद्योग-सघ, गो-सेवा-सघ, हिदुस्तानी प्रचार-सघ, आदिवासी-सेवा-सघ, हरिजन-सेवक-सघ वगैरह पैदा हुए । वे आज जिदा है और अपनी ताकतके अनुसार काम कर रहे है । ये सब धर्म और अर्थका समीकरण समझ चुके है । साप्रदायिक मेल-मिलापका काम करते हुए मै ऊपरके सारे कामोमे पहले-जैसा ही रस ले

रहा हू, शक्तिके अनुसार उसमे अपना सिर भी खपा रहा हू। अब इससे ज्यादा मुझसे उम्मीद भी न करनी चाहिए। आज जिसे मै अपना फर्ज मान बैठा हू, लालचमे पडकर उससे मुझे डिगना नही चाहिए। ऊपरकी चेतावनी देनेके बदले, मुझे सावधान करनेके वदले, यह जरूरी है कि खत लिखनेवाले भाई जैसे सभी लोग सावधान होकर अपने काममे लग जाय।

मैने सैकडो बार कहा है कि हमारे हाथमे हुकूमतका होना जरूरी नही है। जिन्हे हम हाकिम बनाते है, उन्हे सावधान रखना चाहिए। नेता तो गिनतीके होगे, मगर जनता अपनी ताकत और अपने धर्मको समझ ले और उसके अनुसार काम करे, तो सब कुछ अपने आप ठीक हो सकता है। हमे आजादी भोगते अभी तो सिर्फ अठारह दिन ही हुए है, इतनेमे यह उम्मीद कैसे की जा सकती है कि सारा काम अपने आप हो जाय ? जिनके हाथोमे जनताने हुकूमत सौंपी है, वे भी नई परिस्थितिके लिए पहलेसे तैयार नही है, बल्कि तैयार हो रहे है।

कलकत्ता, ४–९–'४७

: १६ :

बिहार बिहारियोंके लिए और हिंदुस्तान ?

विहार, सचमुच विहारियोके लिए है, लेकिन वह हिंदुस्तानके लिए भी है। जो वात विहारके वारेमे सच है वही यूनियनके दूसरे सब सूवोके वारेमे भी सच है। किसी भी

हिंदुस्तानीके साथ बिहारमे परदेशीकी तरह बर्ताव नही किया जा सकता, जैसा कि शायद उसके साथ आजके पाकिस्तानमें या एक पाकिस्तानीके साथ हिंदुस्तानमे किया जा सकता है। अगर हम मुसीबतो और आपसी जलनसे बचना चाहते है तो हमे इस फर्कका ध्यान रखना चाहिए।

इसलिये हालाकि यूनियनके हर हिंदुस्तानीको बिहारमे बसनेका हक है, फिर भी उसे बिहारियोको उखाडने या उनके हक छीननेके लिए ऐसा नही करना चाहिए। अगर इस शर्तपर अच्छी तरह अमल नही किया गया तो सभव है कि बिहारमे गैर-बिहारी हिंदुस्तानियोकी ऐसी बाढ आ जाय कि बिहारियोको बडी तादादमे अपने सूबेसे बाहर निकलना पडे। इस तरह हम इस नतीजेपर पहुचनेके लिए मजबूर हो जाते है कि जो गैर-बिहारी हिंदुस्तानी, बिहारमे जाकर बसता है, उसे बिहारकी सेवाके लिए ही ऐसा करना चाहिए, न कि हमारे पुराने मालिकोकी तरह उसे चूसने और लूटनेके लिए।

इस विषयकी इस तरह जाच करनेमे हमारे सामने जमीदारो और रैयतका सवाल खडा होता है। जब कोई गैर-बिहारी पैसा पैदा करनेके लिए बिहारमे जाकर बसता है तो बहुत सभव है कि वह जमीदारसे मिलकर रैयतको चूसनेके लिए ऐसा करे। लेकिन जमीदार सचमुच रैयतके लिए अपनी जमीदारीके ट्रस्टी बन जाय तो ऐसा अपवित्र गुट्ट कभी बन ही नही सकता। बिहारमे जमीदारीका कठिन सवाल अभी हल किया जानेको है। हम तो यह पसद करेगे कि बिहारके छोटे ओर बडे जमीदारो, उनकी रैयत और सरकारके बीच कोई

ऐसा उचित निष्पक्ष और सतोषके लायक समझौता हो, जिससे, कानून पास हो जानेपर ऐसा मौका न आए कि कोई उसपर अमल न करे, या जमीदारो या रैयतके साथ जबरदस्ती करनेकी जरूरत पडे। काश, सारे हिदुस्तानमे बिना खून बहाए और बिना जबर्दस्ती किए ये सारे फेरफार--जिनमेसे कुछ क्रातिकारी भी होने चाहिए--हो जाय! यह तो हुआ हिदुस्तानके दूसरे सूबोसे आकर बिहारमे बसनेवालोके लिए।

वहाकी नौकरियोका क्या हो? ऐसा लगता है कि अगर यूनियनके सारे सूबोको हर दिशामे एक-सी तरक्की करनी हो तो हर सूबेकी नौकरिया, पूरे हिदुस्तानकी तरक्कीके खयालसे ज्यादातर वहाके रहनेवालोको ही दी जानी चाहिए। अगर हिदुस्तानको दुनियाके सामने स्वाभिमानसे सिर ऊचा रखना है तो किसी सूबे और किसी जाति या तबकेको पिछडा हुआ नही रखा जा सकता। लेकिन अपने उन हथियारोके बलपर हिदुस्तान ऐसा नही कर सकता, जिनसे दुनिया ऊब उठी है। उसे अपने हर नागरिकके जीवनमे और हालमे ही मेरे द्वारा 'हरिजन' मे बताए गए समाजवादमे प्रकट होनेवाली अपनी स्वभावजन्य सस्कृतिके द्वारा ही चमकना चाहिए। इसका यह मतलब है कि अपनी योजनाओ या उसूलोको जनप्रिय बनानेके लिए किसी भी तरहकी ताकत या दबावको काममे न लिया जाय। जो चीज सचमुच जन-प्रिय है, उसे सबसे मनवानेके लिए जनताकी रायके सिवा दूसरी किसी ताकतकी शायद ही जरूरत हो। इसलिए बिहार, उडीसा और आसाममे कुछ लोगोद्वारा की जानेवाली हिसाके जो बुरे दृश्य देखे गए, वे

कभी नही दिखाई देने चाहिए थे। अगर कोई आदमी नियमके खिलाफ काम करता है या दूसरे सूबोके लोग किसी सूबेमे आकर वहाके लोगोके हक मारते है तो उन्हे सजा देने और व्यवस्था कायम रखनेके लिए जन-प्रिय सरकारें सूबोमे राज कर रही है। सूबोकी सरकारोका यह कर्तव्य है कि वे दूसरे सूबोसे अपने यहा आनेवाले सब लोगोकी पूरी-पूरी हिफाजत करे। "जिस चीजको तुम अपनी समझते हो, उसका ऐसा इस्तेमाल करो कि दूसरेको नुकसान न पहुचे"—यह समानताका जाना-पहचाना उसूल है। यह नैतिक बर्तावका भी सुदर नियम है। आजकी हालतमे यह कितना उचित मालूम होता है!

यहातक मैने सूबेमे आनेवाले नए लोगोके बारेमे कहा। लेकिन उन लोगोका क्या, जिनमेसे कुछ बिहारमे १५ अगस्तके दिन सरकारी नौकरियोमे और कुछ खानगी नौकरियोमे थे ? जहातक मेरा विचार है, ऐसे लोग जबतक दूसरा चुनाव नही करते तबतक उनके साथ बिहारियोकी तरह ही बरताव किया जाना चाहिए। कुदरती तौरपर उन्हे परदेशियोकी तरह अलग बस्ती नही बनानी चाहिए। "रोममे रोमनोकी तरह रहो"—यह कहावत जहातक रोमन बुराइयोसे दूर रहती है, वहातक समझदारीसे भरी और फायदा पहुचानेवाली कहावत है। एक दूसरेके साथ घुल-मिलकर तरक्की करनेके काममे यह ध्यान रखना चाहिए कि बुराइयोको छोड दिया जाय और अच्छाइयोको पचा लिया जाय। बगालमे एक गुजरातीके नाते मुझे बगालकी सारी अच्छाइयोको तुरत पचा लेना चाहिए

और उसकी बुराईको कभी छूना भी नही चाहिए । मुझे हमेशा बंगालकी सेवा करनी चाहिए, उसे अपने फायदेके लिए चूसना नही चाहिए । दूसरोसे बिलकुल अलग रहनेवाली हमारी प्रांतीयता जिंदगीको बरबाद करनेवाली चीज है । मेरी कल्पनाके सूबेकी हद सारे हिंदुस्तानकी हदोतक फैली हुई होगी, ताकि अंतमे उसकी हद सारे विश्वकी हदोतक फैल जाय, वर्ना वह खतम हो जायगा ।

दिल्ली जाते हुए, रेलमे ८–९–'४७

: २० :

नशीली चीजोंकी मनाही

इस सुधारके लिए आज सबसे अच्छा मौका है । आज देशमे पंचायतका राज है । हिंदुस्तानके दोनो हिस्सोके साथ-साथ देशी राज भी इस सुधारके लिए तैयार है । दोनो हिस्सोमे भुखमरी फैली हुई है । न खानेको अनाज मिलता है, न पहननेको कपडा । जब लोग भुखमरी और नंगेपनके किनारे खडे हो तब शराब, अफीम वगैरहके बारेमे सोचा भी नही जा सकता । शराब और अफीम पीनेवाले लोग पैसा तो बरबाद करते ही है, साथ ही अपने आपपर काबू भी खो देते है । नशेके असरमे आदमी न करने लायक काम भी कर बैठता है । इसलिए हर तरहसे विचारते हुए नशीली चीजोका खाना और पीना बंद होना ही चाहिए ।

हम सिर्फ कानून पास करके ही इस बुराईको खतम नही कर सकते। नशा करनेवाले चाहे जहासे नशीली चीजें लाकर खाए-पिएगे। इनके बनानेवाले और बेचनेवाले काला बाजार बद करनेके लिए एकदम तैयार नही होगे।

इसलिए नीचेकी तमाम बाते एक साथ की जानी चाहिए

(१) जरूरी कायदा बनाया जाय,

(२) लोगोको नशेकी बुराई समझाई जाय,

(३) शराबकी दूकानोपर ही सरकारको पीनेकी निर्दोष चीजोकी दुकाने कायम करनी चाहिए। और वहा किताबो, अखबारो और खेलोके रूपमे मनबहलावके निर्दोष साधन रखने चाहिए।

(४) शराब, अफीम वगैरह बेचनेसे जो आमदनी हो, वह सब लोगोको नशीली चीजे न बरतनेकी बात समझानेमे खर्च की जानी चाहिए।

(५) नशीली चीजोकी बिक्रीसे होनेवाली आमदनीको राष्ट्रके बच्चोकी शिक्षामे या जनताको फायदा पहुचानेवाले दूसरे कामोमे खर्च करना बडा पाप है। सरकारको ऐसी आमदनी राष्ट्र-निर्माणके कामोमे खर्च करनेका लालच छोडना ही चाहिए। अनुभव यह बताता है कि नशीली चीजोका खान-पान छोडनेवालेको जो फायदा होता है उसे सारी प्रजाका फायदा समझना चाहिए। अगर हम इस बुराईको जडसे खतम कर दे तो हमे राष्ट्रकी आमदनी बढानेके दूसरे बहुतसे रास्ते और साधन आसानीसे मिल जायगे।

दिल्ली जाते हुए, रेलमे, ८–९–'४७

: २१ :

मंत्रियोंकी जिम्मेदारी

मेरे पास ऐसे बहुतसे खत आए है, जिनमे लिखनेवाले भाइयोने हमारे मत्रियोके रहन-सहनको आरामतलब कहकर उसकी कडी आलोचना की है। उनपर यह आरोप लगाया गया है कि वे पक्षपातसे काम लेते है और अपने रिश्तेदारोको ही आगे बढाते है। मै जानता हू कि बहुत-सी आलोचना तो, आलोचकोकी बेजानकारीकी वजहसे होती है। इसलिए मत्रियोको उससे दु खी नही होना चाहिए। सिर्फ दोष बतलाने-वाली आलोचनामेसे भी उन्हे अपने लिए अच्छा हिस्सा ले लेना चाहिए। यदि मेरे पास आए हुए पत्र मै उनके पास भेज दू तो उन्हे ताज्जुब होगा। सभव है कि उनके पास इनसे भी बुरे खत आते हो। जो हो, इन खतोसे मै यही सबक लेता हू कि जहातक सादगी, धीरज, ईमानदारी और मेहनत करनेका सबध है, ये 'आलोचक' जनताद्वारा चुने हुए सेवकोसे दूसरोकी अपेक्षा ज्यादा उम्मीद रखते है। शायद मेहनत और अनुशासनको छोडकर और किसी बातमे हमे पुराने अग्रेज शासकोकी नकल नही करनी चाहिए। अगर एक तरफ मत्री लोग उचित आलोचनासे फायदा उठाने लगे और दूसरी तरफ आलोचना करनेवाले भाई कोई बात कहनेमे सयम और पूरी-पूरी सचाईका खयाल रखे तो इस टिप्पणीका मकसद पूरा हो जायगा। गलत बात कहने या बातको बढा-चढाकर कहनेसे एक अच्छा मामला भी बिगड जाता है।

दिल्ली जाते हुए, रेलमे, ८–९–'४७

: २२ :

दिल्लीकी अशांति

'मेरे मन कछु और है, कर्ताके कछु और' वाली कहावत मेरे जीवनमें कई वार सच सावित हुई है, जैसी कि वह दूसरे वहुतसे लोगोके जीवनमे भी हुई होगी। जव मैने पिछले इतवारको कलकत्ता छोडा तो मै दिल्लीकी अशात हालतके वारेमे कुछ भी नही जानता था। दिल्ली आनेके वाद मै सारे दिन यहाकी मौजूदा दर्दभरी कहानी सुनता रहा हू। मै कई मुसलमान दोस्तोसे मिला, जिन्होने अपनी करुण कहानी सुनाई। जितना कुछ मैने सुना, वह मुझे यह चेतावनी देनेके लिए काफी है कि जवतक दिल्लीकी हालत पहले-जैसी शात न हो जाय तवतक उसे छोडकर मुझे पजाव नही जाना चाहिए।

इस गरम वातावरणको शात करनेके लिए मुझे अपनी कुछ कोशिश करनी ही चाहिए और हिदुस्तानकी इस राजधानीके लिए 'मुझे करो या मरो' वाला अपना पुराना मूत्र काममे लेना ही चाहिए। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि दिल्लीमे रहनेवाले लोग इस निरर्थक वरवादीको पसद नही करते। मै उन शरणार्थियोके गुस्सेको समझता हू, जिन्हे दुर्भाग्यने पश्चिमी पजावसे खदेड दिया है। मगर गुस्सा पागलपनका छोटा भाई है। वह परिस्थितिको हर तरहसे विगाड ही सकता है। इस मर्जका इलाज वदला लेना नही है। उससे असली वीमारी और ज्यादा विगडती है। इसलिए जो लोग खून

करने, आग लगाने और लूट-मार करनेके नासमझीभरे कामोमे लगे हुए है, उनसे मेरी विनती है कि वे अपना हाथ रोके।

केद्रीय सरकारमे हिदुस्तानी सघके सबसे काबिल, हिम्मतवर और ज्यादा-से-ज्यादा आत्मबलिदानकी भावना-वाले लोग इस वक्त काम कर रहे है। आजादीका ऐलान होनेके बाद, उन्हे अपना काम सभाले अभी महीनाभर भी नही हुआ है। बिगडे हुए कारबारको व्यवस्थित करनेका उन्हे मौका न देना गुनाह और आत्मघात करना है। मै अच्छी तरह जानता हू कि देशमे अनाजकी कमी है। दगोकी वजहसे दिल्लीका सारा इतजाम विगड गया है, जिससे अनाज बाटनेका काम असभव हो गया है। भगवान पागल बनी हुई दिल्लीमे फिरसे शाति कायम करे।

मै इस उम्मीदके साथ अपनी बात खतम करता हू कि मेरे विदा होते वक्त कलकत्ताने जो वचन दिया था, उसे वह पूरा करेगा। मेरे आसपास फैले हुए इस पागलपनके बीच उसका दिया हुआ वचन ही मुझे सहारा दिए हुए है।

नई दिल्ली, ९–९–'४७

: २३ :

सावधान !

अगर सरकारे और उनके दफ्तर सावधानी नही रखेगे तो मुमकिन है कि अग्रेजी जबान हिंदुस्तानीकी जगहको हडप

ले । इससे हिंदुस्तानके उन करोडो लोगोको बेहद नुकसान होगा, जो कभी भी अंग्रेजी समझ नही सकेंगे । मेरे खयालमे प्रातीय सरकारोके लिए यह बहुत आसान बात होनी चाहिए कि वे अपने यहा ऐसे कर्मचारी रखे, जो सारा काम प्रातीय भाषाओ और अतर्प्रातीय भाषामे कर सके। मेरी रायमे अतर्प्रातीय भाषा, सिर्फ नागरी या उर्दू लिपिमे लिखी जानेवाली हिंदुस्तानी ही हो सकती है ।

यह जरूरी फेरफार करनेमे एक दिन खोना भी देशको भारी सास्कृतिक नुकसान पहुचाना है । सबसे पहली और जरूरी चीज यह है कि हम अपनी उन प्रातीय भाषाओका सशोधन करे जो हिंदुस्तानको वरदानकी तरह मिली हुई है । यह कहना दिमागी आलसके सिवा और कुछ नही है कि हमारी अदालतो, हमारे स्कूलो और यहातक कि हमारे दफ्तरोमे भी यह भाषा-सबधी फेरफार करनेके लिए कुछ वक्त, शायद कुछ बरस चाहिए । हा, जबतक प्रातोका भाषाके आधारपर फिरसे बटवारा नही होता तबतक बबई और मद्रास-जैसे प्रातोमे, जहा बहुत-सी भाषाए बोली जाती है, थोडी मुश्किल जरूर होगी। प्रातीय सरकारे ऐसा कोई तरीका खोज सकती है, जिससे उन प्रातोके लोग वहा अपनापन अनुभव कर सके । जबतक हिंदुस्तानी-सघ इस सवालको हल न कर ले कि अतर्प्रातीय जबान नागरी या उर्दू लिपिमे लिखी जानेवाली हिंदुस्तानी हो, या सिर्फ नागरी लिपिमे लिखी जानेवाली हिंदी, तबतकके लिए प्रातीय सरकारे ठहरी न रहे । इसकी वजहसे उन्हे जरूरी सुधार करनेमे देर न लगानी चाहिए । भाषाके

बारेमे यह एक बिलकुल गैरजरूरी विवाद खडा हो गया है, जिसकी वजहसे हिंदुस्तानमे अग्रेजी-भापा घुस सकती है। और अगर ऐसा हुआ तो इस देशके लिए यह एक ऐसे कलककी बात होगी, जिसे धोना हमेशाके लिए असभव होगा। अगर सारे सरकारी दफ्तरोमे प्रातीय भापाके इस्तेमाल करनेका कदम इसी वक्त उठाया जाय तो अतर्प्रांतीय जबानका उपयोग तो उसके बाद तुरत ही होने लगेगा। प्रातोको केंद्रसे सबध रखना ही पडेगा और अगर केंद्रीय सरकारने शीघ्र ही यह महसूस करनेकी समझदारी की कि उन मुट्ठीभर हिदुस्तानियोके लिए, हिदुस्तानकी सस्कृतिको नुकसान नही पहुचाना चाहिए, जो इतने आलसी है कि जिस जबानको, किसी भी पार्टीका दिल दुखाए बगैर सारे हिदुस्तानमे आसानीसे अपनाया जा सकता है, उसे भी नही सीख सकते। तो ऐसी हालतमे प्रातीय सरकारे केंद्रीय सरकारसे अग्रेजीमे अपना व्यवहार रखनेका साहस नही कर सकेगी। मेरा मतलब यह है कि जिस तरह हमारी आजादीको जबरदस्ती छीननेवाले अग्रेजोकी राजनैतिक हुकूमतको हमने सफलतापूर्वक इस देशसे निकाल दिया, उसी तरह हमारी सस्कृतिको दबानेवाली अग्रेजी जबानको भी हमे यहासे निकाल बाहर करना चाहिए। हा, व्यापार और राजनीतिकी अतर्राष्ट्रीय भापाके नाते अग्रेजीका अपना स्वाभाविक स्थान हमेशा कायम रहेगा।

नई दिल्ली, ११–९–'४७

: २४ :

शरणार्थी-कैंपमें सफाई

आज राजकुमारी अमृतकौर और डा० सुशीला नैयर मुझे अर्विन अस्पतालमे ले गई थी। वहापर जात वगैरहका कोई भेदभाव रखे वगैर सिर्फ जख्मी लोगोका ही इलाज किया जाता है। मरीजोमे एक वच्चा था, जिसकी उमर मुश्किलसे पाच वरसकी होगी। गोली लगनेसे उसके वदनपर घाव हो गया था। डाक्टर और नर्सोपर कामका भारी वोझ था, वहा मुसलमान मरीजोकी तादाद ज्यादा थी, क्योकि हिंदू और सिक्ख मरीजोको दूसरे अस्पतालोमे भेज दिया गया था।

राजकुमारीसे मुझे पता चला कि शरणार्थी कैंपोमे पाखाने साफ करनेके लिए भगी भेजना करीव-करीव नामुमकिन है। इससे हैजे-जैसी छूतकी वीमारीके फैलनेका डर है। मेरी रायमे शरणार्थियोको अपने-अपने कैंपोमे खुद सफाई करनी चाहिए। पाखाने भी उन्हे ही साफ करने चाहिए और कैंप-व्यवस्थापककी स्वीकृतिसे कुछ उपयोगी काम करना चाहिए। सिर्फ उन लोगोको छोडकर, जो शारीरिक मेहनत नही कर सकते, वाकी सवपर यह नियम लागू होता है। सारे शरणार्थी-कैंप सफाई, सादगी और मेहनतके नमूने होने चाहिए।

आज पाकिस्तानके हाई कमिश्नर मुझसे मिलने आए थे। उनका साप्रदायिक शाति और दोस्तीमे पक्का विश्वास है।

सिक्ख भाई आज मुझसे दो बार मिले। भारत-सरकारके कृपाण-संबंधी हुक्मसे वे दुःखी थे। मैं इसके बारेमें सरकारसे चर्चा करूं, उससे पहले उन्होंने कृपाणकी अपनी जरूरतके बारेमें मुझे लिखकर देनेका वचन दिया है। उन्होंने आगे कहा कि उनके खिलाफ लगाए गए इलजामोंको बहुत नमक-मिर्च लगाकर कहा गया है। हिंदुस्तानी संघमें रहनेवाले मुसलमानोंसे या किसी दूसरी जातसे हमारा कोई झगडा नहीं हो सकता। हम तो देशमें कानूनको माननेवाले नागरिक बनकर ही रहना चाहते हैं।

नई दिल्ली, ११-९-'४७

: २५ :

मेरी मूर्ति !

बंबईमें किसी आम जगहपर दस लाख रुपए खर्च करके मेरी मूर्ति खडी करनेकी बात चल रही है। इस संबंधमें मेरे पास कई आलोचनाभरे पत्र आए हैं। उनमेंसे कुछ तो नम्र हैं और कुछ इतने गुस्सेभरे हैं मानो मैं ही अपनी मूर्ति बनवाकर खडी करनेका गुनाह कर रहा होऊं! राईका पर्वत बना देना शायद इन्सानका स्वभाव है। असल बातकी छानबीन तो सिर्फ समझदार लोग ही करते हैं। इस मामलेमें अलोचनाके लिए जगह है। मुझे कहना होगा कि मुझे तो मेरा फोटो भी पसंद नहीं। कोई मेरा फोटो खींचता है तो मुझे

अच्छा नही लगता। फिर भी कोई-कोई खीच ही लेते है। मेरी मूर्तिया भी वनी है। इसके बावजूद अगर कोई पैसे खर्च करके मेरी मूर्ति खडी करनेकी वात करता है तो यह मुझे अच्छा नही लग सकता और खास करके इस वक्त, जव कि लोगोको खानेको अनाज नही मिलता, पहननेको कपडे नही मिलते। हमारे घरोमे, गलियोमे गदगी है, चालोमे (वस्तियोमे) इन्सान किसी तरह जिदगी विता रहे है तव शहरोको कैसे सजाया जा सकता है? इसलिए मेरी सच्ची मूर्ति तो मुझे रुचनेवाले काम करनेमे है। अगर ये रुपए, ऊपर वताए हुए कामोमे खर्च किए जाय, तो जनताकी सेवा हो और खर्च किए हुए रुपयोका पूरा वदला मिले। मुझे उम्मीद है कि यह पैसा इससे ज्यादा लोक-सेवाके कामोमे खर्च किया जायगा। कल्पना कीजिए कि इतने रुपए अगर अधिक अनाज पैदा करनेमे लगाए जाय तो कितने भूखोका पेट भरे।

नई दिल्ली, १३–९–'४७

: २६ :

राष्ट्रीय सेवक-संघके सदस्योंसे

दिल्लीमे आते ही मैने सघके मुख्य कार्यकर्ताओसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की थी। सघके विरुद्ध मेरे पास काफी शिकायते यहा और कलकत्तामे आई थी। सघके साथ मेरा वरसोसे सवध है। स्व० श्रीजमनालालजी वरसो पहले मुझे वर्धामे

सघके एक कैंपमे ले गए थे । उस कैंपको देखकर मै वहुत खुश हुआ था । वहा कडा अनुशासन था । सादगी थी और सवर्ण व असवर्ण सव समान थे । सघको चलानेवाले श्रीहेडगेवारजी वहुत वडे सेवक थे और सेवाके लिए ही जीते थे । वे तो चले गए, लेकिन सघकी ताकत दिन-प्रतिदिन बढती गई । मै तो हमेगासे यह मानता आया हू कि जिस सस्थामे सच्चा त्यागभाव रहता है, उसकी ताकत वढती ही है । अगर त्यागभावके साथ शुद्ध भावना भी रहे तो वह सस्था जगतके लिए फायदेमद होती है । शुद्धता न हो तो सिर्फ त्यागसे जगतको फायदा नही पहुचता । शुद्ध त्यागके साथ शुद्ध ज्ञान और शुद्ध भावना न हो तो काम पूरा नही होता, गिरावट आ जाती है ।

आप लोगोसे भी मै अपरिचित नही हू । मै तो इसी वाल्मीकि-वस्तीमे रहता और हमेशा देखा करता था कि आप किस नियम और किस ध्यानसे अपनी प्रार्थना और व्यायाम किया करते थे । आपकी प्रार्थनामे हिद माताके और हिदू-धर्मके गौरवकी वात है । मै तो दक्षिण अफ्रीकासे यह दावा करता आया हू कि मै सनातनी हिदू हू । मै 'सनातन' का मूल अर्थ लेता हू । हिदू शव्दका सच्चा मूल क्या है, यह वहुत कम लोग जानते है । यह नाम हमे दूसरोने दिया और हमने उसे अपना लिया । धर्मके कई अभ्यासी कहते है कि हिदू-धर्म क्यो कहते हो ? इसे आर्य-धर्म कहो या सनातन धर्म कहो । हिदू-धर्मकी विगेपता रही है, उसकी सहिष्णुता और जिसके सपर्कमे आए उसकी अच्छी चीजोको पचा लेनेकी ताकत ।

आपके गुरुजीसे यहा मेरी मुलाकात हुई । उन्होने कहा--

"हमारे सघमे गदगी हो नही सकती। हम हिंदू-धर्मकी उन्नति चाहते है, पर किसीको नुकसान पहुचाकर नही। स्वरक्षाके लिए हम हमेशा तैयार रहते है। सघमे सब भले ही है, ऐसा दावा हम नही कर सकते। लेकिन हमारी नीति क्या है, यह मैने आपको सुना दिया।" मैने आपके गुरुजीसे कहा कि अगर यह सही है तो मै डकेकी चोट दुनियाको यह सुना सकता हू कि आप लोग भले है। आपके गुरुजीने यह भी कहा कि बुरे काम करनेवालो, दभियो और हुकूमतको गिराने-की चेष्टा करनेवालोके साथ सघका सवध नही है। मैने कहा कि हुकूमत किसकी मिटावेगे ? हुकूमत तो हमारी अपनी है। हिद यूनियनमे ज्यादा सख्या हिंदुओकी है। इसमे कोई शर्मकी बात नही। लेकिन अगर हम यह कहे कि यहा हिंदुओके सिवा दूसरा कोई रह ही नही सकता और कोई रहे भी तो उसे हिंदुओका गुलाम बनकर रहना होगा, तो यह गलत बात है। हिंदू-धर्म ऐसा नही सिखाता। मेरे हिंदू-धर्ममे सब धर्म आ जाते है। सब धर्मोका निचोड हिंदू-धर्ममे मिलता है। अगर हिंदू-धर्म सबको हजम करनेका काम न करता तो वह इतना ऊचा न उठ सकता। सब धर्मोमे उतार-चढाव तो आता ही है। जबसे हिंदू-धर्ममे अस्पृश्यताको स्थान मिला तबसे हम गिरने लगे। इससे हमे कितना नुकसान हुआ, उसे मै यहा नही बताऊगा। अगर अस्पृश्यता या छूआ-छूतका मैल बना रहा तो हमारे धर्मका नाश हो जायगा। इसी तरहसे अगर हम कहे कि हिंदुस्तानमे सिवा हिंदुओके सबको गुलाम होकर रहना है, या पाकिस्तानवाले यह कहे

कि पाकिस्तानमे सिवा मुसलमानोके सबको गुलाम बनकर रहना है तो यह चीज चलेगी नही। ऐसा कहकर दोनो अपना धर्म छोडते है और दोनो अपने-अपने धर्मका नाश करते है।

मुल्कके टुकडे तो हो चुके। सबने यह मजूर किया, तभी तो ऐसा हुआ। अब उसे दुरुस्त करनेका तरीका क्या है? एक हिस्सा गदा बने तो क्या दूसरा भी वैसा ही करे? वुराईका सामना वुराई द्वारा करनेसे, फिर वह समान मात्रामे हो, या ज्यादा या कम मात्रामे, वुराई मिटती नही। बुराईके सामने भलाई करनेसे ही वुराई मिटती है। मै तो जो मेरे दिलमे है, वही वात कह सकता हू।

आज हिदुस्तानकी नाव वडे तूफानमेसे गुजर रही है। हमारे जो नेता हुकूमतकी वागडोर लेकर वैठे है, उनसे बढकर हमारे पास कोई नही है। अगर कोई हो तो लाइए। मै सिफारिश करूगा कि हुकूमतकी वागडोर उनके हाथमे दे दी जाय। आखिर सरदार तो वूढे हो गए है। जवाहरलालजी वूढे नही है, लेकिन वूढे-से दीखने लगे है। वे दोनो हिम्मतके पुतले है। भय-जैसी उनके पास कोई चीज नही है। वे यथाशक्ति मुल्ककी सेवा कर रहे है।

अगर हिदुस्तानके सव हिंदू एक दिशामे जाना चाहे, चाहे वह गलत ही क्यो न हो, तो उन्हे कोई रोक नही सकता। लेकिन कोई भी आदमी, फिर वह अकेला ही क्यो न हो, उनके खिलाफ अपनी आवाज उठा सकता है। उन्हे चेतावनी दे सकता है। वही मै आज कर रहा हू।

आपका फर्ज है कि आप मन, वचन और कर्ममे अपनी

सरकारको मदद दे। अगर मै कोई बुरी बात कहता होऊ तो मुझे बताइए। मुझसे कहा जाता है कि आप मुसलमानोके दोस्त है और हिंदू व सिक्खोके दुश्मन। मुसलमानोका दोस्त तो मै १२ बरसकी उम्रसे रहा हू और आज भी हू, लेकिन जो मुझे हिंदुओ और सिक्खोका दुश्मन कहते है, वे मुझे पहचानते नही। मेरी रग-रगमे हिंदू-धर्म समाया हुआ है। मै धर्मको जिस तरह समझता हू, उसी तरह उसकी और हिंदुस्तानकी सेवा पूरी ताकतसे कर रहा हू। मेरे दिलकी बात मैने आपको सुना दी है। हिंदुस्तानकी रक्षाका, उसकी उन्नतिका यह रास्ता नही कि जो बुराई पाकिस्तानमे हुई उसका हम अनुकरण करे। अनुकरण हम सिर्फ भलाईका ही करें।

अगर पाकिस्तान बुराई ही करता रहा तो आखिर हिंदुस्तान और पाकिस्तानमे लडाई होनी ही है। मेरी बात कोई सुने तो यह सकट टल सकता है। अगर मेरी चले तो न तो मै फौज रखू और न पुलिस। मगर ये सब हवाई बाते है। मै हुकूमत नही चलाता। आज जो चल रहा है, उसमे तो लडाईका ही सामान भरा है। क्यो पाकिस्तानमे हिंदू और सिक्ख भाग रहे है? पाकिस्तानवाले उन्हे क्यो नही मनाते कि यही रहो। अपना घर न छोडो। आपकी इज्जत और जान-मालकी हम हिफाजत करेगे? क्यो पाकिस्तानमे एक छोटी-सी लडकीकी तरफ भी कोई बदनजरसे देखे? इसी तरह क्यो न एक-एक मुसलमान हिंद-यूनियनमे पूरी तरह सुरक्षित रहे?

आपकी सख्या बडी है। आपकी ताकत हिंदुस्तानको बरबादीमे लगे तो वह बुरी बात होगी। आपपर जो इल्जाम

लगाया जाता है, उसमे कुछ भी सच है या नही, यह मै नही जानता। मैने तो सिर्फ बता दिया कि किसी चीजका नतीजा क्या हो सकता है। यह सघका काम है कि वह अपने सही कामोसे इस इलजामको झूठ साबित कर दे।

सवाल—हिंदू-धर्ममें पापीको मारनेकी इजाजत है या नहीं ?

जवाब—है भी और नही भी है। जो खुद पापी है, वह दूसरे पापीको सजा कैसे देगा? अगर सब निर्णायक बन जायं तो न्याय किसको मिलेगा? पापीको सजा देना हुकूमतका काम है। आप हुकूमतसे कह दे कि यह आदमी पापी है, दगाबाज है। इसको सजा दीजिए। हुकूमत तो अहिसा माननेवाली है नही। वह दगाबाजोको गोलीसे उडा देगी। मगर यह कह देना कि सारे मुसलमान दगाबाज है, ठीक नही है, यह हिंदू-धर्म नही है।[1]

नई दिल्ली, १६–९–'४७

: २७ :

भारतीय संघके मुसलमानोंसे

कुछ मुसलमान दोस्तोंने गाधीजीसे कहा कि वे दिल्ली शहरके मुस्लिम मोहल्लोमें जाय, ताकि जो मुसलमान अभी वहा रह रहे है, वे

---

[1] भंगी बस्ती (नई दिल्ली) में राष्ट्रीय स्वय-सेवक-सघके स्वय-सेवकोंके समक्ष दिया गया भाषण।

डरकर अपने मकान खाली न कर दें। गाधीजी एकदम राजी हो गए और उन्होने शामको दरियागज मुहल्लेसे अपना यह काम शुरू किया। मकानो और दूकानोकी उजाड शक्ल देखकर गाधीजीको दु ख हुआ। इनमेंसे कुछ दूकानें लूट ली गई थीं। करीब सौ मुसलमान आसफअली साहबके मकानमें इकट्ठा हो गए थे। उन्होने गाधीजीसे कहा कि हम हिंदुस्तानमें यूनियनके वफादार नागरिक बनकर रहना चाहते हैं, मगर हम खास तौरपर पुलिसके पक्षपाती बर्तावसे अपनी हिफाजतकी गारटी चाहते हैं। अपनी हालतका बयान करते हुए कुछ लोगोकी आखोमें आसू आ गए थे। उन्होने कहा कि पाकिस्तानके मुसलमानोने जो कुछ किया उसकी हम ताईद नहीं करते, मगर उनके पापोका बदला बेगुनाहोसे नहीं लिया जाना चाहिए। उनके सामने बोलते हुए गाधीजीने कहा—

आप लोग बहादुर बनिए और मजबूतीके साथ कहिए कि चाहे जो हो, हम अपने मकान नही छोडेगे। आपको अपनी हिफाजतके लिए एक भगवानको छोडकर और किसीपर मुनहसिर नही रहना चाहिए। मै अपनी ताकतभर सब कुछ करनेके लिए यहापर ठहरा हुआ हू। मैने नोआखाली, बिहार कलकत्ता और अब दिल्लीमे अपने आपको 'करने या मरने' के दावपर लगा दिया है। जबतक सच्ची शाति कायम न हो और हिंदू, सिक्ख और मुसलमान, पुलिस और फौजकी मददके बगैर आपसमे भाई-भाईकी तरह रहना तय न कर लें तबतक जो लोग अपने-अपने घर छोडकर चले गए है, उनसे मै वापिस आनेके लिए नही कहूगा।

मै जिस तरह हिंदुओ और दूसरोका दोस्त और सेवक हू उसी तरह मुसलमानोका भी हू। मै तबतक चैन नही लूगा जबतक हिंद-यूनियनका हर एक मुसलमान, जो यूनियनका

वफादार नागरिक बनकर रहना चाहता है, अपने घर वापिस आकर शाति और हिफाजतसे नही रहने लगता और इसी तरह हिंदू और सिक्ख भी अपने-अपने घरोको नही लौटते। मैने दक्षिण अफ्रीका और हिंदुस्तानमे जिदगीभर मुसलमानोकी सेवा की है। मै खिलाफतके दिनोकी हिंदू-मुस्लिम-एकताको भूल नही सकता। वह एकता टिकी नही, मगर उसने यह दिखा दिया कि हिंदुओ और मुसलमानोमे टिकाऊ दोस्ती कायम हो सकती है। इसीके लिए मै जीता हू और काम करता हू। मै यह देखनेके लिए पजाब जा रहा था कि जो हिंदू और सिक्ख पाकिस्तानसे खदेड दिए गए है, वे अपने-अपने घरोको वापिस लौट सके और वहा हिफाजत और इज्जतसे रह सके। मगर रास्तेमे मै दिल्लीमे रोक लिया गया और जबतक हिंदुस्तानकी इस राजधानीमे शाति कायम नही होती तबतक मै यही रहूगा। मै मुसलमानोको यह सलाह कभी नही दूगा कि वे लोग अपने घर छोडकर चले जाय, भले ही ऐसी बात कहनेवाला मै अकेला ही क्यो न होऊ। अगर मुसलमान लोग हिंदुस्तानके कानून माननेवाले और वफादार नागरिक बनकर रहे तो उन्हे कोई भी नही छू सकता। मै सरकार नही हू, मगर जो सरकारमे है, उनपर मेरा असर है। मैने उन लोगोसे इस विषयपर लबी चर्चाए की है। वे इस बातको नही मानते कि हिंदुस्तानमे मुसलमानोके लिए कोई जगह नही है, या अगर मुसलमान यहा रहना चाहे, तो उन्हे हिंदुओका गुलाम रहकर रहना पडेगा। कुछ लोगोने कहा है कि सरदार पटेलने मुसलमानोके पाकिस्तानमे जानेकी

वातकी ताईद की है। जव सरदारसे मैने यह वात कही तो वे गुस्सा हुए। मगर साथ ही उन्होने मुझसे कहा कि इस शकके लिए मेरे पास कारण है कि हिंदुस्तानके मुसलमानोकी वहुत वडी तादाद हिंदुस्तानके प्रति वफादार नही है। ऐसे लोगोका पाकिस्तानमे चले जाना ही ठीक होगा। मगर अपने इस शकका असर सरदारने अपने कामोपर नही पडने दिया। मै पूरी तौरपर मानता हू कि जो मुसलमान यूनियनके नागरिक वनना चाहते है, उन्हे सवसे पहले यूनियनके प्रति वफादार होना ही चाहिए और उन्हे अपने देशके लिए सारी दुनियासे लडनेके लिए तैयार रहना चाहिए। जो लोग पाकिस्तान जाना चाहते है, वे ऐसा करनेके लिए आजाद है। मै सिर्फ यही चाहता हू कि एक भी मुसलमान, हिंदुओ या सिक्खोके डरसे यूनियन न छोडे। दिल्लीके मुसलमानोने अपने लिखित ऐलानके जरिए मुझे भरोसा दिलाया है कि वे हिंदुस्तानी सघके वफादार नागरिक है। जिस तरह मै दूसरोसे उम्मीद करता हू कि वे मेरी वातोपर भरोसा करे, उसी तरह मै भी उनकी वातोपर भरोसा करूगा। ऐसी हालतमे सरकारका फर्ज है कि वह इन लोगोकी हिफाजत करे। अगर मुझे मुसलमानोको हिफाजतसे रखनेमे कामयावी न मिली, तो कम-से-कम मै जिदा नही रहना चाहूगा। वुराई जहां कही भी हो, उसे तो खत्म करना ही होगा। भगाई हुई औरतो-को लौटाया जाय और जवरदस्ती धर्म वदलनेके मामलोको रद समझा जाय। पाकिस्तानके हिंदू और सिक्ख और पूर्वी पजावके मुसलमान फिरसे अपने-अपने घरोमे वसाए जाय।

पाकिस्तान और यूनियनमें वे ऐसी हालत पैदा करें कि एक छोटी लड़की भी अपने आपको असुरक्षित न समझे, फिर उसका चाहे जो मजहब हो। शफिकुज्जमा साहब और मुज-फ्फर नगरके मुसलमानोंके बयान पढ़कर मुझे खुशी हुई है। मगर पाकिस्तान रवाना होनेसे पहले मुझे दिल्लीकी आग बुझा-नेमें मदद करनी ही होगी। अगर हिंदुस्तान और पाकिस्तान हमेशाके लिए एक दूसरेके दुश्मन बन जाय और आपसमें जंग छेड़ दे, तो ये दोनो ही उपनिवेश नष्ट हो जायगे और बडी मुश्किलोंसे हासिल की हुई अपनी आजादीको बहुत जल्दी खो देगे। वह दिन देखनेके लिए मै जिदा नही रहना चाहता। मौलाना अहमद सईदने मुसलमानोंसे अपील की है कि वे अपने बगैर लाइसेंसके हथियार सरकारको सौप दे।

दरियागंज छोडनेसे पहले लोग गांधीजीको कुछ पर्दानशीन औरतोंके पास ले गए। उन औरतोंने कहा कि हमारी सारी उम्मीदें आपपर लगी हुई हैं। गांधीजीने उन्हें जवाब दिया :

आपको एक खुदाको छोडकर और किसीपर मुनहसिर नही रहना चाहिए। अपनी ओरसे मैं भरसक कोशिश कर रहा हूं।

दरियागंज-मस्जिद दिल्ली, १९-९-'४७

: २८ :

मेरा धर्म

यह शीर्षक सिर्फ इस बातपर विचार करनेके लिए है कि

'हरिजनसेवक' वगैरह अखवार चलाने न चलानेके वारेमे मेरा धर्म क्या है। मेरे सवालके जवावमे पाठकोकी तरफसे मेरे पास काफी तादादमे पत्र आए है। उनमेसे ज्यादातर लोग चाहते है कि ये अखवार जारी रहे। इन लेखकोका भाव यह है कि इस वक्त उन्हे अलग-अलग विपयोपर मेरा मत जाननेकी इच्छा है। यानी मेरे मरनेपर इन अखवारोकी जरूरत रहेगी या नही, यह एक सवाल है।

मेरी मौत तीन तरहसे हो सकती है

१ यह शरीर छूट जाय।

२. आखकी पुतली अपना काम करती रहे, मगर शरीर या मन किसी कामके न रहे।

३. यह शरीर टिका रहे, मन और वुद्धि भी काम देते रहे, मगर मै जनसेवाके सारे क्षेत्रोसे हट जाऊ।

पहले प्रकारकी मौत तो हर देहधारीके लिए है—कोई आज मरता है तो कोई कल। इसलिए इसके वारेमे क्या कहा जा सकता है ?

दूसरे प्रकारकी मौत तो किसीको न मिले ! ऐसी जिंदगी धरतीपर वोझकी तरह है। ऐसा होता हो या न होता हो, मगर अपने लिए तो मै ऐसी मौत नही चाहता।

अव विचारने लायक तीसरी मौत ही रह जाती है। कई पाठक मानते है कि मेरा प्रवृत्तिकाल अव वीता हुआ समझना चाहिए। पद्रहवी अगस्तके वादसे नया युग शुरू हुआ है। उसमे मेरी जगह कही भी नही है। इस कथनमें मुझे गुस्सा

नजर आता है, इसलिए इनका मुझपर कोई असर नही। ऐसी सलाह देनेवाले बहुत थोड़े है।

इसलिए मुझे इस सवालपर स्वतन्त्र विचार करनेकी जरूरत है। 'हरिजन' अखबार नवजीवन ट्रस्टकी देखरेखमें निकलते है। ट्रस्टी-मडल चाहे तो इन अखबारोको आज बद कर सकता है। उसे पूरा अधिकार है। मगर वे नही चाहते कि ये बद हो। मेरा जीवन लोकसेवाके काममे ही बीत रहा है। अकर्ममे भी कर्म देखनेकी शक्ति अभी मुझमे नही है। इसलिए जबतक सास चलती है तबतक तो मेरे काम जारी रहेगे। मेरी प्रवृत्तियो-को अलग-अलग हिस्सोमे बाटा नही जा सकता। सबका मूल एक ही है, फिर उसे सत्य कहो या अहिसा। इसलिए ये अखबार जैसे चल रहे है, वैसे ही चलते रहेगे। "मेरे लिए एक कदम काफी है।"[1]

नई दिल्ली, २२-९-'४७

: २६ :

उपवासका अर्थ

एक भाई लिखते है—

"मुझे लगता है कि हर कदमपर अपने प्राणोकी बाजी लगा देना

---

[1] मूल गुजरातीमें इस वाक्यके लिए यह चरण है—"मारे एक डगलु बस थाय।"

आपके लिए आखिरी और कुदरती इलाज भले हो, मगर उसका उपयोग मरीजको इजेक्शन देकर या उसमें प्राणवायु भरकर उसे जिंदा रखनेकी कोशिश करने-जैसा ही है।"

ये शब्द प्यारसे और दुखसे लिखे गए है। फिर भी मुझे कहना पडेगा कि लेखकने इस विषयपर पूरा विचार नही किया। मेरा भला चाहनेवाले दूसरे बहुतसे भाइयोका भी शायद यही विचार हो, यह समझकर मै खुले तौरपर इसका जवाब देता हू।

खत लिखनेवाले भाईकी उपमा यहा लागू नही होती। प्राणवायु भरने और सुई लगानेका इलाज सिर्फ बाहरी इलाज है। और उसका प्रयोग शरीरपर, उसे कुछ ज्यादा समयतक टिकाए रखनेके लिए ही होता है। इसलिए वह क्षणिक है। वास्तवमे देखा जाय तो इस इलाजके न करनेमे इन्सान कुछ खोता नही है। शरीरको अमर तो किया ही नही जा सकता। उसकी उमर दो दिन बढा देनेसे कोई बडा फायदा नही होता।

उपवास किसीके शरीरपर असर डालनेके लिए नही किया जाता। वह तो दिलको छूता है। इसलिए उसका सबध आत्मासे है। इससे उपवासका असर क्षणिक नही होता। वह टिकाऊ होता है। उपवास करनेवालेमे इसके लिए नैतिक योग्यता है या नही, यह जुदी बात है। यहा हमे इसपर विचार नही करना है।

अपने जितने उपवासोकी मुझे याद है, उनमेसे एक ही ऐसा था, जिसमे उपवास करनेमे तो मैने भूल नही की थी,

मगर उसमें मैंने बाहरी दबाव मिला दिया था, जो उपवासका विरोधी है। यह भूल न हुई होती तो मुझे यकीन है कि उसका नतीजा अच्छा ही निकलता। मेरा मतलब उस उपवाससे है, जो मैंने राजकोटमें स्वर्गीय ठाकुर साहबके विरोधमें किया था। मैं सभल गया, इसलिए अपनी भूल सुधार सका और एक भयकर नतीजा टल गया।

मेरा आखिरी उपवास कलकत्तामें २-३-४ सितबरको हुआ था। उसका बहुत अच्छा नतीजा निकला। उसका सबब आत्मासे होनेकी वजहसे मै उसे टिकाऊ मानता हू। मगर यह असर टिकाऊ हुआ या नही, यह तो समय ही बतलाएगा। यह बात उपवास करनेवालेकी पवित्रतापर और उसके ज्ञानपर निर्भर है। इसकी जाच करना यहा अप्रासगिक होगा। यह जाच मै खुद कर भी नही सकता। कोई निष्पक्ष और योग्य आदमी ही कर सकता है और वह भी मेरे मरनेके बाद।

नई दिल्ली, २५-९-'४७

: ३० :

हिंदुस्तानी

काकासाहब कालेलकर एक खतमे लिखते है—

"यूनियनके मुसलमान यूनियनके वफादार रहेंगे तो क्या वे हिंदुस्तानी भाषाको राष्ट्रभाषा मानेंगे और हिंदी-उर्दू दोनो लिपिया सीखेंगे?

इस बारेमें अगर आप अपनी राय नहीं बतावेंगे तो हिंदुस्तानी प्रचारका काम बहुत मुश्किल हो जायगा। मौलाना आजाद क्या अपने खयालात नहीं बता सकते ?"

काकासाहब जो कहना चाहते है वह नई बात नही है। लेकिन आजाद हिंदमे यह बात यूनियनको ज्यादा जोरोसे लागू होती है। अगर यूनियनके मुसलमान हिंदुस्तानकी तरफ वफादारी रखते है और हिंदुस्तानमे खुशीसे रहना चाहते है तो उनको दोनो लिपिया सीखनी चाहिए।

हिंदुओकी तरफसे कहा जाता है कि उनके लिए पाकिस्तानमे जगह नही, सिर्फ हिंदुस्तानमे है। अगर कही ऐसा मौका आवे कि पाकिस्तान और हिंदुस्तानके बीच लडाई छिड जाय तो हिंदुस्तानके मुसलमानोको पाकिस्तानसे लडना होगा। यह ठीक है कि लडाईका मौका आना ही नही चाहिए। आखिरमे दोनो हुकूमतोको एक-दूसरीसे मिल-जुलकर काम करना होगा। एक-दूसरीके प्रति दोस्ती होनी चाहिए। दो हकूमते होते हुए भी काफी चीजें दोनोके बीच एक ही है। अगर वे दुश्मन बन जाय तब तो कोई भी चीज एक नही हो सकती। दोनोमे दिलकी दोस्ती रहे तब तो प्रजा दोनोकी तरफ वफादार रह सकती है। यो तो दोनो राज एक ही सस्थाके सदस्य है। उनमे दुश्मनी हो ही कैसे सकती है? लेकिन इस चर्चामे पडनेकी यहा कोई जरूरत नही।

हिंदुस्तानमे सबकी बोली एक ही हो सकती है। मै तो एक कदम आगे बढकर कहता हू कि अगर दोनो राज एक-दूसरेके दुश्मन नही, बल्कि दिलसे दोस्त बनते है तो दोनो तरफ

सब नागरी और उर्दू लिपिमें लिखेंगे। उसका मतलब यह नही कि उर्दू जबान या हिंदी जबान रह ही नही सकती, लेकिन अगर दोनोको या सब धर्मियोको दोस्त बनना है तो सबको हिंदी और उर्दूके संगमसे जो आम बोली बन सकती है, उसमे ही बोलना है। और, उसी बोलीको उर्दू या नागरी लिपिमे लिखना है। कम-से-कम हिंदुस्तानमे रहनेवाले मुसलमानोका इम्तिहान तो इसमे हो जाता है और यही बात हिंदू, सिक्ख वगैरहको भी लागू होती है। लेकिन मै ऐसा नही कहूगा कि मुसलमान अगर दोनो लिपिया नही सीखते तो उर्दू और हिंदीके मेलसे बननेवाली सबकी बोली राष्ट्रभाषा हो ही नही सकती। मुसलमान दोनो लिपिया सीखे या न सीखे, तो भी हिंदू तथा हिंदुस्तानके दूसरे धर्मियोको दोनो लिपिया सीखनी चाहिए। आजकी जहरीली हवामे यह सादी-सी बात भी शायद लोग नही समझ सकेंगे। उर्दू लिपिका और उर्दू लफ्जो-का हिंदू जान-बूझकर बहिष्कार करना चाहे तो कर तो सकते है, लेकिन उससे हम बहुत कुछ खोएगे। इसलिए जिन लोगोने हिंदुस्तानी प्रचारका काम हाथमे लिया है, फिर वे दो-चार हो या करोडो, वे इस सीधी-सादी बातको छोड नही सकते।

मै इसमे भी सहमत हू कि मौलाना अबुलकलाम आजाद साहब और हिंदुस्तानके दूसरे ऐसे मुसलमानोको ऐसी चीजोमें नमूना बनना चाहिए। अगर वे न बने तो कौन बनेगा? हमारे सामने बहुत मुश्किल वक्त आया है। ईश्वर हमको सन्मति दे।

नई दिल्ली, २७-९-'४७

: ३१ :

भयंकर उपमा

एक भाई, जिनके नामसे जान पडता है कि उनकी मातृ-भाषा हिंदी है, अग्रेजीमे लिखे गए अपने खतमे मुझे इस तरह लिखते है—

"आपने जो लगातार इस तरहकी अपीलें की है कि मुसलमानोको अपने भाई समझो और उनकी हिफाजतकी गारटी दो, ताकि वे यहासे पाकिस्तान न चले जाए, उसके सिलसिलेमें मैं एक उदाहरण देता हू— जाडेके दिनोमें एक बार कोई आदमी कहीं जा रहा था। रास्तेमें उसे एक साप पडा हुआ दिखाई दिया, जो ठडसे ठिठुर गया था। उस आदमीको दया आई और सापको गर्मी पहुचानेके इरादेसे उसने उसे उठाकर अपनी जेबमें रख लिया। गर्मी मिलनेसे साप सचेत हुआ और सबसे पहला काम जो उसने किया वह यह था कि उसने अपने रक्षकके ही शरीरमें अपने जहरीले दात गडा दिए और उसे मार डाला।"

इन भाईने गुस्सेमे आकर इस भयकर उपमाका उपयोग किया है। एक इन्सानको, चाहे वह कितनाही गिरा हुआ हो, जहरीले सापकी उपमा देना और फिर उसके साथ वहशियाना बरताव करना वास्तवमे बुरी बात है। थोडे या ज्यादा लोगोकी गल्तियोकी वजहसे उस धर्मके करोडो इन्सानोको जहरीले साप समझना मुझे हद दरजेका पागलपन जान पडता है। खत लिखनेवाले भाईको याद रखना चाहिए कि ऐसे पागल और कट्टर मुसलमान पडे है, जो हिंदुओके बारेमे यही उपमा

काममे लाते है। मै नही समझता कि कोई भी हिंदू साप कहलाना पसद करेगा।

किसी आदमीको भाई समझनेका यह मतलब नही है कि जब वह दगाबाज साबित हो तब भी उसपर भरोसा किया जाय। और इस डरसे किसी आदमीको और उसके परिवारको मार डालना बुजदिलीकी निशानी है कि वह आदमी दगाबाज साबित हो सकता है। जरा ऐसे समाजका चित्र अपने सामने खडा कीजिए, जिसमें हर आदमी अपने साथीका न्यायाधीश बनता है। मगर हिंदुस्तानके कुछ हिस्सोमे हमारी ऐसी ही करुण स्थिति हो गई है।

आखिरमे मै सापोकी जातिके साथ इन्साफ करनेके लिए लोगोमे फैले हुए एक मामूली वहमको सुधार दू। जानकार लोग कहते है कि ८० फीसदी सांप पूरी तरह निर्दोष होते है और कुदरतके उपयोगी जीवोमे उनकी गिनती की जा सकती है।

नई दिल्ली, ३-१०-'४७

: ३२ :

उदासीका कोई कारण नहीं

वरसगाठकी मुबारकबादीके अनेक तार मेरे पास आए है। उनमेसे एकमे मुझे यह सलाह दी गई है—

"क्या मैं कहूं कि मौजूदा परिस्थितिमें आपको उदास नहीं होना

चाहिए ? मुझे तो लगता है कि जो खून-खराबी आजकल हो रही है, वह ईश्वरी योजनाको हटानेके लिए बुरी ताकतोकी आखिरी कोशिश है। दुनियामें जो विषम परिस्थिति बढती और फैलती जा रही है उसे अहिंसाके द्वारा मिटानेमें हिंदुस्तानको ज्यादा-से-ज्यादा हिस्सा लेना है। ईश्वरी योजनाको पूरी करनेके लिए आज दुनियामें आप अकेले व्यक्ति है।"

यह तार मेरे प्रति प्रेमकी निशानी है, ज्ञानकी नही। आइए, हम इसकी छानबीन करे।

मेरी आजकी मानसिक स्थितिको उदासी कहना गलती है। मैंने सिर्फ सचाईका बयान किया है। मुझमे ऐसा समझने-का झूठा अभिमान नही है कि ईश्वरी योजना सिर्फ मेरे ही द्वारा पूरी हो सकती है। मै ईश्वरके हाथमे, उसकी योजना पूरी करनेके लिए जितना योग्य हो सकता हू, उतना ही अयोग्य क्यो नही हो सकता ? कमजोर प्रजाके प्रतिनिधिके रूपमे भगवानने मुझे साधन भले बनाया हो, मगर आजाद बनी हुई और ताकतवर प्रजाके प्रतिनिधिके रूपमे मै अयोग्य क्यो नही साबित हो सकता ? मुमकिन है कि आखिरके बहुत बडे कामके लिए मुझसे ज्यादा बलवान और ज्यादा दूरदर्शी कोई दूसरा आदमी उस ईश्वरके मनमें हो। मै जानता हू कि ये सब महज कल्पनाए है। ईश्वरकी मर्जी पूरी तरहसे जाननेकी ताकत उसने किसीको नही दी। दयाके इस अपार सागरमें हम सब बूंदके बराबर है। बूद भला सागरको कैसे नाप सकती है ?

बेशक, आदर्श तो यह होना चाहिए कि मै न तो एक सौ

पच्चीस बरस जीनेकी इच्छा रखू और न आजकी विरोधी हालतोको देखकर मरना चाहू। अगर मै आदर्शतक पहुचा होऊ तो मेरी सारी इच्छाए भगवानकी महान् इच्छामे समा जानी चाहिए। मगर आदर्श हमेशा आदर्श ही रहेगा। आदर्श जब सच्चा होता है तब वह आदर्श नही रह जाता। इसलिए इन्सान सिर्फ इतना ही कर सकता है कि वह आदर्शतक पहुचनेमे अपनी कोई कोशिश बाकी न रखे। अपने बारेमें मै इतना दावा कर सकता हू कि मुझमे जितनी भी ताकत है, उसका पूरा उपयोग मै आदर्शके नजदीक पहुचनेमे कर रहा हू।

अगर मैने १२५ बरस जीनेकी अपनी इच्छाको खुले आम जाहिर करनेकी ढिठाई की थी तो इस विषम परिस्थितिमे उतने ही खुले तौरपर यह इच्छा बदलनेकी नम्रता मुझमे होनी ही चाहिए। मैने इससे न कुछ ज्यादा किया, न कम। न इसके पीछे किसी किस्मकी उदासी ही थी। शायद 'लाचारी' शब्द मेरी हालतको ज्यादा सही रूपमे बयान कर सकता है। इस लाचारीकी हालतमे इस क्षणिक और दु खी दुनियासे भगवान मुझे उठा ले, ऐसी पुकार मै जरूर करता हू। मै उससे मागता हू कि जो पागलपन हम लोगोमे इस समय फैल रहा है, उसका साक्षी मुझे न बनाए, फिर भले ही इस पागलपनसे भरा हुआ इन्सान अपनेको मुसलमान, हिंदू या दूसरा कोई भी धर्म माननेवाला कहनेकी ढिठाई क्यो न करता हो। फिर भी मेरी आखिरी प्रार्थना तो यही है और रहेगी, "हे नाथ ! मेरी नही, बल्कि तेरी ही इच्छाका

साम्राज्य इस जगतमे फैले।" अगर भगवानको मेरी जरूरत होगी तो वह अभी कुछ समयतक और इस धरतीपर मुझे रखेगा।

नई दिल्ली, ५-१०-'४७

: ३३ :

एक विद्यार्थीकी उलझन

एक विद्यार्थीने अपने शिक्षकको एक खत लिखा था। उसका नीचेका हिस्सा शिक्षकने मेरी राय जाननेके लिए मेरे पास भेजा है। विद्यार्थीका खत अग्रेजीमे है। उसकी मातृ-भाषा क्या होगी, यह मै नही जानता।

"मुझे दो बातोने घेर लिया है एक तरफसे मेरे देश-प्रेमने और दूसरी तरफसे तेज विषय-वासनाने। इससे मुझमें विरोधी भावनाए पैदा होती है और मेरे निर्णय घडी-घडी बदलते रहते है। मुझे अपने देशका अव्वल-दर्जेका सेवक बनना है। लेकिन साथ ही मुझे दुनियाका आनद भी लूटना है। मुझे यह कबूल करना चाहिए कि ईश्वरमें मेरी श्रद्धा नहीं है, हालाकि कितनी ही बार मुझे ईश्वरका डर मालूम होता है। सच पूछा जाय तो सारा जीवन ही एक समस्या है। मै क्या जानू कि इस जीवनके बाद मेरा क्या होनेवाला है? मैने बहुत-सी जलती चिताए देखी है—आखिरी चिता मैने अपनी मान ली है। जलती चिताके दृश्यने मुझपर भयकर असर पैदा किया। क्या मेरे भी ऐसे ही हाल होगे? यह विचार भी मै सहन नहीं कर सकता। किसी घायलको देखता हू तो मेरे सिरमें चक्कर आने लगता है। बादमें मेरी कल्पना काम करने लगती है और करनी

-है कि तेरे शरीरका भी किसी दिन यही हाल होगा। मैं जानता हूं कि किसी शरीरको इस हालतमेंसे मुक्ति नहीं मिलती। साथ ही, ऐसा लगता है कि मौतके बाद जीवन नहीं है और इसलिए मुझे मौतका डर लगता है।

"इस हालतमें मेरे पास सिर्फ दो ही रास्ते हैं, या तो मैं इस उलझनमें फंसकर जलता रहूं या दुनियाके भोग-विलासमें पड़कर दूसरी बातोंका ख्यालतक न करूं। दूसरे किसीके सामने मैंने यह बात कबूल नहीं की, लेकिन आपके सामने कबूल करता हूं कि मैंने तो दुनियाका आनंद लूटनेका रास्ता ही पकड़ा है।

"यह दुनिया ही सच्ची है और किसी भी कीमतपर उसके मजे लूटने ही हैं। मेरी पत्नी अभी-अभी मरी है। मेरे मनमें उसके लिए प्रेम था। लेकिन मैं देखता हूं कि उस प्रेमकी जड़में उसका मरना नहीं था, बल्कि मेरा यह स्वार्थ था कि उसके मरनेसे मैं अकेला रह गया। मरनेके बाद तो कोई गुत्थी सुलझानेको रहती नहीं और जिंदा आदमीके लिए तो सारी जिंदगी ही एक गुत्थी है। शुद्ध प्रेममें मेरी श्रद्धा नहीं है। जिसे प्रेमके नामसे पहचाना जाता है, वह प्रेम तो सिर्फ विषय-भोगका होता है। अगर शुद्ध प्रेम-जैसी कोई चीज होती तो अपनी पत्नीके बनिस्वत अपने मा-बापमें मेरा आकर्षण ज्यादा होना चाहिए था, लेकिन हालत तो इससे बिल्कुल उलटी थी। मा-बापके बनिस्वत पत्नीमें मेरा आकर्षण अधिक था। यह सच है कि मैं अपनी पत्नीके प्रति सच्चा था। लेकिन उसे मैं यह गारंटी नही दिला सकता था कि उसके मरनेके बाद भी उसकी तरफ मेरा प्रेम बना रहेगा। उसके मरनेके बाद मुझे जो दुःख होगा, वह तो उसके न रहनेसे पैदा होनेवाली मुसीबतोंका दुःख होगा। आप इसे एक तरहकी बेरहमी कह सकते हैं। जो हो, लेकिन सच्ची हालत यही है। अब मेहरबानी करके मुझे लिखिए और रास्ता बताइए।"

खतके इस हिस्सेमें तीन बातें आती हैं। एक, विषय-वासना और देश-प्रेमके बीच खडा होनेवाला विरोध, दूसरी, ईश्वरमें और मरनेके बादके भविष्यमें अश्रद्धा, और तीसरी, शुद्ध प्रेम और विषय-वासनाका द्वंद्व-युद्ध ।

पहली उलझन ठीक ढंगसे रखी मालूम होती है। उसका सार यह है कि विषय-भोगकी इच्छा सच्ची बात है और देश-प्रेम बहते प्रवाहमें खिंच जानेके समान है। यहा देश-प्रेमका अर्थ होगा सत्ता पानेके प्रपचमें पडना, ताकि उसके साथ विषय-वासना पूरी करनेका मेल बैठ सके। इस तरहके बहुतसे उदाहरण मिल सकते हैं। देश-प्रेमका मेरा अर्थ यह है कि प्रजाके गरीब लोगोंके लिए भी हमारे दिलमें प्रेमकी आग जलती हो। यह आग विषय-वासना-जैसी चीजको हमेशा जला डालती है। इसलिए मैं देश-प्रेम और विषय-वासनाके बीचमें कोई झगडा देखता ही नही। उलटे, यह प्रेम हमेशा विषय-वासनाको जीत लेता है। ऐसे विश्व-प्रेमको जो वृत्ति तोड सके, उसे पोसनेका समय भी कहा बच सकता है? इसके खिलाफ जिस आदमीको विषय-वासनाने अपने वशमें कर लिया है, उसका तो नाश ही होता है।

ईश्वरके बारेमें और मरनेके बादके भविष्यके बारेमें अश्रद्धा भी ऊपरकी वासनामेंसे ही पैदा होती है, क्योंकि यह वासना औरत और मर्दको जडसे हिला देती है। अनिश्चय उन्हें खा जाता है। विषय-वासनाके नाश हो जानेपर ही ईश्वरपर रहनेवाली श्रद्धा जीती है। दोनों चीजें साथ-साथ नही रह सकती।

तीसरी उलझनमे पहलीको ही दुहराया गया मालूम होता है। पति और पत्नीके बीच शुद्ध प्रेम हो तो वह दूसरे सब प्रेमोकी अपेक्षा आदमीको ईश्वरके ज्यादा पास ले जाता है। लेकिन जब पति-पत्नीके बीचके प्रेममे विषय-वासना मिल जाती है तब वह मनुष्यको अपने भगवानसे दूर ले जाती है। इसमेसे एक सवाल पैदा होता है अगर औरत और मर्दका भेद पैदा न हो, विषय-भोगकी इच्छा मर जाय, तो शादीकी जरूरत ही क्या रह जाय ?

अपने खतमे विद्यार्थीने ठीक ही कबूल किया है कि अपनी पत्नीकी तरफ उसका स्वार्थभरा प्रेम था। जो वह प्रेम निःस्वार्थ होता तो अपनी जीवन-सगिनीके मरनेके बाद विद्यार्थीका जीवन ज्यादा ऊचा उठता, क्योकि साथीके मरनेके बाद उसकी यादमेसे, पिछडे हुए लोगोकी सेवामे उस भाईकी लगन ज्यादा बढी होती ।

नई दिल्ली, १२–१०–'४७

: ३४ :

एक कड़ुआ खत

एक मुसलमान दोस्त लिखते है —

"मै राष्ट्रीय विचारोवाला एक मुसलमान हू। जिदगीभर—अगर मेरे २१ सालके जीवनको इन शब्दोमे जाहिर करने दिया जाय तो—मैने हिंदू और मुसलमानकी जुबानमें कभी नही सोचा। मगर मेरे बडे

भाई, वालिद और दूसरे रिश्तेदारोने इस वातकी बडी कोशिश की कि मै हिंदू और मुसलमानोमें फर्क करू। अपनी जातिके खिलाफ गद्दारी करनेवाला होनेकी वजहसे जालधरके इस्लामिया कालेजमें मुझे भर्ती नहीं किया गया।

"मेरे वालिद और दूसरे रिश्तेदारोने अप्रेलमें जालधर छोड दिया, मगर मै उनके साथ नही गया, क्योकि पूर्वी पजाव और उससे भी ज्यादा सारे हिंदुस्तानको अपना मै वैसा ही देश मानता था जैसा कि वह दूसरे फिरकेके मेरे दोस्तोके लिए था। मगर अगस्तकी वहशियाना वारदातोने मुझे इतना नाउम्मीद कर दिया है कि मै वयान नहीं कर सकता। जनवरी, १९४६में जब आजाद हिंद फौजके लोगोपर मुकदमा चल रहा था तव जिन लडकोने मेरे साथ जलूस निकाला था, वे भी मेरी जान लेना चाहते थे। आखिरकार मै उनके लिए एक मुसलमान ही था, जिसकी जान लेनेसे वे अपनी जातिके लोगोकी वाहवाही हासिल कर सकते थे। इसलिए मुझे अपनी जान वचानेके लिए दिल्ली भागना पडा। मेरा ख्याल था कि जो लोग पाकिस्तानके वजाय अखड हिंदुस्तानमें यकीन करते है, उनके साथ यहा ऐसा वरताव नहीं किया जायगा। मगर यहाकी हालत और भी वुरी है। जिन दोस्तोके साथ मै यहा ठहरा हू, वे भी मुझे शककी निगाहसे देखते है।

"वरावरी और आजादीके मेरे प्यारे फरिश्ते, अव मुझे वताओ कि मै अपने जमीर (विवेक) के खिलाफ अपने मा-वापके पास, जिदगीभर उनकी हँसीका साधन वननेके लिए पच्छिमी पाकिस्तान चला जाऊ, या हिंदुस्तानमें वधकके वतौर रहू, जहाके लोग, जानवर वने हुए मेरे धर्म-भाइयोके पापोका वदला मुझे मारकर लेना चाहते है।"

ऊपरके खतको मैने थोडा सक्षेप कर दिया है। उसमे कड़ुआहटको छुआ नही गया है। यह मानते हुए कि उस

खतकी वाते सही है, उसमें कडआहटके लिए काफी गुंजाइश है। बेहद विरोधी परिस्थितियोमें ही किसी आदमीकी जाच होती है। भले दिनोके दोस्त बहुतसे होते है। मगर वे किसी कामके नही होते। 'जो जरूरतपर काम आए, वही सच्चा दोस्त है।' क्या एक ही मजहबको माननेवाले लोग आपसमे ठीक उसी तरह नही लडे है, जिस तरह आज हिंदू और मुसलमान लड रहे है? जब आम जनताको इतने बरसोसे लगातार नफरतका पाठ पढाया जाता रहा हो तब उससे इसके सिवा और क्या उम्मीद की जा सकती है कि वह आपसमे कट मरे। अगर खत लिखनेवाले भाई अपनी राष्ट्रीयताको ठीक समझते है तो उन्हे इस आडे समयका सामना करना चाहिए। हमे उन लोगोकी नकल कभी नही करनी चाहिए जो कसौटीके वक्त अपनी श्रद्धा छोड देते है। इसलिए इन खत लिखनेवाले भाईको यह सलाह देते हुए मुझे जरा भी हिचकिचाहट नही होती कि वे अपने पुराने दोस्तोके द्वारा टुकडे-टुकडे कर दिए जानेका खतरा उठाकर भी अपने घर जालंधर लौट जाय। ऐसे शहीदोसे ही हिंदू-मुस्लिम-एकता कायम होगी। अगर वे भाई अपने शब्दोको सच साबित करते है तो मै पहलेसे कह रखता हूं कि उनके मा-बाप खुले दिलसे उनका स्वागत करेगे। हम इन्सानोकी किस्मतमे यही बदा है कि अपराधीके पापोका फल निरपराधीको भोगना पड़े। यही ठीक भी है। निरपराधियोके मुसीबते सहनेकी वजहसे ही दुनिया ऊपर उठती और बेहतर बनती है। इस खुले सत्यको बार-बार

दोहरानेके लिए मेरा आजादी और समताका फरिश्ता होना जरूरी नही है।

नई दिल्ली, १३-१०-'४७

: ३५ :

अकर्ममें कर्म

एक भाई लिखते है

"आपने 'मेरा धर्म' लेखमें लिखा है, 'अकर्ममें कर्म' देखनेकी हालतको मै पहुचा नही हू। इस वचनके मानी कुछ विस्तारसे वताएगे तो अच्छा होगा।"

एक स्थिति ऐसी होती है, जब आदमीको विचार जाहिर करनेकी जरूरत नही रहती। उसके विचार ही कर्म वन जाते है। वह सकल्पसे कर्म कर लेता है। ऐसी स्थिति जब आती है तब आदमी अकर्ममें कर्म देखता है, यानी अकर्मसे कर्म होता है, ऐसे कहा जा सकता है। मेरे कहनेका यही मतलब था। मै ऐसी स्थितिसे दूर हू। उसतक पहुचना चाहता हू। उस ओर मेरा प्रयत्न रहता है।

नई दिल्ली, १६-१०-'४७

: ३६ :

एक पहेली

एक भाई लिखते है--

"मजाकमें भी दो उपनिवेशोंके बीच लड़ाई होनेकी चर्चा न उठे तो अच्छा। मगर जब आपने इसका जिक्र करते हुए यहातक कहा है कि इन दो राज्योके बीच अगर लडाई हो तो यहाके मुसलमानोको पाकिस्तानके खिलाफ लडनेके लिए तैयार रहना चाहिए, तब सवाल यह उठता है कि उस हालतमें पाकिस्तानके हिदुओ और सिक्खोका भी अपने राज्यकी तरफ यही फर्ज होगा या नही? अगर साप्रदायिक सवालोपर ही लडाई हो तो फर्जको समझानेकी चाहे जितनी कोशिश की जाय, वफादारीका टिकना नामुमकिन मालूम होता है। मगर साप्रदायिक सवालोको छोडकर और किसी कारणसे लडाई हो तो यह तो नहीं ही कहा जा सकता कि यहाके मुसलमानो और पाकिस्तानके गैर-मुसलमानोको पाकिस्तानका ही विरोध करना चाहिए।"

हमारे दो राज्योके बीच लडाईकी सभावनाकी चर्चा मजाकमे तो उठाई ही नही जा सकती। 'भी' क्रिया-विशेषण यहां बेमौजूं है, क्योकि ऐसी सभावना सचमुच मालूम पडे, तभी इसपर चर्चा करना फर्ज हो जाता है। और तब भी चर्चा न करना बेवकूफी कहा जायगा।

जो नियम हिदुस्तानके मुसलमानोके लिए है, वही पाकिस्तानके गैर-मुस्लिमोपर भी लागू होगा। मै तो अपने भाषणोमे और यहा होनेवाली चर्चाओमे अपनी यह राय जाहिर कर चुका हूं।

बेशक, यह राय काफी सोच-विचारके बाद कायम हुई है। वफादारी गैर-कुदरती तरीकेसे खडी नही की जा सकती। अगर परिस्थितियोसे वह पैदा नही होती तो वह कभी भी पैदा नही होगी, ऐसा कहा जा सकता है। ऐसे बहुतसे लोग है, जो मानते है कि ऐसी वफादारी मुमकिन ही नही है और इसलिए वे मेरी रायको हँसीमे उडा देते है। मेरी समझमे इसमे हँसने लायक कुछ भी नही है। हिंदुस्तानके मुसलमान पाकिस्तानके मुसल्मानोके खिलाफ तभी लड सकेगे, जब वे ऐसा करना अपना फर्ज समझेगे। यानी जब उनको यह साफ महसूस होगा कि उनके साथ तो हिंदुस्तानमे इन्साफका बरताव होता है और पाकिस्तानमे हिंदू वगैरह अल्पसख्यकोके साथ वेइन्साफी हो रही है। ऐसी हालत मेरी कल्पनासे बाहर नही है।

इसी तरह अगर पाकिस्तानके हिंदू वगैरह गैर-मुस्लिमोको साफ तौरपर मालूम पडे कि उनके साथ इन्साफ हो रहा है, वे सुखसे और बेफिकरीसे वहा रहते है और हिंदुस्तानके मुसलमानोके साथ वेइन्साफी होती है, तो पाकिस्तानकी हिंदू वगैरह अल्पसख्यक जातिया कुदरतन हिंदुस्तानके हिंदुओसे लडेगी और ऐसा करनेके लिए किसीको उन्हे समझानेकी जरूरत ही नही पडेगी।

हमारे देशकी बदकिस्मतीसे हिंदुस्तान और पाकिस्तान नामसे उसके जो दो टुकडे हुए उसमे मजहबको ही कारण बनाया गया है। उसके पीछे आर्थिक और दूसरे कारण भले रहे हो, मगर उनकी वजहसे यह बटवारा नही हुआ होता।

आज हवामे जो जहर फैला हुआ है, वह भी उन्ही साम्प्रदायिक कारणोसे ही पैदा हुआ है। धर्मके नामपर लूट-मार होती है, अधर्म होता है। ऐसा न हुआ होता तो अच्छा होता, ऐसा कहना अच्छा तो लगता है, मगर उससे वास्तविकताको बदला नही जा सकता।

यह सवाल कई बार पूछा गया है कि दोनोके बीच लडाई होनेपर क्या पाकिस्तानके हिंदू, हिंदुस्तानके हिंदुओके साथ और हिंदुस्तानके मुसलमान पाकिस्तानके मुसलमानोके साथ लडेगे ? मै मानता हू कि ऊपर बतलाई हुई हालतमे वे जरूर लडेगे। मुसलमानोकी वफादारीके वचनोपर भरोसा करनेमे जितना जोखिम है, उसके बजाय भरोसा न करनेमे ज्यादा है। भरोसा करनेमे भूल हो और खतरेका सामना करना पडे तो बहादुरीके लिए यह एक मामूली बात होगी।

उपयुक्त ढगपर इस सवालको दूसरी तरहसे यो रखा जा सकता है कि क्या सत्य और न्यायके खातिर हिंदू हिंदूके खिलाफ और मुसलमान मुसलमानके खिलाफ लड़ेगा ? इसका जवाब एक उलटा सवाल पूछकर दिया जा सकता है कि क्या इतिहासमे ऐसे उदाहरण नही मिलते ?

साम्प्रदायिक सवालोके सिवा दूसरे सवालोको लेकर भी दो राज्योके बीच लडाई हो सकती है, मगर यहा इसपर विचार करना फिजूल है। हिंदुस्तानके मुसलमान और पाकिस्तानके गैर-मुस्लिम पाकिस्तानके खिलाफ लडे, यह बात मेरी कल्पनाके बाहर है।

इस सवालको हल करनेमे सबसे बडी उलझन यह है कि

सत्यकी दोनो ही राज्योमे उपेक्षा की गई है, मानो सत्यकी कोई कीमत ही न हो। ऐसी विषम स्थितिमे भी हम उम्मीद करे कि सत्यपर अटल श्रद्धा रखनेवाले कुछ लोग हमारे देशमे जरूर है।

नई दिल्ली, १७-१०-'४७

: ३७ :

प्रौढ़-शिक्षणका नमूना

चर्खा-जयतीके बारेमे सैकडो तार और पत्र मेरे पास आए थे। उनमेसे नीचेके पत्रने, जो इदौरकी प्रौढ-शिक्षण-सस्थाकी तरफसे मिला है, मेरा ध्यान खीचा है—

"आजके शुभ अवसरपर हजारो बडी-बडी कीमती भेंटें, बधाईके तार और खत आपकी सेवामें पहुंचे होगे। हिंदुस्तानके कोने-कोनेमें आपकी जन्मतिथि खुशीसे मनाई जा रही है। हर जगहका खुशी मनानेका ढग जरूर कुछ-न-कुछ निराला होगा। हर एक यह कोशिश कर रहा होगा कि दूसरोसे बढ जाय, जशन मनानेमें जीत उसीकी हो। इन सब बातोको देखते हुए हमारी यह हिम्मत नहीं पडती कि किसी तरहकी भेंट यहाके प्रौढ साक्षरता-प्रचारके कार्यकर्ताओकी तरफसे आपकी सेवामें पेश की जाय। लेकिन फिर भी इस शुभ अवसरको जिस तरहसे यहा मनाया गया है उसे लिखे बिना नहीं रहा जा सकता। आशा है कि हमारे इस कार्यको ही भेंट समझकर आप स्वीकार करेंगे।

"ता० २-१०-'४७ से ता० ८-१०-'४७ तक जयती मनानेकी योजना इस तरह रक्खी गई है कि इन सात दिनोमें ८० गावोके लोग मिलकर

आधाशीशीके झाडोको जड़से उखाड़कर नष्ट कर दें। इन झाड़ोंने सारे जंगलको घेरकर पशुओंके चारेका नाश कर दिया है। उनको उखाड़कर पशुओंके जीवनको बचानेके लिए, बिना किसी भेदभावके, इस अवसरसे फायदा उठाते हुए एक बुरी चीजको यहांसे दूर कर दें। इस योजनाके मुताबिक २ तारीखको छोटे-छोटे बच्चोंसे लेकर ६०-७० सालके बूढोंने, एक मामूली गरीबसे लेकर सबसे ऊंचे धनवानने और एक छोटे नौकरसे लेकर बडे-से-बडे सर्कलके अफसरने इस कामको अपनाया और दोपहरसे पहले आधाशीशीके बड़े-बडे खेतोंके पौधोंको उखाडकर साफ कर दिया। इससे चारेका बचाव, आधाशीशीके आगे बढनेकी रोक और उसका खात्मा हफ्तेके खतम होनेके पहले हो जायगा। बजाय जलूस निकालनेके यहांकी जनताके दिलमें प्रौढ-शिक्षाद्वारा यह बैठाया जा रहा है कि ऐसे अवसरपर कोई ऐसा काम करना चाहिए, जो किसी भी जीवनके लिए लाभदायक हो। किसी भी किस्मकी बुराईके बीजको जडमूलसे खोदनेका प्रयत्न प्रौढ-शिक्षाकी तरफसे किया जा रहा है।

"ऊपरकी जो भेंट सेवामें पेश की जा रही है, उसपर लोग चाहे हंस लें, लेकिन हम पूरे दिलसे यह विश्वास करते है कि आप हमें निराश न करेंगे और इसे जरूर स्वीकार करेंगे।"

मै चरखा-जयंती मनानेका यह एक अच्छा नमूना समझता हूं। सूत निकालनेके अर्थमे चरखा भले ही न चला, लेकिन चरखेमे जो चीजे आ जाती है, उनमेसे आधाशीशीके पेडोको जडसे उखाड डालना अवश्य आता है। उसमे परमार्थ है। ऐसे कामोमे सहयोग होता है और ऐसे काम सब छोटे-बडे निरंतर करते रहे तो उससे सच्चा शिक्षण मिलता है और सुंदर परिणाम निकलता है।

नई दिल्ली, १८-१०-'४७

: ३८ :

रंग-भेदका निवारण

[रेडियो-विभागके गुजराती भाइयोके साथ सवाल-जवाब]

सवाल—सयुक्त राष्ट्र सघ (यू० एन० ओ०) दक्षिण अफ्रीकामे रहनेवाले हिंदुस्तानियोके साथ न्याय करनेमें असफल रहे तो दक्षिण अफ्रीकाके हिंदुस्तानियोको क्या करना चाहिए ?

जवाब—सत्याग्रह। इसमे नाकामयाव होनेकी कोई वात ही नही है। यह मेरी कल्पनाके वाहरकी वात है। मेरा यह पक्का विश्वास है कि सत्याग्रह कभी असफल होता ही नही।

सवाल—सयुक्त राष्ट्र सघ अगर दक्षिण अफ्रीकामें रहनेवाले हिंदुस्तानियोके सवालोको इन्साफसे हल करनेमें नाकामयाव सावित हो तो सस्थाके भविष्यपर इसका क्या असर हो सकता है ?

जवाब—अगर ऐसा होगा तो सयुक्त राष्ट्र सघकी साख चली जायगी।

सवाल—दुनियापर इसका क्या असर होगा ?

जवाब—यह कौन जानता है ? दुनियापर इसका क्या असर होगा, यह मै तो नही जानता।

सवाल—दुनियामें शाति कायम करनेके लिए जातिभेद और रंगभेद मिटाना जरूरी है। जो लोग इस वातको मानते हुए भी रगभेदकी बुराईको दूर करनेके लिए कोई कोशिश नहीं करते, उनके लिए आपका क्या कहना है ?

जवाब—हा, रगभेद दूर करनेकी जरूरत तो है ही।

लेकिन जो लोग इसे जरूरी मानते हुए भी कोशिश नही करते, वे कमजोर और निकम्मे है। उन्हे कुछ करना नही है।

सवाल--मानव-समाजमेंसे रंगभेद दूर करनेके लिए आपकी क्या सलाह है ?

जवाब--इसका बहुत कुछ हल हिंदुस्तानियोके हाथमे है। हिंदुस्तान सीधे रास्ते आ जाय तो सब कुछ अच्छा हो जाय।

सवाल--आज जो हिंदुस्तानी हिंदुस्तानके बाहर दुनियाके अलग-अलग देशोमें रहते है, उनके लिए आप क्या संदेश देते है ?

जवाब--जहा-जहा हिंदुस्तानी रहे, वहा-वहा उन्हे अपना नूर दिखाना चाहिए। अपनी शक्तिया और गुण बताने चाहिए। एक भी हिंदुस्तानीको ऐसा काम नही करना चाहिए जिससे हिंदुस्तानको नुकसान पहुचे।

नई दिल्ली, २०-१०-'४७

: ३९ :

गुरुदेवके अमृतभरे वचन

गुरुदेवने अपने दस्तखत देते हुए जो भाव प्रकट किए थे, उनके संग्रहमेंसे नीचेके वचन एक बंगाली भाईने भेजे है। उन्हे मूल भाषामे, हिंदुस्तानी अर्थके साथ नीचे देता हू:

से लड़ाई ईश्वरेर विरुद्धे लड़ाई
जे युद्धे भाईके मारे भाई।

वह लडाई ईश्वरके ही खिलाफ है जिसमे भाई, भाईको मारता है।

जे करे धर्मेर नामे विद्वेष सचित
ईश्वरके अर्घ्य हते से करे वचित।

जो धर्मके नामपर दुश्मनी पालता है, वह भगवानको अर्घ्यसे वचित करता है।

जे आधारे भाईके देखिते नाहि पाय
से आधारे अध नाहि देखे आपनाय।

जिस अधेरेमे भाई भाईको नही देख सकता, उस अधेरे-का अधा अपनेको ही नही देख सकता।

ईश्वरेर हास्यमुख देखिवारे पाइ
जे आलोके भाइके देखिते पाय भाइ।
ईश्वर प्रणामे तवे हात जोड हय
जखन भाइयेर प्रेमे मिलाइ हृदय॥

जिस उजेलेमे भाई-भाईको देख सकता है, उसीमें ईश्वरका हँसता मुह दिखाई पड सकता है। जब भाईके प्रेममे दिल पसीज जाता है, तभी ईश्वरको प्रणाम करनेके लिए जाते हुए हाथ जुड जाते है।

नई दिल्ली, २३-१०-'४७

: ४० :

अहिंसा कहां, खादी कहां ?

काठियावाडसे एक भाई लिखते है—

"दूसरे सूबोकी तरह यहा काठियावाडमें भी खादी और अहिंसापरसे अपनी श्रद्धा हटा लेनेवालोकी तादाद बढती जा रही है। राजनीतिमें अहिंसा कैसे चल सकती है, ऐसी दलीलें पेश करनेवाले आज कांग्रेसी गांधी-भक्त भी है।"

इस खतमे इस तरहकी बहुत-सी बाते लिखी है, मगर मैंने तो सिर्फ मुद्देकी बात उसमेसे निकाल ली है।

इस छोटेसे वाक्यमे तीन विचारदोष है। मै पहले कई बार समझा चुका हू कि काठियावाड या दूसरे प्रदेशोने अहिसामे या खादीमे श्रद्धा रखी ही नही थी। मैंने यह मानकर अपने आपको धोखा दिया था कि लोग अहिसाका पालन करते है और खादीको उसकी निशानीकी तरह अपनाते है। अहिंसाके नामपर लोगोने कमजोरोकी शाति रखी, मगर उनके दिलोसे तो हिसा कभी गई ही नही थी। अब तो इस बातको हम अच्छी तरहसे देख सकते है। काठियावाडमे राम नही है, यह बात तो जब मै राजकोट-प्रकरणके सिलसिलेमे वहा गया था, तभी साफ मालूम हो गई थी। इसलिए यह कहनेमे कोई सार नही है कि आज काठियावाडकी श्रद्धा कम होती जा रही है।

राजनीतिमे अहिसा नही चल सकती, ऐसा कहना भी ठीक नही है। जब आप परदेशी हुकूमतके खिलाफ लडे तब वह राजनीति नही थी तो और क्या था ? आज तो राज-

नीति बहुत थोडी है । आज धर्मके नामपर लूट-पाट होती है । लोगोने परदेशी हुकूमतके खिलाफ लडनेमे जो शाति रखी, वह आज मानो खतम हो गई है ।

तीसरा दोष यह है कि इसमे काग्रेसी और गाधी-भक्तोके बीच भेद किया गया है । इस भेदको मै बिलकुल बेबुनियाद मानता हू । अगर कोई गाधी-भक्त हो तो वह मै ही हू । मगर मुझे उम्मीद है कि ऐसा घमड मुझमे नही है । भक्त तो भगवानके होते है । मै तो अपनेको भगवान नही मानता । फिर मेरे भक्त कैसे ? और यह कैसे कहा जा सकता है कि अपने आपको गाधी-भक्त कहनेवाले लोग काग्रेसी नही है । काग्रेसके ऐसे अनगिनत सेवक है जो उसके चार आना सदस्य भी नही है । उनमेसे मै भी एक हू, इसलिए यह भेद कृत्रिम है ।

आज देशमे कई चीजें चल रही है, उनमे मेरा जरा भी हिस्सा नही है, यह बात मुझे जोरोमे कहनी चाहिए। मै कह तो चुका हू कि यह छिपी हुई बात नही है कि काग्रेसने हुकूमत सभाली, तबसे वह अहिंसाको तिलाजलि दे चुकी है । मेरी रायमे, काग्रेस-सरकारने खुराक और कपडेपर जिस तरह अकुश रखा है, वह घातक है । मेरी चले तो मै अनाजका एक दाना भी बाहरसे न खरीदू । मेरा विश्वास है कि हिदुस्तानमें आज भी काफी अनाज है । सिर्फ कट्रोलकी वजहसे देहातके लोग उसे छिपाकर रखनेकी जरूरत महसूस करनेको लाचार हुए है । अगर लोग मेरी बात मानते होते तो हिदू, सिख और मुसलमानोके बीच कभी लडाई नही होती । साफ बात यह है कि मेरी बातकी आज कोई कीमत नही रही । मेरी

आवाजकी कीमत अब अरण्य-रोदनके समान हो गई है।

खादीको अहिंसासे अलग करे तो उसके लिए थोड़ी जगह जरूर है, मगर अहिंसाकी निशानीके रूपमे जो उसका गौरव होना चाहिए, वह आज नही है। राजनीतिमे हिस्सा लेनेवाले जो लोग आज खादी पहनते है, वे रिवाजकी वजहसे ऐसा करते है। आज जय खादीकी नही, बल्कि मिलके कपडेकी है। हम मान बैठे है कि अगर मिले न हो तो करोडो इन्सानोको नगा रहना पडे। इससे बडा भ्रम और क्या हो सकता है? हमारे देशमे काफी कपास है, करघे है, चरखे है, कातने-बुननेकी कला है, फिर भी यह डर हमारे दिलोमे घर कर गया है कि करोडो लोग अपनी जरूरत पूरी करनेके लिए कातने-बुननेका काम अपने हाथमे नही लेगे। जिसके दिलमे डर समा गया है, वह उस जगह भी डरता है, जहा डरका कोई कारण नही होता। और डरसे जितने लोग मरते है, उतने मौतसे या रोगसे नही मरते।

नई दिल्ली, २४–१०–'४७

: ४१ :

नए विश्वविद्यालय

आजकल देशमे नए विश्व-विद्यालय कायम करनेकी आंधी-सी उठ खड़ी हुई है। गुजरातको गुजराती भाषाके लिए, महाराष्ट्रको मराठीके लिए, कर्नाटकको कन्नडके लिए, उडीसाको उडियाके लिए और आसामको आसामी भाषाके लिए विश्व-

विद्यालय चाहिए। मुझे लगता है कि अगर सूबोकी इन सपन्न भाषाओ और उन्हे बोलनेवाले लोगोको पूरी-पूरी तरक्की करना हो तो ऐसे विश्व-विद्यालय होने ही चाहिए।

लेकिन ऐसा मालूम होता है कि इन विचारोपर अमल करनेमे जरूरतसे ज्यादा उतावलापन दिखाया जा रहा है। इसके लिए सबसे पहले भाषावार सूबोकी रचना की जानी चाहिए। उनका राज-तंत्र अलग होना चाहिए। बबई सूबेमे गुजराती, मराठी और कन्नड तीन भाषाए बोली जाती है। मद्रासके सूबेमे तामिल, तेलगू, मलयाली और कन्नड चार भाषाएं बोली जाती है। आंध्र देशका अपना अलग विश्व-विद्यालय है। उसे कायम हुए थोडा समय हो गया, लेकिन उसने काफी तरक्की की है ऐसा नही कहा जा सकता। अनामली विश्व-विद्यालय तामिल भाषाके लिए माना जा सकता है, लेकिन मै नही समझता कि उससे तामिल भाषाका पोषण होता है या उसका गौरव बढा है।

नए विश्व-विद्यालयोके लिए ठीक-ठीक वातावरण होना चाहिए। उन्हे जमानेके लिए ऐसे स्कूल और कालेज होने चाहिए, जो अपने-अपने प्रान्तकी भाषाओके जरिए तालीम दे। तभी विश्व-विद्यालयका पूरा वातावरण उत्पन्न हुआ माना जा सकता है। विश्व-विद्यालय चोटीकी शिक्षण-सस्था है, लेकिन अगर नीव मजबूत न हो तो उसपर इमारतकी मजबूत चोटी खडी करनेकी आशा नही रखी जा सकती।

हालाकि हम राजनैतिक दृष्टिसे आजाद है, फिर भी पश्चिमके प्रभावसे अभी आजाद नही हुए है। जो यह मानते है

कि पश्चिममे ही सब कुछ है और हर तरहका ज्ञान वहीसे मिल सकता है, उनसे मुझे कुछ नही कहना है। न मेरा यही विश्वास है कि पश्चिममे हमे कोई अच्छी चीज मिल ही नही सकती। वहा क्या अच्छा है और क्या बुरा है, यह समझने लायक प्रगति अभी हमने नही की है। अभी यह नही कहा जा सकता कि विदेशी हुकूमतसे आजाद हो गए है इसलिए हम विदेशी भाषा या विदेशी विचारोके असरसे भी आजाद हो गए है। क्या यह समझदारीकी बात नही होगी, क्या देशके प्रति हमारे फर्जका यह तकाजा नही है कि नए विश्व-विद्यालय कायम करनेके पहले हम थोडी देर ठहरे और अपनी नई मिली हुई आजादीके जीवन देनेवाले वातावरणमे कुछ सोचे? विश्व-विद्यालय सिर्फ पैसोसे या बडी-बडी इमारतोसे नही बनते। विश्व-विद्यालयोके पीछे जनताकी जाग्रत रायका होना सबसे जरूरी है। उनके लिए पढानेवाले काबिल शिक्षकोकी जरूरत है। उनके कायम करनेवाले लोगोमे काफी दूरदेशी होनी चाहिए।

मेरे विचारसे विश्व-विद्यालय कायम करनेके लिए पैसेका इन्तजाम करनेका काम लोकशाही हुकूमतका नही है। अगर लोग उन्हे कायम करना चाहेगे तो वे उनके लिए पैसे भी देगे। लोगोके पैसेसे कायम किए जानेवाले विश्व-विद्यालय देशकी शोभा बढाएगे। जिस देशका राजकाज विदेशियोके हाथमे होता है, वहा सब कुछ ऊपरसे टपकता है और इसलिए लोग दिनोदिन पराधीन या गुलाम बनते जाते है। जहा जनताकी हुकूमत होती है, वहा हर चीज नीचेसे ऊपर उठती है और

इसलिए वह टिकती है, शोभा पाती है और लोगोकी ताकत वढाती है। जिस तरह अच्छी जमीनमे वोया हुआ वीज दस गुनी उपज देता है उसी तरह विद्याकी उन्नतिके लिए खर्च किया हुआ पैसा कई गुना लाभ पहुचाता है। विदेशी हुकूमतके मातहत कायम किए गए विश्व-विद्यालयोने इससे उलटा काम किया है। उनका दूसरा कोई नतीजा हो भी नही सकता था। इसलिए हिंदुस्तान जवतक नई मिली हुई आजादीको अच्छी तरह पचा नही लेता तवतक नए विश्वविद्यालय कायम करनेमे मुझे वडा डर मालूम होता है।

इसके अलावा, हिंदू-मुसलमानोके झगडेने ऐसा भयकर रूप ले लिया है कि आज पहलेसे यह कहना मुश्किल हो गया है कि हम कहा जाकर रुकेंगे। मान लीजिए कि अनहोनी वात हो जाय और हिंदुस्तानमे सिर्फ हिंदू और सिक्ख ही रहे और पाकिस्तानमे सिर्फ मुसलमान, तो हमारी शिक्षा जहरीला रूप ले लेगी। अगर हिंदू, मुसलमान और दूसरे धर्मके लोग हिंदुस्तानमे भाई-भाई वनकर रहेगे तो स्वभावत हमारी शिक्षाका सौम्य और सुदर रूप होगा। या तो हमारे देशमे अलग-अलग धर्मोके लोगोके दोस्ती और भाईचारेसे रहते आनेके कारण जो मिली-जुली सुदर सभ्यता पैदा हुई है, उसे हम मजवूत वनाएगे और ज्यादा अच्छा रूप देंगे, या फिर हम ऐसे समयकी खोज करेगे जव हिंदुस्तानमे सिर्फ हिंदू-धर्मके लोग ही रहते थे। इतिहासमे ऐसा कोई समय शायद न मिल सके। लेकिन ऐसा कोई समय मिला और हम

उसके पीछे चले तो हम कई सदी पीछे हट जायगे और दुनिया हमसे नफरत करेगी और हमे कोसेगी। मिसालके लिए, अगर हम इतिहासके मुगलकालको भूलनेकी वेकार कोशिश करेगे तो हमे दिल्लीकी, दुनियामे सवसे अच्छी जामा मसजिदको भूल जाना होगा, या अलीगढकी मुस्लिम यूनिवर्सिटीको भूलना होगा, या दुनियाके सात अचरजोमेसे एक आगराके ताजको, या मुगल-कालमे वने हुए दिल्ली और आगराके वडे-वडे किलोको भूलना पडेगा । तव हमे उसी दृष्टिसे अपना इतिहास फिरसे लिखना होगा। आजका वातावरण सचमुच ऐसा नही है जिसमे हम इस वारेमे किसी सही नतीजेपर पहुच सके। अपनी दो महीनेकी आजादीको अभी हम गढनेमे लगे है। हम नही जानते कि आखिरमे वह क्या रूप लेगी। जवतक हम ठीक-ठीक यह नही जान लेते तवतक अगर हम मौजूदा विश्व-विद्यालयोमे ही भरसक फेर-फार करे और आजकी शिक्षण-सस्थाओमे आजादीके प्राण फूके तो इतना काफी होगा । इस तरह हमे जो अनुभव होगा, वह नए विश्व-विद्यालय कायम करनेमे हमारी मदद करेगा।

अव रही वात वुनियादी तालीमकी। इस तालीमको शुरू हुए अभी आठ वरस हुए है। इसलिए उसके अमलमे जो अनुभव हुआ है, वह हमे मैट्रिकके दर्जेसे आगे नही ले जाता। फिर भी जो लोग इसके प्रयोगमे लगे है, उनके मनमे वुनियादी तालीमका विकास होता ही रहता है। जिस सस्थाके पीछे आठ सालका ठोस अनुभव है, उसकी सिफारिशोको

कोई भी शिक्षाशास्त्री ठुकरा नही सकता। हमे यह ध्यान रखना चाहिए कि यह बुनियादी तालीम देशके वातावरणमेसे पैदा हुई है और वह देशकी जरूरतोको पूरा कर सकती है। यह वातावरण हिदुस्तानके सात लाख गावोमे और उनमें रहनेवाले करोडो लोगोमें छाया हुआ है। उनको भुलाकर आप हिदुस्तानको भी भूल जायगे। सच्चा हिदुस्तान शहरोमें नही, बल्कि इन सात लाख गावोमे बसा है। शहर विदेशी हुकूमतकी जरूरते पूरी करनेके लिए खडे हुए थे। आज भी वे पहलेकी तरह निभ रहे है, क्योकि विदेशी हुकूमत हिदुस्तानसे चली गई, लेकिन उसका असर अभी बना हुआ है—इतनी जल्दी वह जा भी नही सकता।

यह लेख मै नई दिल्लीमे लिख रहा हू। यहा बैठे-बैठे मै गावोका क्या खयाल कर सकता हू? जो बात मुझपर लागू होती है, वही हमारे प्रधान-मडलपर भी लागू होती है। फर्क यही है कि उसपर यह विशेष तौरसे लागू होती है।

यहा हम बुनियादी तालीमके खास-खास उसूलोपर विचार करे—

(१) पूरी शिक्षा स्वावलबी होनी चाहिए। यानी आखीर-मे पूजीको छोडकर अपना सारा खर्च उसे खुद निकालना चाहिए।

(२) इसमे आखिरी दरजेतक हाथका पूरा-पूरा उपयोग किया जायगा। यानी विद्यार्थी अपने हाथोसे कोई-न-कोई उद्योग-धधा आखिरी दरजेतक करेगे।

(३) सारी तालीम विद्यार्थियोकी सूबेकी भाषा द्वारा दी जानी चाहिए ।

(४) इसमे साप्रदायिक धार्मिक शिक्षाके लिए कोई जगह नही होगी, लेकिन बुनियादी नैतिक तालीमके लिए काफी गुजायश होगी ।

(५) यह तालीम, फिर उसे बच्चे ले या बडे, औरत ले या मर्द, विद्यार्थियोके घरोमे भी पहुचेगी ।

(६) चूकि इस तालीमको पानेवाले लाखो-करोडो विद्यार्थी अपने आपको सारे हिंदुस्तानके नागरिक समझेगे, इसलिए उन्हे एक अतर्प्रातीय भाषा सीखनी होगी । सारे देशकी यह एक भाषा नागरी या उर्दूमे लिखी जानेवाली हिंदुस्तानी ही हो सकती है । इसलिए विद्यार्थियोको दोनो लिपिया अच्छी तरह सीखनी होगी ।

इस बुनियादी विचारके बिना या इसको ठुकराकर जो नए विश्वविद्यालय कायम किए जायगे वे मेरे विचारसे देशको कोई फायदा नही पहुचाएगे, उलटे नुकसान ही करेगे । इसलिए सब शिक्षा-शास्त्री इस नतीजेपर पहुचेगे कि नए विश्वविद्यालय खोलनेसे पहले थोडी देर ठहरना और सोच-विचार करना जरूरी है ।

नई दिल्ली, २५-१०-'४७

: ४२ :

दोनों लिपियां क्यों ?

रैहानावहन तैयवजी लिखती है

"१५ अगस्तके बाद दो लिपियोके बारेमें मेरे खयाल बिलकुल बदल गए और अब पक्के हो गए है। मेरे खयालसे अब वक्त आ गया है कि इस दो लिपिग्रोके सवालपर खुल्लमखुल्ला और आम तौरसे साफ-साफ चर्चा हो। इसलिए अगर आप ठीक समझें तो इस खतको 'हरिजन'में छापकर उसपर चर्चा करें।

"जबतक हिंदुस्तान अखड था और उसे अखड रखनेकी उम्मीद थी तबतक नागरी लिपिके साथ उर्दू लिपिको चलाना मै उचित—बल्कि जरूरी—मानती थी। आज हिंदुस्तान, पाकिस्तान दो जुदे राज्य बन गए है (मुसलमानोकी निगाहमें तो दो जुदे राष्ट्र)। हिदुस्तानी हिंदुस्तानकी राष्ट्रभाषा नागरी हिंदुस्तानकी खास और मान्य लिपि—फिर नागरीके साथ उर्दूके गठबधनकी क्या जरूरत है? इस सवालपर मै बराबर विचार करती रही हू और अब मेरा दृढ विश्वास हो गया है कि हिंदुस्तानीपर उर्दू लिपि लादनेमें इतना ही नही कि कोई फायदा नहीं, बल्कि सख्त नुकसान है। मै मानती हू कि

"१ हिंदू-मुस्लिम-ऐक्य और मैत्री, भाषा या लिपिसे नहीं हो सकती—सिर्फ सामाजिक मेल-जोलसे हो सकती है। यह चीज मै जीवन-भर देखती आई हू। मुसलमान खुद यही कहते आए है और अब भी कहते है। साथ मिलने-जुलने, रहने-सहने, खाने-पीने, खेलने-कूदने, कामकाज करनेसे ही ऐक्य बढ सकता है। उर्दू लिपि सामाजिक मेल-जोलकी जगह कभी नहीं ले सकती।

"२ मुसलमानोको अगर आप वफादार हिदुस्तानी बनाना चाहते

हं तो उनमें और बाकीके हिंदुस्तानियोमें अब कोई फर्क नहीं करना चाहिए। अगर वे हिंदुस्तानमें रहना चाहते हैं तो और हिंदुस्तानियोकी तरह रहें। हिंदुस्तानी सीखें, नागरी सीखें। अगर उर्दूका आग्रह हो तो बेशक उन्हें उर्दू सीखनेकी सहूलियतें दी जायं। मगर उन्हें खुश करनेके खातिर हिंदुस्तानकी सारी जनतापर उर्दू लिपि क्यो लादी जाय? इसमें मुझे सख्त अन्याय नजर आता है और मैं इसके बिलकुल खिलाफ हूं। गैर-मुसलमानोपर यह अन्याय, कि उन्हें फिजूल एक इतनी मुश्किल, दोषपूर्ण और हिंदुस्तानीके लिए निकम्मी--(उर्दूलिपिमें साहित्यिक हिंदुस्तानी लिखना महा कठिन है, क्योकि सस्कृत शब्दोकी बडी तोड़-मरोड करनी पडती है।)--लिपि सीखनेमें अपनी शक्ति खर्च करनी पडती है और मुसलमानोपर यह अन्याय कि उन्हें अपना दुराग्रह छोडनेका आप कोई मौका ही नहीं देते! उनकी बेजा माग पूरी करके आप उनमें और अन्य अल्पसख्यकोमें एक कृत्रिम फर्क पैदा कर देते हैं। इससे गैर-मुसलमानोको चिढनेका हक मिलता है और मुसलमानोको अपनी अलग-अलग जमात बनाकर बैठ जानेका मौका मिलता है। (इस चीजका सबूत मेरा अपना खानदान देता है।) अगर आपने उर्दू लिपि भी चलाई तो मुसलमान सदा हिंदमें परदेशी बनकर रहेंगे और कामचलाऊ नागरीसे सतोष मानकर अपना सारा ही व्यवहार उर्दूमें चलाएगे। यह मेरा अनुभवजन्य, इसलिए, दृढ विश्वास है। बापूजी! गुस्ताखी माफ—आप लोग मुसलमानोसे इतने अलग रहे हैं कि आपको उनके मानसकी बिलकुल खबर नही। यही वजह है कि पाकिस्तान हो गया। और मुझे यकीन है कि अगर आपने नागरीके साथ उर्दूको भी राष्ट्रलिपि बना लिया तो आप हिंदुस्तानके भीतर एक दूसरा पाकिस्तान खडा कर देंगे।

"३. मै मानती हू कि जो शक्ति आप लोगोको उर्दूलिपिके प्रचारमें, हर किताबकी द्विलिपि बनानेकी तजवीजोमें, कातिब, ब्लॉक्स और छपाईकी तोहमतोमें खर्च करनी पडती है सो अब खरे महत्त्वके कामोमें लगानी

चाहिए। हमें हिंदुस्तानी भाषा बनानी है, कोष तैयार करने हैं, साहित्य खडा करना है, उर्दू लिपिके आग्रहसे हमारा बोझ चौगुना हो जाता है, काममें रुकावटें पैदा होती है और वक्त फिजूल बिगडता है। इसमें शक नहीं कि उर्दू-हिंदी दोनो जाने बिना हिंदुस्तानी बनाना अशक्य है। लिहाजा प्रचारकोको, लेखकोको, हमारे प्रचारक-मदरसोमें नागरी-उर्दूका ज्ञान होना जरूरी है। लेकिन आम जनताको उर्दू लिपिसे क्या गरज ? उसकी जबान हिंदुस्तानी हो तो बिलकुल काफी है। पूज्य प्यारे बापूजी, मैंने आप लोगोकी सारी दलीलें बडे ध्यानसे सुनी हैं और एक भी गले नहीं उतरती। इसलिए आज यह चर्चा कर रही हू। हम हिंदुस्तानियोका यही सूत्र रहे—हमारी राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी, हमारी राष्ट्रलिपि नागरी। बस !

"४ अब एक मुस्लिम हिंदुस्तानीकी हैसियतसे मेरी विनती है। खुदाके लिए आप मुसलमान हिंदुस्तानियोको अपने ही मुल्कमें परदेशियो-की तरह रहनेका प्रोत्साहन न दीजिए। वे तो यही चाहते हैं। आप ब्रिटेन और पाकिस्तानका खेल खेलते रहें और मुसलमान हर जगह बाजिया जीतते रहें ! बापू, मैं बहुत घबराई हुई हू। मैं मुसलमान-समाजसे वाकिफ हू। उनकी महत्वाकाक्षाए मैं जानती हू, भले आप जानने या माननेसे इन्कार करें। खुदाके लिए मेरी बातपर ध्यान दीजिए।

"आम तौरसे हिंदवासी मुसलमानोकी 'हिंदुस्तानी' यानी 'उर्दू'। वे कोई और 'हिंदुस्तानी' न जानते हैं, न मानते हैं। आकाशवाणी (रेडियो)की भाषापर मुसलमानोकी कडई टीका यह है कि भई, इस जबानको तो हम नहीं समझ सकते, कितने संस्कृत अल्फाज हैं ? 'समाज', 'भाषा', 'निर्णय', 'निश्चय' जैसे प्रचलित शब्द भी हमारे वफादार मुसलमान हिंदुस्तानियोके लिए हराम हैं। अगर सारी जनता उर्दू सीख गई तो क्या आप मानते हैं कि मुसलमान उर्दूके सिवा कुछ भी लिखेंगे-पढेंगे ?

मै नहीं मानती और मेरे अविश्वासके पीछे हिंदवासी मुसलमानोका सारा इतिहास पडा हुआ है।

"बापू! हाथ जोडकर अर्ज है—सज्जनताके साथ क्या सत्यदर्शन (Realism) नहीं रह सकता?"

यह खत सोचनेके काबिल है। रैहानाबहनके दिलमें हिंदू-मुस्लिमका भेद नही है। दोनो एक है ऐसा वह मानती है और वैसे ही बरतती है। मै भी दोनोमे भेद नही करता। हम दोनो मानते है कि हिंदू और मुसलमानोमे आचार-भेद है, पर वह भेद दोनोको अलग नही रखता। धर्म दो है, फिर भी दोनोकी जड एक है।

तब भी रैहानाबहनकी बातमे मै भूल देखता हू। हम दो लोग (नेशन) नही है। दो लोग माननेमे हम हिंदुस्तानको बडा नुकसान पहुचाएगे। कायदेआजम भले दो लोग माने और ऐसे माननेवाले भले हिंदू भी हो, लेकिन सारी दुनिया गलतीमे फँसे तो क्या हम भी फँसे? ऐसा कभी नही हो सकता।

अगर राष्ट्रभाषा हिंदुस्तानी है तो उसे दोनो लिपियोमें लिखनेकी छूट होनी चाहिए। अगर हम हिंदूको या मुसलमानको एक ही लिपिमे लिखनेके लिए मजबूर करे तो हम उसके साथ गैरइन्साफी करेगे और जब यह गैरइन्साफी अल्पमतपर उतरती है तब बहुमतका गुनाह दुगुना माना जाय।

मै नही कहता कि हिंदुस्तानके ४० करोडको दोनो लिपियां सीखना है। ऐसा अवश्य है कि जो सारे मुल्कमे फिरता है, जिसको अपने सूबे ही की नही; बल्कि सारे मुल्ककी सेवा करनी

है, उसे दो लिपिया सीखनी ही चाहिए, चाहे वह हिंदू हो या मुसलमान ।

अगर हिंदीको राष्ट्रभाषा बनना है तो लिपि नागरी ही होगी, अगर उर्दूको बनना है तो लिपि उर्दू ही होगी । अगर हिंदी उर्दूके सगमके जरिए हिंदुस्तानीको राष्ट्रभाषा बनना है तो दोनो लिपिया जरूरी है । याद रखना चाहिए कि आज सचमुच उर्दू लिपि या उर्दू भाषा सिर्फ मुसलमानोकी नही है । ऐसे असख्य हिंदू है, जिनकी मादरी जबान उर्दू है और वे उसे उर्दू लिपिमे ही लिखते है । यह भी याद रखना चाहिए कि दो लिपियोकी बात आजकी नही है । मै जब हिंदुस्तानमे आया तबसे यह बात चली है । यही विचार मैने इदौरके हिंदी-साहित्य-सम्मेलनके सामने रखे थे । उस वक्त अगर कोई विरोध हुआ था तो नहीके बराबर था । उसका मुझे स्मरण भी नही है । हा, नाम मैने हिंदी ही कायम रखा था । व्याख्या वही की थी, जो आज करता हू । मेरे खयालसे आज जब विचारोकी उथल-पुथल हो रही है तब हमारी पतवार सिर्फ एक, और मजबूत होनी चाहिए ।

जबतक उर्दू लिपिका सबध मुसलमानोसे माना जाता है तबतक हमारा फर्ज है कि हम हिंदुस्तानीके नामपर और दोनो लिपियोपर कायम रहें । यह बात सबको साफ समझ-मे आने-जैसी है । किसी भी कारणसे हो, हमने कई जगह यूनियनमे मुसलमानोपर ज्यादतिया की है । पाकिस्तानमें हिंदुओ और सिखोपर ज्यादतिया शुरू हुई, इसलिए यूनियनमें

हिंदुओ और सिखोने मुसलमानोपर की, ऐसा जवाब हमारी तरफसे ज्यादतियोके समर्थनमे हो नही सकता। ऐसे मौकेपर कहना कि हिंदुस्तानमे राष्ट्रलिपि एक नागरी ही होगी, इसे मै मुस्लिम भाइयोपर नागरीको 'लादना' कहूगा। हा, अगर मुसलमान उर्दू लिपिमे ही लिखे और उर्दू व हिंदुस्तानीमे कोई फर्क ही न समझे तो मै उसे मुस्लिम भाइयोका हठ कहूंगा। शायद ऐसा भी माना जायगा कि उनका दिल हिंदुस्तानमे नही है।

रैहानाबहनका यह कहना कि उर्दू लिपिको नागरीके साथ रखनेमे मुसलमानोको राजी रखनेकी या उनकी खुशामद करनेकी बात होगी, नासमझीकी बात है। राजी रखना कभी फर्ज होता है और किसी वक्त गुनाह भी होता है। भाईका अपने भाईको राजी रखनेके लिए उत्तरमे जानेके बदले कभी दक्खिनमे जाना फर्ज हो सकता है, लेकिन शराब पीना गुनाह होगा। इस तरह तो वह अपना और अपने भाईका बुरा करेगा। मुसलमान भाईको राजी रखनेके लिए मै कलमा नही पढ सकता, न वह मुझे राजी रखनेके लिए गायत्री पढ सकता है, कलमा और गायत्री दोनो एक ही चीजे है, ऐसा मानकर ही दोनो एक-दूसरेको समझ सकते है। लेकिन यह दूसरी बात है, और ऐसा होना भी चाहिए। इसीलिए तो एकादश व्रतमे सर्वधर्म-समानताको जगह दी गई है।

तात्पर्य यह कि सबको राजी रखनेमे दोष ही है, ऐसा नही कह सकते, बल्कि बाज दफा वही फर्ज होता है।

बहन फिर लिखती है कि नागरी लिपि प्रमाणमे पूर्ण है,

उर्दू प्रमाणमे अपूर्ण । उर्दू पढनेमे मुश्किल है और सस्कृतके शब्द उर्दूमे लिखे ही नही जाते। इस कथनमें थोडा वजूद (वज़न) है जरूर। इसका अर्थ यह हुआ कि नागरी लिपि पूर्ण होते हुए भी सुधार मागती है, वैसे ही उर्दू लिपि अपूर्ण होनेके कारण सुधार मागती है । सस्कृत शब्द उर्दू लिपिमे लिखे ही नही जाते, ऐसा कहना ठीक नही है । मेरे पास सारी गीता उर्दू लिपिमें लिखी पडी है । लिपियोमे सुधार तब हो सकता है, जब वे गिरोहबदी और जनूनका कारण नही रहती । सिंधी लिपि उर्दूका सुधार ही है न ?

अतमें रैहानाबहनसे मै कहना चाहूगा कि उनका खत हिंदुस्तानीका एक नमूना है । उसमें अरबी शब्द है जो सस्कृत भी है । हिंदुस्तानीकी खूबी ही यह है कि उसे न सस्कृतसे वैर है, न अरबी-फारसीसे । हिंदुस्तानी तो तावतवर तब बनेगी जब वह अपनी मिठासको कायम रखकर दुनियाकी सब भाषाओका सहारा लेगी, लेकिन उसका व्याकरण तो हमेशा हिंदी रहेगा । 'हिंदू' का बहुवचन 'हिंदुओ' है, 'हनूद' नही । रैहानाबहन उर्दू अच्छी जानती है और हिंदी भी । दोनो लिपियोमें लिख भी सकती है । जब मै यरवदा जेलमें था तब वह और जोहराबहन असारी मुझे उर्दूके पाठ खतोकी मारफत सिखाती थी ।मेरी सलाह है कि वह अपना वक्त हिंदुस्तानीको बढानेमें और दोनो लिपिया आसानीसे सिखानेमे दे । यह काम वह तभी कर सकती है जब उनका अपना अज्ञान दूर हो । अगर वह जो मानने लगी है सो ठीक है तो मुझे कुछ कहनेको नही रह जाता । सच तो

मुझे एक नया पाठ सीखना होगा और उर्दू लिपिको जो जगह मैं देता हू, उसे भूलना होगा ।

नई दिल्ली, १–११–'४७

: ४३ :

हम ब्रिटिश हुकूमतकी नकल तो नहीं कर रहे हैं ?

"१५ अगस्त आई और चली गई । सारे हिंदुस्तानके लोगोने बडी धूमधाम और अनोखे उत्साहसे आजादी-दिन मनाया । उनका यह सोचना ठीक ही था कि साम्राज्यवादी हुकूमतके नीचे उन्हें जितनी भी भयकर मुसीबतें और यातनाए सहनी पड़ी, वे सब अब पुराने जमानेकी निशानिया बन जायगी । जीवनमें पहली बार गावके गरीब-से-गरीब किसानकी निराशाभरी आखें खुशीसे चमक उठी । इस मौकेपर शहरके मजदूरका उदास दिल भी खुशीसे उछलने लगा । इस विशाल देशके हर दबे और कुचले हुए मर्द और औरतने आजादी-दिन दिली जोश और उमगके साथ मनाया, क्योकि बरसोके दु.ख-दर्द और कुरबानियोके बाद आखिर हिंदुस्तान-के पराधीन मानवको आशाकी झलक दिखाई दी, उसे बेहतर दिनो और बोझोके हलके होनेकी उम्मीद बँधी ।

"लेकिन आजादी-दिनकी खुशियोके बाद ही नई दिल्लीसे एक सरकारी सूचना निकली, जिसमें सूबोके गवर्नरोकी तय की हुई तनख़ाहो और भत्तोकी घोषणा की गई । भोली-भाली जनताने यह आशा लगा रखी थी कि साम्राज्यवादी हुकूमतके साथ ही ऊंचे अफसरोकी बड़ी-बड़ी तनखाहोके भारसे दबा हुआ शासन-तन्त्र भी खतम हो जायगा, जो गुलाम देशको

साम्राज्यवादके फंदेमें फँसाए रखनेके लिए ही पैदा किया गया था। आजसे पहले देशके हर राजनैतिक नेताने, हर मशहूर अर्थ-शास्त्रीने, वाइसराय, केंद्रके मंत्रियो और सूबोके गवर्नरो वगैरह सरकारी हाकिमोको दी जानेवाली बडी-बडी तनख्वाहो और उनके भत्तोकी साफ शब्दोमे कडी निदा की थी। इस बारेमें काग्रेसने कई प्रस्ताव पास किए थे। कराची-काग्रेसके मशहूर प्रस्तावमें सरकारके ऊचे-से-ऊचे हाकिमकी तनख्वाह ५०० रुपये माहवार नियत की गई थी, लेकिन आज शायद वह सब भुला दिया गया है और गवर्नरोकी ऊची तनख्वाह ५५०० रुपये माहवार तय की गई है।

"सबसे पहले हम यह देखें कि दूसरे देशोके ऐसे ऊचे हाकिमोको क्या तनख्वाह दी जाती है। दुनियाके सबसे धनी देशकी सबसे धनी स्टेट—न्यूयार्क—अपने गवर्नरको १० हजार डालर सालाना देती है, जो हमारे हिसाबसे तीन हजार रुपये माहवारसे भी कम होता है। अमेरिकाके आइडाहो नामक स्टेटके गवर्नरकी तनख्वाह १५०० रुपये माहवारसे भी कम होती है। अमेरिकाकी एक दूसरी स्टेट मेरीलैंड अपने गवर्नरको १ हजार रुपये माहवारसे कुछ ही ज्यादा देती है। इलिनोइसका गवर्नर, जिसकी आबादी उडीसा या आसामके बराबर है, ३ हजार रुपयेसे कुछ ही ज्यादा पाता है। दक्षिण अफ्रीकाके यूनियनमें सूबोके शासकोको, जो हमारे हिंदुस्तानी गवर्नरोकी हैसियतके होते हैं, हर माह २,२००से २,७०० रुपयोके बीच वेतन दिया जाता है। आस्ट्रेलियामें क्वींसलैंडके गवर्नरको ३ हजार रुपये माहवारसे कुछ ही ऊपर तनख्वाह मिलती है। हमे सब जानते हैं कि स्टेलिनको ३५० रुपये माहवार वेतन दिया जाता था। ग्रेट ब्रिटेन केबिनेट मिनिस्टरोकी तनख्वाहोका मुकाबला हमारे गवर्नरोकी तनख्वाहोसे नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे लोग इतने बडे देशपर शासन करते है। और फिर भी ब्रिटिश मंत्रिमंडलके सदस्योकी तनख्वाह हिंदुस्तानी गवर्नरकी तनख्वाहसे ज्यादा नहीं होती। यह ध्यानमें रखने

लायक बात है कि ऊपरके देशोंके उन हाकिमोंको अपनी तनख़ाहोंमेंसे इनकमटैक्स और दूसरे टैक्स भी देने होते हैं। इसलिए बिना किसी विरोधके यह कहा जा सकता है कि हिंदुस्तानी गवर्नरकी तनखाह दुनियामें सबसे ऊंची है।

"इन बातोंपर हम दूसरे पहलूसे विचार करें। हिंदुस्तानका गवर्नर अपने सूबेका अव्वल नंबरका सेवक है। इसलिए हम इस सेवककी आमदनीका उसके मालिक (जनता)की आमदनीसे मुकाबला करें। इस लड़ाई-के पहले हर हिंदुस्तानीकी औसत सालाना आमदनी ६५ रुपये कूती गई थी। अगर हम एक मामूली किसान या मजदूरकी औसत सालाना आमदनीका हिसाब लगावें तो वह इससे बहुत कम होगी। प्रो० कुमारप्पाके हिसाबसे यह सिर्फ १२ रुपये थी, और प्रिंसिपल अग्रवालने उसका आंकड़ा १८ रुपये सालाना तय किया है। इन सारे औसतोंका हिसाब लगानेपर हम इस नतीजेपर पहुंचते हैं कि एक हिंदुस्तानी गवर्नरकी आमदनी अपने मालिकोंकी आमदनीसे हजार गुना ज्यादा होती है। और अगर हम नीचे-से-नीचे वर्गके लोगोंकी, जिनकी हिंदुस्तानमें बहुत बड़ी तादाद है, सालाना आमदनीको लें तो सेवक और मालिकोंकी आमदनीके बीचका यह भेद ४ हजार गुनातक पहुंच जाता है। अमेरिकामें भी, जिसे सबसे बड़ा पूंजीवादी देश कहा जाता है और जहां सबसे बड़ी आर्थिक विषमता पाई जाती है, एक गवर्नरकी आमदनी एक अमेरिकन नागरिककी औसत आमदनीसे सिर्फ २० गुना ज्यादा होती है।

"दूसरी तरहका मुकाबला इस समस्यापर और ज्यादा प्रकाश डाल सकेगा। सूबोंके शासन-प्रबंधमें चपरासियोंका नंबर सरकारी आफिसोंमें सबसे नीचा होता है। मध्यप्रांतमें एक चपरासीकी माहवार तनख़ाह ११ रुपये है। दूसरे सूबोंमें वह कुछ कम या ज्यादा हो सकती है। जब एक गवर्नर और चपरासीकी तनख़ाहमें इतना फर्क हो तब सूबेका पूरा शासन-तंत्र आम लोगोंके भलेके लिए सामाजिक और उन्नत व्यवस्था कायम

करनेमें उत्साहसे एक आदमीकी तरह कैसे काम कर सकता है ? चोटेमें, हम चाहे अपनी नीची-से-नीची राष्ट्रीय आमदनीको लें, नीचे-से-नीचे चपरासीकी तनख़ाहको लें, या चोटीपर खड़े गवर्नरकी तनखाहको लें, हमें दुनियामें हिंदुस्तानकी मिसाल कहीं नहीं मिलेगी।

"जब सूबोंके गवर्नरोंको इतनी बड़ी-बड़ी रकमें दी जाती हैं तब हम दूसरे ऊची-ऊची रकमें पानेवाले सरकारी हाकिमोंकी तनख़ाहें घटानेके बारेमें कैसे सोच सकते हैं ? अगर ऊची तनख़ाहें घटाई नहीं जा सकतीं और नीची तनख़ाहें बढ़ाई नहीं जा सकतीं तो सूबोंके माल-मंत्री सारी प्रजाको शिक्षा देने, या डॉक्टरी सुभीते देने वगैरहकी योजनाओंको अमलमें लानेके लिए पैसा कहांसे लावें ? हम इस भ्रममें न रहें कि आजादीके आते ही कलकी भयंकर गरीबीवाला राष्ट्र थोड़े ही समयमें धनी और उन्नत राष्ट्र बन जायगा, ताकि वह अपने गवर्नरों और दूसरे ऊचे हाकिमोंको बड़ी-बड़ी तनख़ाहें दे सके। सोवियट यूनियनको अपनी राष्ट्रीय आमदनी बढ़ानेके लिए तीन पंचवर्षीय योजनाएं बनानेकी जरूरत पड़ी। बंबई-योजना बनानेवाले लोगोंने भी १०० अरब रुपयेकी पूंजी लगानेपर १५ सालके आखिरमें हर हिंदुस्तानीकी औसत सालाना आमदनी १३० रुपये ही कूती है। इसलिए हिंदुस्तानके एक ही दिनमें धनी बन जानेके सुहाने सपने जितनी जल्दी छोड़ दिए जाय, उतना ही हम सबके लिए अच्छा होगा। सत्य बड़ा कठोर है और हमें ईमानदारीसे उसका भलीभांति सामना करना चाहिए। हम अपने हाकिमोंको इतनी बड़ी-बड़ी रकमें नहीं दे सकते।"

—डी० के० वेग

हालाकि मैं प्रो० वेगद्वारा दिए हुए आंकड़ोंके बारेमें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकता, फिर भी उन्होंने हिंदुस्तानके गवर्नरों और दूसरे ऊंचे हाकिमोंकी बड़ी-बड़ी तन-

खाहोके वारेमे और हमारी सरकारोद्वारा अपने नौकरोको दी जानेवाली ऊची-से-ऊची और नीची-से-नीची तनखाहोकी भयकर विपमता या फर्कके वारेमे जो कुछ लिखा है, उसका समर्थन करनेमे मुझे कोई हिचकिचाहट नही है।

नई दिल्ली, २-११-'४७

: ४४ :

दो अमेरिकन दोस्तोंका दिलासा

मेरे पास अमेरिकन दोस्तोके, जिन्हे मै जानता भी नही, बहुतसे खत आते है। उनमेसे दो ऐसे दोस्तोके खतोमेसे नीचेके अश यहा देने लायक मालूम होते है

"अपने देशकी आजकी दुर्दशाके कारण आपको जो भारी दु:ख हो रहा है उसका यह तकाजा है कि मै हिंदुस्तानकी मौजूदा दु खभरी घटनाओके बारेमें आपके मनमें उठ रहे विचारो और चिताओमे दखल दू और आपको यह याद दिलाऊं कि आपके सुंदर और प्रेरणाभरे शब्दोने दुनियाके हर कोनेमें जड़ जमा ली है।

"यह तो स्वाभाविक बात है कि इन दु खभरी घटनाओके कारण आप किसी कदर निराशा-सी महसूस करें। मेरे खत लिखनेका यही मतलब है कि आपकी यह निराशा बहुत ज्यादा नही बढनी चाहिए और आपको पस्तहिम्मत तो कभी होना ही नहीं चाहिए।

"बीज कभी एकदमसे सुंदर और खुशबूदार फूलका रूप नही लेता। इसके लिए उसे पहले सडना होता है, उगना होता है और विकासके खास दरजोसे गुजरना पड़ता है। और अगर विकास या तरक्कीके किसी दरजे-

पर उसमें कोई गडबडी पैदा होती है तो उस समय उसके पास मालीका हाजिर रहना सबसे जरूरी हो जाता है। जब माली रोगी पौधेकी सार-सभालके नि स्वार्थ काममें पूरी तरह खो जाता है तब शायद वह अपने बगीचेके दूसरे पौधोके विकासको पूरी तरह नहीं देख सकता, जो बढकर मानो अपने दु खी भाईकी सेवा और हमदर्दीमें उसका साथ दे रहे हो।

"मै आपसे प्रार्थना करता हू कि आप दुनियाके सारे देशोंके सारे वर्गों, जातियो और धर्मोंके बेशुमार लोगोका खयाल करें। वे सब भी आज आपके साथ शातिके लिए भगवानसे प्रार्थना कर रहे है। हम सब, जिनकी आशाओको आपने इतने अच्छे ढगसे जाहिर किया है और जिन्हें शातिके विज्ञानकी मददसे पाई गई आपकी बडी-बडी विजयोसे नया बल और नया साहस मिला है, एक साथ मिलकर यह प्रार्थना करते है कि भगवान आपको आशीर्वाद दे और अपने गौरवपूर्ण कामको जारी रखनेके लिए जिदा रखे, जिसका बहुत-सा हिस्सा अभी आपको पूरा करना है।"

हो सकता है कि इन दोस्तोका कहना सच साबित हो और अभीतक हिंदुस्तान जिस पागलपनभरे रक्तपातसे गुजर रहा है—हालाकि पहलेका गुस्सा और पागलपन अब कम हुआ दिखाई देता है—वह इतिहासमे असाधारण न साबित हो। लेकिन आज हिंदुस्तान जिस हालतसे गुजर रहा है उसे हमे तो असाधारण ही मानना चाहिए। अगर हम यह मान कि हिंदुस्तानने जैसी आजादी पाई है, उसका श्रेय अहिंसाको है तो जैसा कि मैंने बार-बार कहा है, हिंदुस्तानकी अहिंसक लडाई केवल नामकी ही थी, असलमे वह कमजोरोका निष्क्रिय प्रतिरोध था। इस बातकी सचाई हम हिंदुस्तानकी आजकी घटनाओमे प्रत्यक्ष देख रहे है।

नई दिल्ली, ९-११-४७

: ४५ :

'सिर्फ मुसलमानोंके लिए'

एक खत लिखनेवाले भाईने इस बातकी तरफ मेरा ध्यान खींचा है कि पहले मैंने रेलवे स्टेशनोंपर हिंदुओं और मुसलमानो-के पानीके लिए अलग-अलग बरतनोंके इस्तेमालको बुरा बताया था, लेकिन आज तो सिर्फ मुसलमानोंके लिए और गैर-मुसलमानों या हिंदुओंके लिए अलग डिब्बे रिजर्व किए जाते हैं। मैं नहीं जानता कि यह बुराई कहांतक फैली है, लेकिन मैं यह जरूर जानता हूं कि यह भेद-भाव हिंदुओं और सिखोंके लिए बड़ी शर्मकी बात है। मेरे खयालमें सिर्फ मुसलमानोंकी जानकी हिफाजत करनेके लिए ही रेलवेवालोंको यह फर्क करना जरूरी मालूम हुआ है। अगर हिंदू और सिख लोग मुसलमान मुसा-फिरोंके साथ बेजान मालअसबाबकी तरह कभी सलूक न करनेका इरादा कर लें और रेलवे अधिकारियोंको इस बातका यकीन दिला दें कि ऐसा गुनाह वे फिर कभी न करेंगे तो यह भेदभाव किसी भी दिन (जितना जल्दी हो उतना अच्छा) मिटाया जा सकता है। यह तभी हो सकता है, जब लोग अपने पापोंको खुले आम मंजूर करें और समझदार बन जायं। यह बात मैं इस बातका विचार किए बिना कहता हूं कि पाकि-स्तानमें आजतक क्या हुआ है या आगे क्या हो सकता है।

नई दिल्ली, ६-११-'४७

: ४६ :

अहिंसा उनका क्षेत्र नहीं

एक अखबारी रिपोर्टमे बताया गया है कि मेजर जनरल करिअप्पाने अहिंसाके बारेमे नीचे लिखी बात कही है

"आजकी हालतोमें हिंदुस्तानको अहिंसासे कोई फायदा नहीं होगा। सिर्फ ताकतवर फौज ही हिंदुस्तानको दुनियाके सबसे बडे राष्ट्रोमें जगह दिला सकती है।"

मुझे डर है कि अहिंसाके बारेमे ऊपरकी बात कहकर बहुतसे विशेषज्ञोकी तरह जनरल करिअप्पा अपनी हदसे बाहर चले गए है और अनजानमे ही उन्होने अहिंसाकी ताकतके बारेमे बडी गलत धारणा व्यक्त कर दी है। कुदरती तौरपर अपने क्षेत्रमे काम करते हुए उन्हे अहिंसाकी ताकत और उसके कामका बहुत छिछला ज्ञान ही हो सकता है। जीवनभर अहिंसापर अमल करनेके कारण मै अहिंसाका माहिर होनेका दावा करता हू, हालाकि मै बहुत अपूर्ण हू। साफ और निश्चित शब्दोमे मै यह कहना चाहता हू कि मै जितना ज्यादा अहिंसापर अमल करता हू, उतना ही साफ मुझे यह दिखाई देता है कि मै अपने जीवनमे अहिंसाको पूरी तरह उतारनेकी हालतसे कोसो दूर हू। इस तथ्य या सचाईकी जानकारी, जो कि दुनियामे आदमीका सबसे बडा फर्ज है, न होनेसे ही जनरल करिअप्पाने यह कहा है कि आजके जमानेमे हिंसाके सामने अहिंसा कुछ नही कर सकती, लेकिन मै तो हिम्मतके साथ यह कहता हू कि इस ऐटम-बमके जमानेमे शुद्ध अहिंसा ही

ऐसी ताकत है, जो हिंसाकी सारी चालोको नीचा दिखा सकती है। जनरल करिअप्पा, जिन्हे अब फौजी साइंस और फौजी अमलके अपने जानकार ब्रिटिश उस्तादोकी मदद नही मिल सकती, इस तरह अपनी सीमाको न लाघते तो अच्छा होता। जनरल करिअप्पासे ज्यादा बडे-बडे जनरलोने काफी समझदारी और नम्रतासे साफ-साफ शब्दोमे यह कबूल किया है कि अहिंसाकी ताकत क्या कुछ कर सकती है। इसके बारेमे उन्हे कहनेका कोई हक नही है। हम फौजी साइंस और फौजी अमलका भयानक दिवालियापन उसकी पैदाइशकी जगहमे ही देख रहे है। जो आदमी सट्टा बाजारमे जूआ खेलकर दिवालिया बना है, उसे क्या उस खास तरहके जूआकी तारीफके गीत गाने चाहिए?

नई दिल्ली, ७-११-'४७

: ४७ :

विषमताएं दूर की जायं

[सितबरके शुरूमें बुनियादी शिक्षा (फंडामेंटल ऐजूकेशन) के बारेमें विचार करनेवाली 'रिजनल स्टडी कान्फरेंस' चीनमें हुई थी। हिंद सरकारके प्रचार-विभागद्वारा निकाले गए बुलेटिनमें गांधीजीका कान्फरेंसको भेजा हुआ नीचे लिखा संदेश और उसकी टीका दी गई है।]

मुझे सयुक्त राष्ट्रोके आर्थिक, सामाजिक या सास्कृतिक

मघोके कामोमे गहरी दिलचस्पी है, जो शिक्षासबधी और सास्कृतिक प्रयत्नोके द्वारा शाति कायम करना चाहते है। मै इस बातको पूरी तरह समझता हू कि जबतक दुनियाके राष्ट्रो-मे आजकी शिक्षासबधी और सास्कृतिक विषमताए मौजूद रहेगी तबतक सच्ची सुरक्षा और स्थायी शाति नही पैदा की जा सकती। जो कम साधनोवाले देशोके मुकाबले अधिक अधेरेमे है, उनके दूर-से-दूरके घरोमे भी ज्ञानका प्रकाश पहुचाया जाय। मेरे खयालमे इस कामकी खास जिम्मेदारी उन देशोपर है जो आर्थिक और शिक्षाके क्षेत्रमे दूसरोसे आगे बढे हुए है। मै आपकी कान्फरेसकी हर तरहसे सफलता चाहता हू और उम्मीद करता हू कि आप सही ढगकी शिक्षा देनेके लिए अमलमे लाई जा सकनेवाली कोई ऐसी योजना बना सकेगे जिससे खासकर उन देशोमे शिक्षा दी जा सके, जहा माली और दूसरी कमियोकी वजहसे शिक्षाके कम सुभीते है।"

[ऊपरके सदेशपर टीका करते हुए बुलेटिनमें कहा गया है· "गाधीजी-के सदेशका बडी इज्जत और श्रद्धासे स्वागत किया गया और उसके पढे जानेके वक्त कान्फरेंसमें इकट्ठे हुए सारे लोग खडे रहे। कान्फरेंसने गाधीजीको उनके प्रेरणा देनेवाले सदेशके लिए धन्यवाद और तारीफका खत भेजा था।"]

नई दिल्ली, ७-११-४७

: ४८ :

जब आशीर्वाद शाप बन जाता है

आशीर्वाद देनेसे इन्कार करते हुए मैने एक दोस्तको नीचे लिखी बाते कही थी

"एक साहसभरा योग्य काम शुरू करनेकी इच्छा रखनेवाले किसी भी व्यक्तिको किसीका आशीर्वाद लेनेकी इच्छा कभी नही करनी चाहिए, देशके बड़े-से-बड़े आदमीके आशीर्वादकी भी नही। एक योग्य काम अपना आशीर्वाद अपने साथ ही लेकर चलता है। दूसरी तरफ अगर किसी अयोग्य कामको बाहरसे कोई आशीर्वाद मिलता है तो वह शाप बन जाता है, जैसा कि उसे बनना चाहिए। सचमुच, मै इस नतीजेपर पहुचा हू कि बाहरी आशीर्वाद, किसीके कामकी एक-सी प्रगतिमें बाधक होता है, क्योकि वह काम करनेवालेके दिलमें गलत आशा पैदा करता है और कामकी सफलताके लिए जिस मेहनत और चौकन्नेपनकी जरूरत है, उससे उसे दूर हटा देता है।"

अगरचे मैने बहुतसे लोगोसे अक्सर कुछ ऐसी ही बात कही है, फिर भी इस सोच-विचारकर तय की गई रायको उन लोगोके फायदेके लिए यहा फिरसे दे देना अच्छा समझता हू, जो अपने कामोके लिए आशीर्वाद मागते रहते है। इसी तरह मुझे महान् व्यक्तियोके स्मारकोको आशीर्वाद देनेके लिए कहा गया है और मुझे लाचार होकर करीब-करीब वही जवाब देना पड़ा है, जिसकी चर्चा ऊपर की गई है।

नई दिल्ली, ११-११-'४७

: ४६ :

कुरुक्षेत्रके निराश्रितोंसे[1]

मै नही जानता कि आजकी मेरी वात सिर्फ आप लोग ही सुन रहे है या दूसरे भी सुन रहे है। हालाकि मै ब्राडकास्ट-भवनसे बोल रहा हू, लेकिन इस तरहकी चर्चामे मुझे दिल-चस्पी नही है। दुखियोके साथ दुख उठाना और उनके दुखोको दूर करना ही हमेशा मेरे जीवनका काम रहा है। इसलिए मुझे आशा है कि मेरे इस भाषणको आप लोग इसी नजरसे देखेगे।

जव मैने यह सुना कि कुरुक्षेत्रमे दो लाखसे ऊपर निराश्रित आ गए है और उनकी तादाद वढती ही जा रही है तो मुझे वडा दुख हुआ। यह खवर सुनते ही मेरी इच्छा हुई कि मै आप लोगोसे आकर मिलू। लेकिन मै एकदम दिल्ली नही छोड सकता था, क्योकि यहा काग्रेस वर्किग कमेटीकी बैठके हो रही थी और उनमे मेरा हाजिर रहना जरूरी था। श्री घनश्यामदास विडलाने सुझाया कि मै आपको रेडियोपर सदेश दू। इसलिए आपसे आज यह चर्चा कर रहा हू।

दो दिन पहले अचानक जनरल नाथूसिह, जिन्होने कुरुक्षेत्र-छावनीकी व्यवस्था की है, मुझसे मिलने आए और उन्होने मुझे आप लोगोकी मुसीबते कह सुनाई। केद्रीय सरकारने फौजको आपकी छावनीका वदोवस्त अपने हाथमें

---

[1] दिवाली के दिन ऑलइंडिया रेडियो से दिया गया भाषण।

लेनेके वास्ते इसलिए नही कहा कि वह आपको किसी तरह दवाना चाहती है। उसने ऐसा सिर्फ इसलिए किया कि फौजके लोग छावनीका वदोवस्त करनेके आदी होते है और वे होशियारीसे यह सव करना जानते है।

जो दु ख उठाते है, वे अपने दु खोको सवसे ज्यादा जानते है। आपकी छावनी कोई मामूली नही है, जहा हर आदमी एक-दूसरेको जान सके। आपकी छावनी एक शहर है और अपने साथी निराश्रितोसे आपका सवध सिर्फ दु ख-दर्दके जरिए ही है। आप सव एकसे दु खी है।

मुझे यह जानकर दु ख हुआ कि छावनीके अधिकारियो या अपने पडोसियोके साथ आपका वह सहयोग नही है, जो छावनी-के जीवनको कामयाव वनानेके लिए आपको करना चाहिए। मै आपके दोषोकी तरफ आपका ध्यान खीचकर आपकी सवसे अच्छी सेवा कर सकता हू। वही मेरे जीवनका मत्र रहा है, क्योकि उसीमे सच्ची दोस्ती समाई हुई है। और मेरी सेवा सिर्फ आपके या हिदुस्तानके लिए नही है, वह तो सारी दुनियाके लिए है, क्योकि मै जाति या धर्मकी सीमाओको नही मानता। अगर आप अपने दोषोको दूर कर दे तो आप अपने. आपको ही नही, वल्कि सारे हिंदुस्तानको फायदा पहुंचाएगे।

यह जानकर मेरे दिलको चोट पहुचती है कि आपमेसे वहुतोके पास रहनेको जगह नही है। यह सच्ची कठिनाई और मुसीवत है—खासकर पजावकी कडी ठडमे, जो दिनोदिन वढती जा रही है। आपकी सरकार आपको आराम पहुचानेकी भरसक कोशिश कर रही है। वेशक, आपके

प्रधान मत्रीपर इसका सवसे वडा वोझ है। राजकुमारी और डॉ० जीवराज मेहताके मातहत सरकारका स्वास्थ्य-विभाग भी आप लोगोकी मुसीवतोको कम करनेके लिए कडी मेहनत कर रहा है। इस सकटमे दूसरी कोई भी सरकार इससे अच्छा काम नही कर सकती थी। आपकी मुसीवतो और विपदाओकी कोई हद नही है और सरकारकी तो अपनी सीमाए है ही। लेकिन आपको चाहिए कि आप अपने दुख-दर्दका जितनी हिम्मत, धीरज और खुशीसे सामना कर सके, करे।

आज दीवाली है, लेकिन आज आप या दूसरे कोई रोशनी नही कर सकते। आज खुशी मनानेका समय नही है। हमारी सवसे अच्छी दीवाली मनेगी आप लोगोकी सेवा करके, और तव, जव आप सव उसे अपनी छावनीमे भाई-भाई-जैसे रहकर और हर एकको अपना सगा समझकर मनाएगे। अगर आप ऐसा करेगे तो अपनी मुसीवतोपर विजय पा लेगे।

जनरल साहवने मुझे वताया कि छावनीमे आज भी कौन-कौन-सी वातोकी जरूरत है। उन्होने मुझसे कहा कि अव वहा ज्यादा निराश्रित न भेजे जाय। ऐसा मालूम होता है मानो निराश्रितोको ठीक तरीकेसे अलग-अलग जगहोमे वाटा नही जाता। यह समझमे नही आता कि वे वहा क्यो आते है और मुकामी अधिकारियोको पहलेसे जताए विना अलग-अलग जगहोमे इतनी वडी तादादमे क्यो इकट्ठे कर दिए जाते है? कल शामको मैने प्रार्थनाके वादके अपने भाषणमे ऐसी हालत पैदा करनेके लिए पूरवी पजावकी सरकारकी टीका की थी। मुझे अभी-अभी वहाकी सरकारके एक मत्रीका

खत मिला है, जिसमे कहा गया है कि यह हमारा दोष नही है, इसके लिए केद्रीय सरकार जिम्मेदार है।

अब केद्रकी या सूबोकी सारी सरकारे जनताकी सरकारे है। इसलिए एकका दूसरीपर इस तरह दोष डालना शोभा नही देता। सबको मिलकर जनताके भलेके लिए काम करना चाहिए। मै यह सब इसलिए कहता हू कि आप लोग भी अपनी जिम्मेदारी समझे।

आपको छावनीमे अनुशासन कायम रखनेमे मदद करनी चाहिए। छावनीकी सफाईका काम आपको अपने हाथमे ले लेना चाहिए। मै पंजाबको मार्शल लॉ के दिनोसे अच्छी तरह जानता हू। मैने पजाबियोके गुणो और दोषोको पहचाना है। उनमेसे एक दोष--और वह सिर्फ पंजाबियोका ही नही है--यह है कि उन्हे समाजी आरोग्य और सफाईका बिलकुल ज्ञान नही है। इसीलिए मैने अक्सर कहा है कि हम सबको हरिजन बन जाना चाहिए। अगर हम ऐसा करेगे तो ऊंचे उठेगे। इसलिए मै कहता हू कि आपमेसे हर एक--मर्द, औरते और बच्चे भी--अपने डाक्टरो और छावनीके अफसरोको कुरुक्षेत्रको साफ रखनेमे मदद करे।

दूसरी बात जो मै आपसे कहना चाहता हूं वह यह है कि आप अपना राशन बांटकर खाइए। जो कुछ आपको मिले, उसमे सतोष कीजिए। न तो अपने हिस्सेसे ज्यादा लीजिए और न ज्यादाकी माग कीजिए। समाजी रसोडे चलानेकी कला हमे सीखनी चाहिए। इस तरहसे भी आप एक-दूसरेकी सेवा कर सकते है।

मुझे इस खतरेकी तरफ भी आपका ध्यान खीचना चाहिए कि आप कही आलसकी रोटी खानेके आदी न बन जाए। आपको रोटी कमानेके लिए शरीर-श्रम करना चाहिए। मुमकिन है, आप यह सोचे कि आपके लिए हर बातका इतजाम करना सरकारका फर्ज है। सरकारका फर्ज तो है ही, लेकिन इसका यह मतलब नही कि आपका फर्ज खत्म हो जाता है। आपको सिर्फ अपने ही लिए नही, बल्कि दूसरोके लिए भी जीना चाहिए। आलस हर एकको नीचे गिराता है। वह हमे इस सकटको कामयाबीसे पार करनेमे तो मदद कर ही नही सकता।

गोवाकी एक बहन मुझसे मिलने आई थी। उनसे मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आपकी छावनीकी बहुत-सी औरते कातना चाहती है। कोई रचनात्मक काम जो हमे मदद पहुचाता है करनेकी इच्छा रखना अच्छी बात है। अब आप सबको राज्यपर बोझ बननेसे इन्कार कर देना चाहिए। आपको दूधमे शकरकी तरह अपने आसपासके वातावरणमे मिलकर एक हो जाना चाहिए और इस तरह आपकी सरकारपर जो बोझ आ पडा है, उसे हलका करनेमे मदद करनी चाहिए। सारी छावनियोको सचमुच स्वावलबी बनना चाहिए। लेकिन आज आपके सामने वह आदर्श रखना शायद बहुत ऊची बात होगी। फिर भी, मै आपसे यह जरूर कहूगा कि आपको किसी भी कामसे नफरत नही करनी चाहिए। सेवाका जो कोई भी काम आपके सामने आए, उसे आपको खुशी-खुशी करना चाहिए और इस तरह छावनियोको आदर्श जगह बनाना चाहिए।

लोगोने मेरी गरम कपड़ो, रजाइयो और कवलोकी अपीलको सुनकर उदारतासे दान दिया है। सरदार पटेलकी अपीलका भी उन्होने अच्छा स्वागत किया है। इन चीजोमे आपका भी हिस्सा है; लेकिन अगर आप लोग आपसमे झगडेगे और कुछ लोग अपनी जरूरतसे ज्यादा हिस्सा लेगे तो आपको ही नुक्सान होगा। आज भी आप वडी-वडी मुसीबते उठा रहे है, लेकिन आपके गलत कामसे वे और ज्यादा बढ जायगी।

अतमे, मै उन लोगोमेसे नही हू जो यह विश्वास करते है कि आप, जो पाकिस्तानमे अपनी जमीने और घरवार छोडकर यहा आ गए है, वहासे हमेशाके लिए उखाड दिए गए है। न मै यही विश्वास करता हू कि उन मुसलमानोके साथ ऐसा वरताव किया जायगा, जिन्हे हिंदुस्तान छोडनेपर मजबूर किया गया है। मै तबतक चैन नही लूगा और तवतक भरसक कोशिश करता रहूगा, जबतक सब लोग इज्जत और सलामतीके साथ लौटकर उन जगहोमे वस नही जाते जहांसे वे आज निकाले गए है। जब तक मै जिदा रहूगा तबतक इसी उद्देश्यके लिए काम करूगा। मरे हुए लोग तो जिलाए नही जा सकते, लेकिन जिदोके लिये तो हम काम कर सकते है। अगर हम ऐसा नही करेगे तो हिदुस्तान और पाकिस्तानके नामपर हमेशा-के लिए कालिख पुत जायगी और उससे हम दोनो बरबाद हो जायगे।

नई दिल्ली, १२–११–’४७

: ५० :

मानसशास्त्रीय टीका

रिचर्ड ग्रेग साहबसे तो 'हरिजन'के पढ़नेवाले परिचित होंगे ही। वह शांतिनिकेतनमें रहे थे और कई बरस हुए, मेरे साथ साबरमतीमें भी थे। वह मुझे लिखते हैं

"मैं बहुत जानता नहीं हूं, इसलिए हिचकिचाता हूं। फिर भी आपको एक विचार भेजनेका साहस करता हूं। अगर हम हिंदुस्तानके आजके जातीय लड़ाई-झगड़ोंको उस विचारसे देखें तो शायद हमें लोगोंका नैतिक दोष कुछ कम नजर आएगा और आगेके लिए हमें आशा और बल भी मिलेगा।

"मेरी रायमें बहुत मुमकिन है कि यह हिंसा जातीय घृणा और अविश्वासको उतना नहीं बताती, जितना कि जनताके गुस्सेको, जो उसकी पीड़ा और उसपर सदियोंसे होनेवाले जुल्मके कारण उनके दिलमें दबा पड़ा था। यह जुल्म केवल विदेशी राज्यके ही कारण न था। उसमें विदेशी आधुनिक सामाजिक, आर्थिक और माली तरीके भी शामिल थे, जो उन पुराने धार्मिक तरीकोंसे बिलकुल उलटे थे जो कि जनताके स्वभावका एक अंग बन गए थे। विदेशी तरीकोंसे मेरा मतलब है अंग्रेजी जमींदारी-प्रथा, अधिक सूदखोरी, भारी कर या महसूल जो वस्तुके रूपमें नहीं, बल्कि नकदीके रूपमें लिए जाते हैं, और दूसरे हस्तक्षेप, जो उन्होंने गांववालोंके उस जीवनमें किए, जिसे सब जातियां सदियोंसे बिताती चली आ रही थीं।

"मनोविज्ञान हमें बताता है कि बचपनकी गहरी नाराजियां आदमीके जीवनमें देरतक दबी पड़ी रहती हैं, चाहे उसका कारण न भी जाना हो। बादमें यह सुलगती हुई आग किसी भी कोई उत्तेजना मिलनेपर भड़क उठती है और यह गुस्सा हिंसाके रूपमें बेगुनाहोंपर निकल पड़ता है।

यहूदियोपर यूरोपमें जो जुल्म हुए हैं उनकी और दूसरे कई हिंसक कामोकी जड़ इस तरह हम समझ सकते हैं। मैं मानता हूं कि हिंदुस्तानमें धर्मपर आधारित चुनावक्षेत्रोने इस लडाई-झगड़ेका रास्ता जरूर पैदा किया, लेकिन मै यकीन करता हू कि जो पुराना कारण मैंने आपको वताया है, वही उस गुस्सेका सवसे वडा कारण है जो इस भयानक शक्तिसे आज फूट पड़ा है। ऐसा माननेसे हम समझ सकेंगे कि सब मुल्कोके इतिहासमें जव कभी राजकी वागडोर एक हाथसे दूसरे हाथमें गई है तव क्यो हमेशा थोडी-वहुत खून-खरावी हुई है। जनता किसी-न-किसी जुलमका शिकार तो होती ही है, जिसके कारण उसके दिलमें गुस्सा भरा होता है। जव ताकत एक हाथसे दूसरेके हाथमें जाती है, या कोई स्वार्थी नेता इसका नाजायज फायदा उठाते है तो वह गुस्सा भड़क उठता है।

"अगर मेरा विचार ठीक है तो यह मालूम होता है कि हिंदुस्तानकी जातीय नफरत और अविश्वासकी वुनियाद उतनी गहरी नहीं है, जितनी आज दिखाई देती है। इसके मानी यह भी है कि जब आप अपने लोगोको उनके पुराने जीवनके तरीकोपर फिर ला सकेंगे और सबसे ज्यादा जोर धर्म और छोटी सस्थाओ—यानी ग्राम-पचायत और सम्मिलित कुटुंब—पर देंगे तो लोगोकी शक्ति हिंसासे फिरकर इन कामोमें लग जायगी। अगर खादीका काम शरणार्थियोमें किया जाय तो उनकी शक्ति ऐसे ही अच्छे रास्ते लग जायगी। इस रास्ते बढ़नेमें मुझे आशा नजर आती है।

"यदि मेरे इस पत्रमें कहीं धृष्टता दिखाई दे तो क्षमा कीजिए। मैंने इस उम्मीदसे यह खत लिखा है कि बाहरका एक मामूली आदमी, सिर्फ इसलिए कि वह वाहर है, शायद आशाकी झलक देख पाए, जिसे लड़ाईकी धूल और वदहवासीमें देखना इतना आसान नही। जो हो, मुझे आपसे और हिंदुस्तानसे प्यार है।"

वहुतसे मानसशास्त्रियोने मुझे मनोविज्ञानकी विद्या

सीखनेको कहा है, लेकिन समय न होनेकी वजहसे, मुझे दुख है कि मै ऐसा कर नही पाया। ग्रेग साहबका खत मेरी समस्या हल नही करता और न मेरे दिलमे मनोविज्ञान जाननेका जबरदस्त उत्साह ही पैदा करता है। उनकी दलीलसे मेरा मन साफ नही, उलटा धुधला होता है। 'भविष्यके लिए आशा' तो मैने कभी खोई नही और न खोनेवाला हू, क्योकि वह तो मेरे अहिसाके अमर विश्वासमे है ही। हा, मेरे साथ यह बात जरूर हुई है कि मै पहचान गया हू कि सभवत अहिसा चलानेकी मेरी कलामे कोई दोष है। वास्तवमे अग्रेजी राजके खिलाफ तीस सालकी अहिसक लडाईमे हमने अहिसाको समझा नही। इसलिए जो शाति जनताने बहुत धीरजसे उस लडाईके दौरानमे रखी, वह भीतरकी नही, ऊपरकी ही थी। जिस वक्त अग्रेजी राज गया, उनके दिलका गुस्सा बाहर निकला। यह कुदरती था कि वह गुस्सा जातीय लडाईमे फट पडे, क्योकि उस गुस्सेको सिर्फ अग्रेजी बदूकोने दबाकर रखा था। यह मेरी रायमे बिलकुल दुरुस्त और मानने योग्य है। इसमें किसी उम्मीदके टूटनेकी कोई गुजाइश नही। मेरी अहिसा चलानेकी कला नाकाम रही, तो क्या? उससे अहिसामे विश्वास थोडे उठ जाता है? उलटे, यह जानकर कि मेरे तरीकेमे कोई दोष हो सकता है, मेरा विश्वास सभवत और भी मजबूत हो जाता है।

नई दिल्ली, १२-११-'४७

: ५१ :

बेमेल नहीं

'हरिजन' के एक ग्राहकने मेरे सामने नीचेकी बात रखी है, जो उन्हे एक पहेली मालूम होती है। उसका मैने नीचे लिखा जवाब भेजा है –

"एक बार आपने यह कबूल किया है कि आपने ईश्वरको प्रत्यक्ष नही देखा है। और 'सत्यके मेरे अनुभव' नामकी अपनी किताबकी भूमिकामें आपने कहा है कि आपने सत्यके रूपमें भगवानको बहुत दूरसे जीता-जागता देखा है। ये दोनो बातें बेमेल मालूम होती है। इन दोनोको मै ठीक-ठीक समझ सकू, इसलिए विस्तारसे समझानेकी मेहरबानी कीजिए।"

ईश्वरको आखोसे प्रत्यक्ष देखनेमे और उसे बडी दूरसे सत्यके रूपमे जीता-जागता देखनेमे बहुत बडा अतर है। मेरी रायमे ऊपरकी दोनो बाते एक दूसरीकी विरोधी नही है, बल्कि उनमेसे हर एक दूसरीको समझाती है। हम हिमालयको बहुत दूरसे देखते है और जब हम उसकी चोटीपर होते है तो हम उसे प्रत्यक्ष देखते है। लाखो आदमी हिमालयको सैकडो मील दूरसे देख सकते है, बशर्ते कि वह दिखाई देनेवाली दूरीके भीतर हो। लेकिन बरसोकी मुसीबतोके बाद उसकी चोटीपर पहुचकर तो थोडे ही लोग उसे प्रत्यक्ष देखते है। इसे 'हरिजन'के कॉलमोमे विस्तारसे समझानेकी जरूरत नही मालूम होती। फिर भी, मै आपका खत और मेरा जवाब 'हरिजन'मे छपानेके लिए भेजता हू, ताकि आपके बताए हुए

दोनो बयानोमे आपकी तरह किसीको विरोध मालूम होता हो तो उसकी उलझन दूर हो जाय।

नई दिल्ली, १३-११-'४७

: ५२ :

अंकुश

मुझे तो यह साफ नजर आता जा रहा है कि खुराक, कपडे वगैरहपर जो अंकुश रखा गया है, वह गलत है। मेरे इस विचारके समर्थनमे मेरे पास खत और तार आते रहते है।

इसके विरोधमे ऐसे लोग है जो अपने आपको इस विषयके विशेषज्ञ मानते है। इसलिए वे लोग पत्रिकाइंभरे लेख लिखते है। उनमे पुरानी विदेशी सरकारके नौकर भी है। उनमेसे इरादतन किसीकी उपेक्षा करनेकी मेरी जरा भी इच्छा नही है। फिर भी अगर उनकी बातको आख मूदकर न माननेमे ही उनकी उपेक्षा होती हो तो मै लाचार हू। सूरजकी गर्मीमे तपता हुआ कोई आदमी किसी छाहमे रहनेवाले पण्डितकी यह बात कैसे मान सकता है कि सूरजकी गर्मी, गर्मी नही है और जो आदमी तप रहा है, वह भ्रममें है? यही हालत मेरी है।

विशेषज्ञ और सरकारी नौकर सच्चे दिलसे मानते है कि हमारे देशमे पूरा अनाज नही है। मै इससे उल्टा मानता हू और साथ ही यह कहता हू कि अगर देशमे अनाजकी कमी हो तो वह बहुतसे आदमियोकी थोडी-सी कोशिशसे दूर की जा सकती

है। लोग आलसी बन बैठे या धोखा ही देते रहे, और इस आलस और धोखेकी वजहसे मरे तो उसमे हुकूमत क्या करे ? हुकूमत आलस मिटानेके उपाय सोचे, धोखा दूर करनेकी कोशिश करे, न कि आलसियो और दगाबाजोके लिए चाहे जैसे, चाहे जहासे, अनाज लाकर उन्हे दे और इस तरह उनकी दगाबाजी और आलसको बढाए।

मगर मै कोई लेख लिखने नही बैठा हू। गुजरातके लोग व्यापार करना जानते है। गुजरातमे चतुर किसान है। वहाकी मिट्टी अच्छी है। पानी भी वहा काफी है। उन लोगोका क्या खयाल है ? क्या यह बात सही है कि आलस और धोखा अनाजकी कमीका आभास कराते है ? अगर न हो तो बबईमे अंकुश किसलिए है ? अगर आलस और धोखा काम कर रहे है तो वे क्यो दूर नही होते ? गुजरात ही नही, पूरे बंबई इलाकेके किसान और व्यापारी मिलकर क्यो नही बताते कि उनके यहा अनाज और कपडेकी कमी नही है, और अगर हो तो वह तुरत दूर हो सकती है ? क्या वे इतना नही कर सकते ?

नई दिल्ली, १७–११–'४७

: ५३ :

गुरु नानकका जन्म-दिन

मुझे डर है कि मै जो कुछ कहना चाहता हू, वह सब नही कह सकूंगा। मेरी उम्मीद थी कि आपने फौजी तालीम ली है,

इसलिए आप शाति रखेगे। यहा बहने बहुत आवाज कर रही है। कुछ बरस पहले जब मै अमृतसर गया था तो वहा भी ऐसा ही हुआ था। दुःखकी बात है कि बहनोतक वह तालीम नही पहुची। यह मर्दोका गुनाह है।

मै जब यहा आ रहा था तो मैने रास्तेमे केले व संतरेके छिलके इधर-उधर पडे देखे। उनसे जगह ही गदी नही हुई थी बल्कि उसपर चलना भी खतरनाक हो गया था। अपने घरोके फर्शोकी तरह ही हमे सडकोको साफ रखना चाहिए। मैने देखा है कि कूडेदान नही होता तो अनुशासन-प्रिय लोग छिलकोको कागजमे बाधकर थोडी देरको जेबमे डाल लेते है और फिर नियत स्थानपर फेक देते है। अगर लोगोने सामाजिक आचार-विचारके नियम सीख लिए है तो उनका कर्त्तव्य है कि उन्हे स्त्रियोको भी सिखावे।

आज दस बजे मेरे पास बाबा बचित्तरसिंह आए थे। उन्होने कहा कि आज 'गुरु नानकका जन्म-दिन है[1]। उसमें शामिल होनेके लिए आपको निमत्रण देनेको सिक्खोकी तरफसे मुझे भेजा गया है। उन्होने यह भी बताया कि सभामे एक लाखसे ऊपर स्त्री-पुरुष इकट्ठे होगे, जिनमेसे अधिकतर पश्चिमी पाकिस्तानके दुःखी है। मैने कहा कि मुझको क्यो ले जाते है? सिक्ख आज मुझे दुश्मन मानते है। फिर भी उन्होने कहा कि आपको आना ही होगा और जो कुछ कहना चाहते है, कह सकते है। मैने कहा कि सभामें दो-चार बात कहूंगा।

---

[1] कार्त्तिक पूर्णिमा।

माता बालकको कडवी दवा पिलाती है। यह बच्चेको अच्छा नही लगता, फिर भी माता पिलाती है। मुझे मेरी मा इसी तरह कडवी दवा देती थी, फिर भी मै उसकी गोदमे छिप जाता था। मैने सिक्खोको जो कुछ कहा है, उसमेसे एक भी शब्द वापस नही लेना चाहता हू, क्योकि मै तो आपका सेवक हू, भाई हू।

मेरे साथ सर दातारसिहकी लडकी है। उनका कितना नुकसान हुआ है? वह ताराज (बरबाद) हो गए है, फिर भी आप नही गिराते है। यह देखकर मुझे आनद होता है। वह मुसलमानोको दुश्मन नही मानते है। कहा जाता है कि एक सिक्ख सवा लाखके बराबर है। सवा लाख सिक्खोके बीचमे मुट्ठीभर मुसलमान नही रह सकते क्या? मुझसे पूछो तो मै कहूगा कि झगडा शुरू तो पाकिस्तानने किया है, लेकिन पूर्वी पजाबमे हिदुओ और सिक्खोने कुछ कम नही किया। हिदू, सिक्खो-जैसे बहादुर नही है। सिक्खोने तो तलवार चलाना सीखा है। हिदुओको यह तालीम नही मिली।

आप देखते है कि शेख अब्दुल्ला मेरे साथ है। मैने तो कहा था कि वे कैसे यहा आ सकते है? आज तो मुसलमान सिक्खो और हिदुओके दुश्मन हो गए है। मगर बाबाने कहा कि वह तो सच्चे शेरे-काश्मीर है। उन्होने बडा भारी काम किया है। काश्मीरमे सब मिल-जुलकर रहते है। सिक्ख उन्हे मानते है। जम्मूमे हिदुओ और सिक्खोने मुसलमानोको कतल किया है, फिर भी शेख अब्दुल्ला जम्मू चले गए। आजके शुभ दिन आपने मुझे और शेख साहबको आदरपूर्वक बुलाया, इसकी मुझे खुशी है।

आजसे आप जिदगीका नया पन्ना शुरू करे तब तो मेरे-

जैसा आदमी जिदा रह सकता है। आज भी मुसलमानोको दिल्लीसे भगानेकी कोशिश चल रही है। मैने आते समय चादनी चौकमे एक भी मुसलमानको नही देखा। यह हम सबके लिए शर्मकी बात है। मुसलमानोकी तादाद छोटी-सी है। उनको हलाल करना गुनाह है। अगर कोई मुसलमान बेवफा हो तो हुकूमत उससे लडेगी, उसे मारेगी। मगर हम क्यो कानून अपने हाथमे ले? आज हम बेगुनाहोको मारनेके लिए तैयार हो जाते है। ऐसा करके आप कृपाण और सिक्ख धर्मको शरमिदा करते है। इसलिए आजसे आप जिदगीका नया पन्ना शुरु करें। मै रावलपिडी गया था। वहा क्या-क्या हुआ, सब जानता हू। उसे कभी भूल नही सकता। आप लोग पश्चिमी पजाबसे दुखी होकर आए है, यह मै समझ सकता हू, लेकिन हम गुस्सा करके क्या करेगे? बदला लेनेवाली हमारी हुकूमत तो है ही। गुरु गोविदसिहने बेगुनाहोपर कभी तलवार नही चलाई थी। उनके साथ मुसलमान भी रहते थे। गुरु नानकने जो सिखाया है, उसकी हम आज अवगणना कर रहे है। नाच-रगसे धर्मको लजाते है। हिंदू, सिक्ख, ईसाई, अग्रेज कोई भी गुनाह करे तो मुझे चुभता है और मुझे लगता है कि मै गुनाह करता हू। मेरी तो आपसे यही प्रार्थना है कि आप अपने दिलोको साफ करे और अपनी तलवारको म्यानमे रख दे। कोई बदमाशी करे तो हुकूमत उसे देख लेगी। गुरु ग्रन्थ-साहबसे मै यही अर्ज करता हू कि वह हर एक सिक्खका दिल साफ बनावे, ताकि वे गुनाहका बदला गुनाहसे न ले।

: ५४ :

आशाकी झलक

जव हर तरफसे निराशा-ही-निराशा होने लगती है तो जव-तव आशाकी किरण भी दिखाई दे जाती है। इस आशाका स्रोत है 'हरिजन' सवंधी मेरे पत्र-व्यवहारकी फाइल, जो खाली समयमे मेरे पढनेके लिए सुरक्षित रखी गई है।

वोचासन रेजीडेशियल स्कूलके शिवभाई पटेलका एक पत्र ऐसा ही है। वार्षिक उत्सवोमे जितना काम उन्होने किया है उसीका खुलासा इस पत्रमे है। आजकल हरिजन-आश्रम कहे जानेवाले पहलेके सावरमती सत्याग्रह-आश्रमकी गगावहनने और परम उद्योगी रविशकर महाराजने अपने साथ ही रहनेवाले दो पुत्रोके सहयोगसे उन्हे वडी सहायता पहुचाई है। हालहीमे जो जलसा हुआ था, उसमे एक विशेपता यह थी कि हमेशाकी तरह पैरसे चलनेवाली धुनाई-मशीनकी पूर्नियां काममे न लाकर इस वार तुनाई-पद्धतिका ही कार्यक्रम चला। इसी मौकेपर व्यवस्थापकोने वहाके पिछडे हुए लोगोके वच्चोके लिए जो छात्रालय वनवानेका निश्चय किया था, वह वन गया है और उसमे दस छात्रोको दाखिल करके कार्यका श्रीगणेश कर दिया गया है। सात साल वाद उन्हे सामान्य स्कूलोके चारो दर्जे पास छात्रोके लिए दिनका स्कूल खोलनेकी आज्ञा दी गई है। उन्हे आशा है कि अगले छ· वर्षोमे वे दर्जोकी सख्या दसतक कर देगे और अग्रेजीके वजाय खादी, वढईगिरी और कृपि-विज्ञानकी पढाईकी व्यवस्था भी करेगे। पिछले

वर्षोके बावजूद इस साल विद्यार्थियोके अभिभावकोको अपने लडकोके चरित्र-निर्माणमे रस आने लगा है। नतीजा यह हुआ है कि पिछले अक्तूबरवाले जलसेके बाद चार महीनोके अदर ही खूब सिगरेट फूकनेवाले और तेज चाय पीनेवाले लडकोने अपनी ये आदते छोड दी। लडकोके सुधारसे प्रभावित होकर उनके सरक्षकोने भी मुहसे चिमनियोकी तरह धुआ उगलनेवाली और पाचन-शक्तिको खराब कर देने-वाली अपनी लत छोड दी है। पहले जब लडकोको स्कूलमे भर्ती किया गया था तब वे न तो सीधे बैठ सकते थे और न पाच मिनटके लिए चुप ही रह सकते थे। अब उन्हे एक घटेतक शात होकर हाथसे सूत कातना रुचता है। सन्ध्याकी गोशालाकी देखभाल गगाबहन करती है और सबको दूध मिल जाय इसका ध्यान रखती है।

उत्सवके दिनोमे विद्यार्थी अच्छे-अच्छे सवाद करते थे जिन्हे सुननेके लिए काफी लोग इकट्ठे होते थे। लडकोने बिना किसी हिचकके खादीकी शक्लमे आनेसे पहलेकी रुईकी सभी क्रियाओका प्रदर्शन किया। तेईस विद्यार्थियोने सुलेखन लिखाईकी प्रतियोगितामे भाग लिया जब कि इस विषयको ऐसी अवहेलनाकी दृष्टिसे देखा जाता है कि मानो सुलेखन लिखाईका अच्छी शिक्षामे कोई स्थान ही नही है।

नई दिल्ली, २२-११-४७

: ५५ :

जैसा सोचो वैसा ही करो

राजकुमारीने डॉ० माड रॉयडन द्वारा उनके पास भेजा गया एक खत मुझे पढनेके लिए दिया है। उस खतका सगत अश मै यहा देता हू :

"यह देखकर मुझे सचमुच बड़ा अचरज होता है कि दुनियाका सबसे बड़ा ईसाई, ईसाई सप्रदायमेंसे नही है। पिछले दो-तीन हफ्तोसे मैं नया लिखा हुआ आलबर्ट स्विट्जरका जीवन-चरित पढ रहा हू। उसमे भी मुझे ऊपर बताया हुआ विरोध नजर आता है। हिंदुस्तानमें लोग स्विट्जरके नामसे परिचित है या नहीं, मै नहीं जानता। मगर मुझे खुदको लगता है कि अपनी महत्तामे आज वह दुनियामे बेजोड़ है। आप शायद जानते होगे कि 'सनातनी' ईसाई स्विट्जरको शककी नजरसे देखते है, क्योकि ऐसा माना जाता है कि हमारा उद्धार करनेवाले ईसामसीहके बारेमें उसका जितना चाहिए उतना ऊंचा खयाल नही है। और फिर भी आप मेरी बात मानें कि आज सारी दुनियामे ऐसा ईसाई नहीं है, जो स्विट्-जर-जैसी हिम्मत-भरी अडिग श्रद्धासे और पूरी-पूरी समर्पणकी भावनासे ईसामसीहका अनुसरण करता हो। फिर मैंने स्विट्जरकी फिलासफी पढी, 'जीवनके बारेमें उसका पूज्य भाव' देखा और नाजारेथके यीशुके बारेमें उसके द्वारा हमेशा किए गए उल्लेखको पढा। तब मुझे यकीन हो गया कि स्विट्जरने अपने पाठकोके दिलोमे ईशुकी जितनी ऊंची जगह दी है, उतनी किसी दूसरेने नहीं दी। दूसरे दार्शनिको और स्विट्जरमें सिर्फ इतना ही फर्क है कि स्विट्जर जो कुछ विचार करता है, लिखता है, या कहता है, उसपर अपने जीवनमें अमल किए बिना नहीं रहता; बल्कि वह विचार ही इस तरह करता है कि उसपर उसे अमल करना है।

अब मेरी समझमें आया कि क्यों उसके विचार, पाठकोंके मनपर अपनी कठोर और भयजनक-प्रामाणिकताकी छाप डालते हैं। अमल करनेका खयाल रखे बगैर अगर आप विचार करते रहें तो सब किस्मकी झूठी बातोंका विचार करना आसान हो जाता है। अगर आपको पहलेसे ही इस बातका भान हो कि जो विचार आप करते हैं, उसपर आपको जीवनमें अमल करना है तो खयाल कीजिए कि कैसी बारीकीसे और कितने सच्चे दिलसे आप विचार करेंगे!"

नई दिल्ली, २२-११-'४७

: ५६ :

बहादुरी या बुजदिलीकी मौत

एक बंगाली दोस्तने पूर्वी पाकिस्तानसे हिंदुओंके हिजरत करनेपर बंगालीमें एक लंबा खत लिखा है। उसका सार यह है कि अगरचे उन-जैसे कार्यकर्ता मेरी दलीलको समझते और उसकी तारीफ करते हैं, और साथ ही बहादुरी और बुजदिलीकी मौतके फर्कको भी समझते हैं, मगर मामूली आदमीको मेरे बयानमें हिजरत करनेकी ही सलाह नजर आती है। वह कहता है—

"अगर हर हालतमें मौतसे ही पाला पड़ना है तो जीवन रखनेकी कोई कीमत नहीं रह जाती, क्योंकि इन्सान मौतसे बचनेके लिए ही जीता है।"

इस दलीलमें उन बातोंको पहलेसे ही मान लिया गया है

जिसे साबित करना है। इन्सान सिर्फ मौतसे बचनेके लिए ही नही जीता। अगर वह ऐसा करता है तो मेरी सलाह है कि वह ऐसा न करे। उसे मेरी सलाह है कि अगर वह ज्यादा न कर सके तो कम-से-कम मौत और जिदगी दोनोको प्यार करना सीखे। कोई कह सकता है कि यह एक मुश्किल बात है और इसपर अमल करना और भी मुश्किल है। मगर हर उचित और महान् काम मुश्किल तो होता ही है। ऊपर उठना हमेशा मुश्किल होता है। नीचे गिरना आसान है और उसमे अक्सर फिसलन होती है। जिदगी वहीतक जीने लायक होती है, जहातक मौतको दुश्मन नही, बल्कि दोस्त माना जाता ह। जिदगीके लालचोको जीतनेके लिए मौतकी मदद लीजिए। मौतको टालनेके लिए एक बुजदिल आदमी अपनी इज्जत, अपनी औरत, अपनी लडकी, सब कुछ सौप देता है और एक हिम्मतवर आदमी अपनी इज्जत खोनेके बजाय मौतसे भेटना ज्यादा पसद करता है। जब समय आएगा, जो कि आ सकता है, तब मै अपनी सलाहको लोगोकी कल्पनाके लिए नही छोडूँगा, बल्कि क्रियाकी भाषामे उसे करके दिखा दूगा। आज अगर सिर्फ एक या दो ही आदमी मेरी सलाहपर चलते है या कोई भी नही चलते तो इससे उसकी कीमत घट नही जाती। शुरुआत हमेशा कुछ ही लोगोसे होती है। एक आदमीसे भी शुरुआत होती है।

नई दिल्ली, २३–११–’४७

: ५७ :

नेशनल गार्ड

पूर्वी बंगालसे एक भाईने खत लिखकर मुझसे पूछा है

"पाकिस्तानकी सरकार नेशनल गार्ड या किसी दूसरे नामसे एक स्वयंसेवक-सेना जरूर खड़ी करेगी। अगर हिंदुओंसे उसमें शामिल होनेके लिए कहा जाय तो वे क्या करें? अगर उस फौजमें सिर्फ मुसलमान ही लिए जायं तो हिंदू क्या करें?"

मौजूदा परिस्थितिमें इस सवालका जवाब देना मुश्किल है। करीब-करीब हर मुसलमानपर यूनियनमें शक किया जाता है। इसी तरह चाहे पूर्वी पाकिस्तान हो, चाहे पश्चिमी, दोनोंमें हिंदुओं और सिक्खोंको शककी नजरसे देखा जाता है। अगर उस फौजमें भर्ती होनेके लिए दिलसे बुलाया जाता है तो मेरी सलाह है कि हिंदू भर्ती हो जायं। बेशक भर्तीकी शर्तें सबके लिए एक-सी हों और किसीके धर्मके साथ कोई दस्त-दाजी न हो। और अगर उस फौजमें सिर्फ मुसलमान ही लिए गए और हिंदुओंको नहीं बुलाया गया तो आजकी परिस्थितिमें हिंदू चुपचाप बैठ जायं। कोई आंदोलन न करें और ऐसा करते हुए दिलोंमें भी गुस्सा न रखें।

नई दिल्ली, २३-११-'४७

: ५८ :

विश्वास नहीं होता

वही बगाली भाई[1] लिखते है

"पूर्वी बगालकी सरकारने अपने गजटमें यह हुक्म निकाला है कि जो लोग अखड बगालकी नीतिकी हिमायत करेंगे, उन्हें मौतकी सजा दी जायगी।"

इस बातपर विश्वास कर सकनेके पहले मै सरकारी हुक्मकी नकल देखना चाहूगा। मुझे विश्वास है कि अगर इस तरहका कोई हुक्म होगा भी तो उसके ठीक-ठीक शब्दोका मतलब दूसरा ही होगा। मै पूर्वी बगालमे अखड बगालकी हिमायत करनेके अपराधको समझ सकता हू। लगभग सारे हिदू और बहुतसे मुसलमान ऐसे मिलते है जो बटवारेके खिलाफ राय रखते है। फिर भी, कोई पागल आदमी ही एक बार हो चुके बटवारेके सामने लडनेकी हिम्मत करेगा। बटा हुआ बगाल सिर्फ दोनो पार्टियोकी मरजीसे ही अखंड बन सकेगा। लेकिन अगर किसीको जनताकी रायकी एकताकी तरफ बदलनेकी इजाजत न दी जाय तब तो दोनो पार्टियोकी वह मजूरी नामुमकिन हो जायगी। ऐसा पागलपनभरा हुक्म कोई सरकार न निकालेगी।

नई दिल्ली, २३–११–'४७

---

[1] २३-११-'४७ के पिछले लेखमें जिनका जिक्र है।

: ५९ :

भाषावार विभाजन

आचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवाल लिखते हैं —

"नई-नई विद्यापीठें खोलनेके बारेमें आपका लेख 'हरिजन' में पढ़ा। मैं यह मानता हूं कि भाषावार प्रान्तोंकी रचनाके पहले नई विद्यापीठें स्थापित करनेमें कठिनाई होगी। लेकिन प्रान्तोंको भाषाके आधारपर बनानेमें कांग्रेसकी ओरसे इतनी ढिलाई क्यों हो रही है, यह मैं समझ नहीं सका हूं। कांग्रेस सन् १९२० से ही यह मानती आई है कि प्रान्तोंकी पुनर्रचना विविध-भाषाओंके अनुसार हो। लेकिन मौका आनेपर अब इस कामको लम्बानेकी या टालनेकी कोशिश की जा रही है, ऐसा मेरा ख्याल है। विधान परिषद्में भी इस विषयको स्थगित-सा कर दिया गया है। यह बात मुझे उचित नहीं जान पड़ती। बिना भाषावार प्रान्त रचना हुए न तो शिक्षाका माध्यम मातृभाषाको बनाना आसान होगा और न अंग्रेजीको राजभाषाके स्थानसे हटाना सरल होगा। बम्बई, मद्रास और मध्यप्रान्त बरार जैसे बेढंगे और बहुभाषी प्रान्तोंका हमारे नये विधानमें स्थान ही नहीं होना चाहिए। और अगर हमने इस प्रश्नको टालनेकी कोशिश की तो एक ही प्रान्तमें विभिन्न भाषा बोलनेवालोंका पारस्परिक विद्वेष अधिक बढ़ता जायगा। बहुभाषी प्रान्त रखनेसे भाषा-द्वेष कम नहीं होगा, बल्कि दिन-दिन बढ़ेगा, यह स्पष्ट है। आज देशके सामने हिन्दू-मुस्लिम समस्याने भयंकर रूप धारण किया है और हमारे नेताओंकी शक्तियां उसी ओर अधिक लगी हैं, यह ठीक है। लेकिन अगर देशका बटवारा करना ही था तो कई साल पहले ही कर लेना था। उस हालतमें इतनी खून-खराबी न होती। इसी तरह अगर हमें प्रान्तोंका बटवारा भाषावार करना है तो देर करनेसे

कोई फायदा नही होगा। नुकसान भी होगा, क्योकि कटुता बढ़ती जायगी।"

फिर भी भाषावार सूबोके विभाजनमे देर होती है, उसका सबब है। उसका कारण आजका बिगडा हुआ वायुमडल है। आज हरएक आदमी अपना ही देवता है, मुल्कका कोई नही। मुल्ककी ओर जानेवाले, उसका भला सोचनेवाले लोग है जरूर, लेकिन उनकी सुने कौन ? अपनी ओर खीचनेवाले लोग शोर मचाते है, इसलिए उनकी बात सब सुनते है। दुनिया ऐसी है न ?

आज भाषावार सूबोका विभाजन करनेमे झगडेका डर रहता है। उडिया भाषाको ही लीजिए। उडीसा अलग सूबा बन गया है, फिरभी कुछ-न-कुछ खीच रही ही है। एक ओर आध्र, दूसरी ओर बिहार और तीसरी ओर बगालहै। काग्रेस ने तो भाषावार विभाजन सन् १९२० मे किया। कानूनन तो उडिया बोलनेवाले सूबेका ही हुआ। मद्रासके चार विभाग कैसे हो ? बम्बईके कैसे ? आपसमे मिलकर सब सूबे आवे और अपनी हद बना ले तो कानूनके अनुसार विभाग आज बन सकते है। आज हुकूमत यह बोझ उठा सकती है ? कांग्रेसकी जो ताकत १९२० मे थी, वह आज है ? आज उसकी चलती है ?

आज तो दूसरे हकदार भी पैदा हो गए है। ऐसे मौकेपर हिन्दुस्तान बेहाल-सा लगता है। आज तो सघ (मेल) के बदले कुसघ (फूट) है, उन्नति के बदले अवनति है, जीवनके बदले मौत है। जब कौमी झगडे बद होगे तब हम समझ

सकेंगे कि सब ठीक हुआ है। ऐसी हालतमें भाषावार विभाजन लोग आपसमें मिलकर कर लें तो कानून आसान होगा, अन्यथा शायद नहीं।

नई दिल्ली २४-११-'४७

: ६० :

इसमें तुलना कैसी ?

एक वजीरने कुछ दिनों पहले मुझसे पूछा था

"कई बार मैंने सुना है कि धर्म और धर्माभिमान और स्वदेशाभिमानकी तुलना करें तो स्वदेशाभिमान ऊंचा ठहरता है। क्या आप इसे मानते हैं ?"

मैंने जवाब दिया, "मैं नहीं मानता। एक ही जातिकी चीजोंके बीच तुलना की जा सकती है। अलग-अलग जातिकी चीजोंकी तुलना करना असंभव है। हर चीज अपनी जगहपर रहते हुए दूसरी चीजोंके बराबर ही कीमत रखती है। इन्सानको अपना धर्म और अपना देश दोनों प्यारे हैं। वह एकको देकर दूसरा नहीं लेगा। उसे दोनों एकसे प्रिय हैं। वह रावणकी चीज रावणको देगा और रामकी रामको। अगर रावण अपनी मर्यादा तोड दे तो रामका भक्त दूसरे रावणको ढूंढने नहीं जायगा। मगर वह मर्यादाको तोडनेवाले रावणसे ही निपट लेगा।"

इस किस्मकी मुश्किलोंके बारेमें मुझे सत्याग्रह-जैसा अमूल्य रत्न मिला। एक मिसाल लीजिए। मान लीजिए कि

एक आदमीकी मा जिदा है, औरत जिदा है और उसकी एक लडकी है। अपनी-अपनी जगहपर ये तीनो उसे एक जैसी ही प्यारी होनी चाहिए। जब कोई कहता है कि अपनी औरतके खातिर इन्सान अपनी माको और लडकीको छोड सकता है तब मुझे यह जगली भूल मालूम पडती है। इससे उलटा भी वह नही कर सकता। अपनी मा या लडकीके लिए औरतको भी वह नही छोडेगा। और मान लीजिए कि तीनो-मेसे एक भी अपनी मर्यादा छोडती है तो तीनो शक्तियोके बीचमे सतुलन बनाए रखनेके लिए वह सत्याग्रहकी नीतिका उपयोग करेगा।

नई दिल्ली, २९-११-'४७

: ६१ :

हिम्मत न हारिए

मैडम ऐडमड प्रिवेटके २७ अगस्त, १९४७ के पत्रका नीचेका हिस्सा यहा दिया जाता है

"आज मुझे लगता है कि मै आपको यह बता दू कि हिदुस्तानकी पिछली महान् घटनाओका हमपर कैसा गहरा असर हुआ है। यहा मेरा मतलब हिदुस्तानकी आजादीसे और उसपर हमें होनेवाले आनदसे है।

"हा, हम जानते है कि आपको हिदुस्तानके आजादी मिलजानेसे कोई खुशी नहीं हुई। हमने इस बारेमे आपका लेख 'हरिजन' में पढा है, लेकिन

बापू ! आप हिम्मत न हारिए । सोचिए, जरूर सोचिए कि हम पश्चिम-वालोंके लिए उसका क्या महत्त्व है । हिंदुस्तानने अपने विरोधीका खून बहाए बिना यह क्रांति की और वह आजाद हो गया । भूतकालसे मुकाबला करनेपर यह क्रांतिकारी घटना जबरदस्त तरक्की मालूम होती है । हिंदुस्तानकी यह कामयाबी इतनी ऊंची है कि इतिहासमें इतने बडे पैमानेपर उसकी कहीं मिसाल नहीं मिलती ।

"ओ बापू ! क्या खूनकी भयानक होली खेलकर हाल ही बाहर निकलनेवाले यूरोपके हम लोगोंके खातिर आप यह नहीं देख सकते कि हिंदुस्तानका नया प्रभात हमें कितना चमकीला, कितना लुभावना और कितना अलौकिक मालूम होता है ?

"ओ हमारी अनोखी आशाके प्रतीक बापू ! आप हमारी खुशीसे धीरज रखिए, हिम्मत बांधिए और दृढ बनिए । हम आपको सिर्फ अपना आध्यात्मिक नेता ही नहीं मानते, बल्कि ऐसे आदमीका जीता-जागता उदाहरण समझते हैं, जिसने समतोल या प्रसन्नता खोए बिना रोजाना जिंदगीमें अपने विश्वासपर पूरी तरह अमल किया है । क्या आपने ही हमें अपने धर्मका यह कीमती संदेश नहीं दिया है कि फलकी आशा रखे बिना पूरे दिलसे अपना काम करो और बाकी सब भगवानके भरोसे छोड दो ? आपने जो कुछ किया, अपनी पूरी श्रद्धा और हिम्मतके साथ किया । अब भगवान हमें यह दिखाता है कि अहिंसासे, जो अनोखी आशाकी जननी और हमारी सभ्यताको बरबादीसे बचानेका एकमात्र साधन है, क्या-क्या हासिल किया जा सकता है । शायद आपकी दलील यह है कि हिंदुस्तानकी आजादीकी लडाईमें जिस अहिंसाका उपयोग किया गया, वह हमेशा पूर्ण नहीं थी, लेकिन इतना तो मुझे पक्का विश्वास है कि आपसे प्रेरणा पाए हुए आपके भले लोगोंने इसके लिए ईमानदारीसे कोशिश जरूर की ।

"हम आशा रखें कि हम आपके इस संदेशके लायक साबित होंगे और अपने यहां उसका पूरा-पूरा उपयोग करेंगे।

"यह सच है कि यहांके बहुत थोड़े लोग उसके सच्चे अर्थको समझते हैं, लेकिन उसके लिए वातावरण यहां तैयार है।

"हम दिलमें हिम्मत रखकर और भगवानमें भरोसा रखकर काम करें!

"२७ जुलाई, १६४७के 'हरिजन' में छपा आपका लेख, जिसका मैंने इस खतके शुरूमें जिक्र किया है, एडमंडद्वारा किया तरजुमा अगले 'एसोर'में छापा जा रहा है। (सच पूछा जाय तो यह पूरा अंक ही हिंदुस्तानके बारेमें है।)

"मुझे खुशी है कि 'एसोर'के पाठकोंको एक बार फिर आपका वह दृष्टिकोण जाननेको मिलेगा, जिसपर आपने जोर दिया है। एक बार फिर उनका ध्यान मंद विरोध और अहिंसाके बुनियादी भेदकी तरफ तत्परतासे खिंचेगा।

"इसके बारेमें मैं जितना सोचती हूं, उतना ही मेरा यह पक्का विश्वास होता जाता है कि लोग इस भेदको नहीं समझते—नहीं समझ सकते। वे मंद विरोधका इस्तेमाल करते हैं, पर कामयाबी न मिलनेपर निराश हो जाते हैं, हालांकि वे अपनी कोशिशमें पूरे ईमानदार रहते होंगे।

"अक्सर हकीकत यह होती है कि लोग अनजानमें अपने आपसे झूठ बोलते हैं।

"इसलिए पिछले कुछ दिनोंसे मैं मनोवैज्ञानिक विश्लेषणकी थोड़ी जानकारी पानेकी कोशिश कर रही हूं। पहले लोग कहा करते थे कि शैतान हमारे दिलमें बैठकर हमें बुरे रास्ते ले जानेका जो खेल खेला करता

है, उससे हमें सावधान रहना चाहिए।

"आजकल लोग सचाईतक पहुंचनेके लिए ज्यादा वैज्ञानिक तरीके चाहते हैं। मनोवैज्ञानिक विश्लेषणकी विद्या दिमागी बीमारियोंके रोगियोंको अच्छा करनेका उपाय तो है ही। साथ ही, वह मामूली लोगोंकी मानसिक उलझनोंको भी दूर करनेमें मददगार हो सकती है। इस तरह लोग ज्यादा जाग्रत बनते हैं और यह जागृति, ईमानदारीसे कोशिश करनेपर उन्हें अहिंसाका सच्चा उपयोग करने लायक बनाती है।"

मैं देखता हूं कि आप मंद विरोध और अहिंसक विरोधका बुनियादी फर्क समझ गई हैं। विरोध दोनों ही रूपोंमें है, मगर जब आपका विरोध मंद विरोध होता है तब विरोध करनेवालेकी कमजोरीके अर्थमें आपको उसकी बहुत बडी कीमत चुकानी पडती है। यूरोपने नाजारेथके ईशुके बहादुरी, हिम्मत और पूरी बुद्धिमानीसे किए हुए विरोधको मंद विरोध समझनेकी गलती की, जैसे वह किसी कमजोरका विरोध हो। जब मैंने पहली बार न्यू टेस्टामेंट पढी तभी चार गॉस्पेल्सोंमें बयान किए गए ईशुके चरित्रके बारेमें कोई निष्क्रियता, कोई कमजोरी मुझे नहीं मालूम पडी। और जब मैंने टॉल्स्टॉयकी 'हार्मनी ऑव दी गॉस्पेल्स' नामकी किताब और उनकी इस विषयसे संबंध रखनेवाली दूसरी किताबें पढी तब उनका मतलब और ज्यादा साफ हो गया। क्या ईशुको मंद विरोध करनेवाला समझनेकी गलती करनेके लिए पश्चिमको बहुत बडी कीमत नहीं चुकानी पडी है? सारे ईसाई देश उन नायकोंके लिए जिम्मेदार रहे हैं, जिन्होंने ओल्ड टेस्टामेंटमें बयान किए गए और दूसरे ऐतिहासिक और अर्धऐतिहासिक महान् नेताओं[illegible]

धब्बा लगाया है। मै जानता हू कि मेरी बातमे कुछ गलती हो सकती है, क्योकि नए और पुराने दोनो तरहके इतिहासकी मेरी जानकारी बहुत थोडी है ।

अपने निजी अनुभवके बारेमे मै कहूगा कि बेशक हमको मद विरोधके जरिए राजनैतिक आजादी मिली, जिसपर आप और आपके पति जैसे पश्चिमके शातिपसद लोग इतने उत्साहित है। मगर हमने, या कहिए कि मैने मद विरोधको अहिसक विरोध मान लेनेकी जो भयकर भूल की, उसकी भारी कीमत हम रोजाना चुका रहे है। अगर मैने यह गलती न की होती तो हमे एक कमजोर भाईके हाथो दूसरे कमजोर भाईके बिना सोचे-बिचारे वहशियाना ढगसे मारे जानेका शर्मनाक दृश्य न देखना पडता ।

मै सिर्फ यही उम्मीद और प्रार्थना करता हू और यहाके व दुनियाके दूसरे हिस्सोमे रहनेवाले दोस्तोसे चाहता हू कि वे भी मेरे साथ यह उम्मीद और प्रार्थना करे कि यह खूनकी होली जल्द खतम होगी और उसमेसे––शायद अनिवार्य खून-खराबीमेसे––निकलकर एक नया और मजबूत हिदुस्तान ऊपर उठेगा। वह पश्चिमकी सारी भयकरताओकी नीचतासे नकल करनेवाला लडाई-पसद हिदुस्तान नही होगा । वह पश्चिमकी सारी अच्छी बातोको सीखनेवाला और एशिया व अफ्रीका ही नही, बल्कि सारी दुखी दुनियाका आशाकेंद्र बननेवाला हिदुस्तान होगा ।

मुझे मानना चाहिए कि यह दुराशामात्र है, क्योकि आज हम फौजमे और जिस्मानी ताकतको व्यक्त करनेवाली सारी

चीजोमे पक्का विश्वास रखने लगे है। हमारे राजनीतिज्ञ अंग्रेजी हुकूमतमे हथियारोपर किए जानेवाले भारी खर्चके खिलाफ दो पीढियोतक आवाज उठाते रहे है। मगर अब चूकि राजनैतिक गुलामीसे हमे छुटकारा मिल गया है, हमारा फौजी खर्च बढ गया है, और भय है कि वह और ज्यादा बढेगा। और इसपर हमे अभिमान है! इसके खिलाफ हमारी धारासभाओमे एक भी आवाज नही उठी है। फिर भी मुझे और बहुतसे दूसरे लोगोको उम्मीद है कि इस पागलपन और पश्चिमके भड-कीलेपनकी झूठी नकल करनेके बावजूद हिंदुस्तान इस मौतके मुहसे बच जायगा और सन् १९१५ से लगातार ३२ साल-तक अहिसाकी तालीम लेनेके बाद उसे जिस नैतिक ऊचाईपर पहुचना चाहिए, वहा पहुच जायगा।

नई दिल्ली, २९-११-'४७

: ६२ :

मालिककी बराबरी किस तरह करोगे ?

मजदूर-दिनके लिए आपने मेरा सदेश मागा है। मेरा जीवन ही मेरा सदेश है। मजदूरोने अगर अहिसाका पाठ पूरी तरहसे समझा हो तो उनमे हिंदू-मुसलमानका भेदभाव नही होना चाहिए। हिंदुओमे छूआछूतकी गधतक न हो। मजदूरोमे भेदभाव किस बातका ? मजदूरको अगर मालिककी

बराबरी करनी हो, तो उसे मिलको अपनी मिल्कियत समझकर उसकी सार-सभाल करनी चाहिए। अन्यायका विरोध कैसे किया जाय, यह बात तो अहमदाबादके मजदूर सीख गए है। मगर वे मालिकके साथ मिलोके साझीदार बने, उससे पहले उन्हे दूसरे बहुतसे पाठ सीखने है। क्या यह बात वे जानते है? वे याद करे और आगे बढे।'[1]

नई दिल्ली, २९-११-'४७

: ६३ :

संकटका समझदारीभरा उपयोग

"आप शरणार्थियोके बारेमें उतना ही जानते है, जितना दूसरा कोई जानता है। उनके दु ख-दर्दकी कहानिया दिलको तोड़ देनेवाली हैं। कुछ ही हफ्तो पहले वे लोग खुशहाल थे, लेकिन आज कगाल हो गए है। डॉक्टरीका धंधा करनेवाले लोग अपने साथ उस धंधेका कोई सामान पाकिस्तानसे नहीं ला सके है। चीर-फाड़ वगैराके औजार और डाक्टरीकी किताबें भी उनसे छीन ली गई है। निजी माल-असबाब और पैसा-टका सब वहीं छोडना पड़ा। वे सच्चे मानोमें गरीब, निराश्रित और बेरोजगार हो गए हैं। वे नहीं जानते कि वे क्या करें।

"आपने प्रार्थनाके बादके अपने भाषणोमें हमेशा यह कहा है कि आजके

---

[1] 'मजदूर-दिन' के बारेमें गाधीजीका अहमदावादके मजूर-महाजन-को श्रीअनसूयाबहनके मार्फत भेजा गया सदेश।

सकटका समय हमारी कसौटीका समय है। उसमें हमारा जीतना या हारना अपने आपपर निर्भर करता है। हालाकि हमारी पूरी हमदर्दी शरणार्थियोके साथ है, फिर भी यह कबूल करना पडेगा कि उनमें सूझ-बूझकी कुछ कमी है। वे खुद अपनी रोजी कमानेका कोई उपाय नहीं खोजते। इससे उनकी तकलीफें और ज्यादा बढ गई है। ज्यादातर डॉक्टरो और वैद्योकी—जो पाकिस्तानके अलग-अलग शहरोमें अपनी खूब पैसा देनेवाली प्रैक्टिस छोडकर यूनियनमें आए है—सिर्फ एक ही माग है कि उन्हें दिल्लीकी किसी अच्छी बस्तीमें दूकान या मकान दे दिया जाय। जिन मर्दो और औरतोको वहासे नौकरी छोडकर आना पडा है, वे चाहते है कि केंद्र या सूबेकी कोई सरकार उन्हें फिर नौकरी दे दे। लेकिन आजकी हालतमें ऐसे हजारो लोगोमेंसे थोडे ही लोग मनचाही जगह या नौकरी पानेकी उम्मीद रख सकते है। अगर सब डॉक्टरो या वैद्योको मनकी जगह मिल जाय तो भी वे एक ही शहरमें शायद अपनी प्रैक्टिस नहीं जमा सकेंगे। जिन लोगोको बदकिस्मतीसे दूकान या मकान नहीं मिलते, वे सोचते है कि उनके साथ न्याय नहीं किया जाता। मुझे लगता है कि आप अपनी कलमसे इन लोगोको कोई सलाह दें तो इन्हें सही रास्ता दिखाई देगा।

"आज हमारे देशको हर मैदानमें सेवाकी जरूरत है, खास कर डॉक्टरी धधेकी हर शाखाके सदस्योको तो जनताकी सेवामें लग जाना कठिन नहीं मालूम होना चाहिए, बशर्ते कि वे छोटे शहरो या गावोमें जमनेके लिए तैयार हो। वहा रहकर वे लोगोको सिर्फ डॉक्टरी मदद ही नहीं दे सकेंगे, बल्कि लोगोको बीमारियोसे बचनेके लिए सफाई और नियमसे रहना भी सिखा सकेंगे। अगर हमारी सरकारें ग्राम-सुधारके कार्यक्रमो-को सचमुच अमलमें लाना चाहती है तो मुझे तो कोई कारण नहीं दिखाई देता कि सारे डॉक्टर, सर्जन, नर्स और शिक्षक सीधे सरकारी नौकरीमें

क्यो नही लिए जा सकते। किसी सब-डिवीजन या गांवमें जम जानेसे भी एक अरसेके बाद खानगी प्रैक्टिसमें जरूरतसे ज्यादा पैसे मिलने चाहिए। हा, ऐसे हर मर्द या औरतको शहरी जीवनके सुख-सुभीते छोडनेके लिए तैयार रहना चाहिए। शायद इनसे उन्हें हमेशा फायदा भी नही हुआ है। अगर वे चतुर, ईमानदार और हमदर्द हो तो राजपर आजकी तरह बोझ बननेके बजाय निश्चित रूपसे उसे फायदा पहुंचा सकते है। तब हमारा आजका संकट वरदान बन जायगा।"

यह खत एक ऐसे व्यक्तिने लिखा है, जो इस संकटके बारेमे सब कुछ जानता है। इसमे जरा भी शक नही कि अगर इस भयानक मुसीबतके शिकार बने लोग और जनता—जिसके बीच उन्हे कुछ समयके लिए रहना पड रहा है—सही बरताव करे तो यह सकट वरदान बन सकता है। मुझे कोई शक नही कि इस सकटमे डॉक्टरो, वकीलो, वैद्यो, हाकिमो, नर्सों, व्यापारियो और बैंकरो जैसे खास तालीम पाए हुए सब लोगोंको दूसरोके साथ सुख-दु ख उठाकर पूरे सहकारसे छावनी-का एक-सा जीवन बिताना चाहिए। उन्हे अपनेको दानपर जीनेवाले लाचार स्त्री-पुरुष नही, बल्कि होशियार सूझ-बूझ-वाले और आजाद स्त्री-पुरुष महसूस करना चाहिए, अपने दु.खोकी ज्यादा परवाह नही करनी चाहिए और खुश रहकर ऐसे जीवनकी आशा करनी चाहिए जो उनके दु खोसे ज्यादा समृद्ध और ऊचा बना है, जिसका भविष्य उजला और शान-दार है और जो उन लोगोद्वारा नकल करने लायक है जिनके बीच छावनीका जीवन बिताया जाता है।

जब डॉक्टर, नर्स, वकील, व्यापारी वगैरह लोग नि स्वार्थ

और मिली-जुली सामाजिक जिंदगीके आदी हो जायगे और जब वे इन छावनियोमेसे बाहर भेजे जा सकेगे तब वे गावोमे या शहरोमे फैल जायगे और जहा कही रहेगे वहा अपने जीवनकी खुशबू फैलाएगे।

नई दिल्ली, ३०-११-'४७

: ६४ :

अहिंसाकी मर्यादा

एक सज्जनने मुझे खत लिखा है। उसका सार इस तरह है

"व्यक्तिगत अहिंसा समझी जा सकती है। दोस्तोके बीचकी समाजी अहिंसा भी समझमें आ सकती है, लेकिन आप तो कहते है कि दुश्मनोके सामने भी अहिंसाका इस्तेमाल किया जा सकता है। यह तो आकाशके फूल-सी असभव बात मालूम होती है। मेहरबानी करके आप यह हठ छोड दें तो अच्छा हो। अगर आप अपनी हठ नही छोड़ेंगे तो आजतककी कमाई हुई आबरू खो देंगे। आप महात्मा माने जाते है, इसलिए समाजके बहुतसे लोग आपके रास्ते चलकर बहुत दुखी और परेशान हो रहे है और आगे भी होगे। इससे समाजको नुकसान हो रहा है।"

जिस अहिंसाकी हद एक व्यक्तितक है, वह समाजके कामकी नही। मनुष्य समाजी जीव है, इसलिए उसकी शक्तिया

ऐसी होनी चाहिए कि समाजके सब लोग कोशिशसे उन्हे अपनेमे वढा सके। दोस्तोके बीच ही जो सीखा और बढाया जा सके, वह गुण विनय या नम्रता है। उसमे अहिसाका थोडा अश है; लेकिन वह अहिसाके नामसे पहचाना जाने लायक नही है। अहिसाके सामने वैरका त्याग होना ही चाहिए, यह महावाक्य है। यानी जहा वैर अपनी आखिरी हदतक पहुच चुका हो, वहा इस्तेमाल की जानेवाली अहिसा भी ऊंची-से-ऊची चोटीतक पहुची हुई होनी चाहिए। यह अहिसा सीखनेमे वहुत समय लगेगा। सभव है, पूरी जिदगी खतम हो जाय, लेकिन इससे वह निरर्थक या बेकार नही हो जाती। इस अहिसाके रास्ते चलते-चलते कई अनुभव होगे। वे सब दिनो-दिन ज्यादा भव्य और प्रभावशाली होगे। अहिसाकी आखिरी चोटीपर पहुचनेपर उसकी सुदरता कैसी होगी, इसकी झांकी यात्रीको रोज-रोज देखनेको मिलती रहेगी और उसकी खुशी व उत्साह वढेगा। इसका मतलब यह नही लगाया जा सकता कि मुसाफिरको रास्तेमे दिखाई देनेवाले सारे दृश्य मीठे और लुभावने मालूम होगे। अहिसाका रास्ता गुलाबके फूलोकी सेज नही, वह कांटोका रास्ता है। प्रीतम कविने गाया है कि 'हरिनो मारग छे शूरानो, नहि कायरनुं काम जो ने।'

इस समयका वातावरण इतना जहरीला वन गया है कि हम सयाने और अनुभवी लोगोके वचन याद रखनेसे इन्कार करते है। रोज-रोज होनेवाले छोटे-मोटे अनुभवोको भी नही देख सकते। बुराईका वदला भलाईसे चुकाना चाहिए, यह बात सवके मुहपर होती है। इसका रोज-रोज अनुभव भी

होता है। फिर भी हम यह क्यो नही देख सकते कि अगर यह दुनिया वैरसे भरी होती तो इसका कभीका अत हो गया होता ? आखिरमे दुनियामे प्रेम ही वढता है। उससे दुनिया टिकी है और टिकती है।

इतनी वात सच है कि अहिंसाकी तालीम लेनी होती है और उसे वढाना पडता है। उसकी गति ऊपरको होती है, इसलिए उसकी ऊची-से-ऊची चोटीतक पहुचनेमे वडी मेहनत करनी पडती है। नीचे उतरनेमे मेहनत नही पडती। हम सब इस वारेमे अशिक्षित है। इसलिए जीवनमे मारकाट, गाली-गलौज ही हमारा स्वाभाविक अनुभव होता है।

अहिंसा अनुभवसे मजे हुए आदमीको ही चुनती है।

नई दिल्ली, ८-१२-'४७

: ६५ :

दुःखीका धर्म

सिंधमे जीना वहुत भारी मालूम होनेसे सिंध छोडकर आए हुए एक सिंधी भाई लिखते है

"इस वडी मुसीवतके वक्त जव पश्चिमी पाकिस्तानसे हमारे हजारों भाई-वहन अपने पुश्तैनी घरवार छोडकर इस हिस्सेमें आ रहे हैं तव दु खकी वात यह है कि कई हिंदू सकुचित प्रातीयता जतला रहे हैं। आपदर्न नमस्कार जो लोग वेहद दु खकी वजहसे भाग निकले हैं उनकी तरफ सवको कम-से-कम मामूली दया तो जतलानी ही चाहिए। आपने हमको

दुःखी माना है, यह यथार्थ है। हममेंसे भी कई लोग अपने आपको शरणार्थी ही मानते हैं।

"दुखियोकी तादाद इतनी अधिक हो गई है कि कोई भी सरकार, जनताकी पूरी-पूरी मददके बिना इनके सवालको हल नहीं कर सकती। ऐसे वक्त कई मकान-मालिक अपने मकानोका सिर्फ किराया ही नहीं बढ़ा रहे हैं, बल्कि मकान किराएसे देनेकी मेहरबानीके बदलेमें 'पगड़ी' भी मांगते हैं। ऐसी बुराइयोके खिलाफ क्या आप अपनी आवाज नहीं उठाएंगे?"

इस खतके लेखकके साथ मेरी सहानुभूति है, मगर उनके विश्लेषणका मै समर्थन नही कर सकता। फिर भी इतना कबूल करता हू कि ऐसे मकान-मालिक पडे है, जो दुखियोके दु ख जानते हुए भी उन्हे चूस लेनेवाला किराया लेते शरमाते नही है। यह कबूल करनेके साथ ही यह कहना जरूरी है कि ऐसे मालिक भी पडे है, जो अपनी शक्तिभर दुखियोके लिए सहूलियते पैदा करते है, फिर ये सहूलियते लेखक या मै चाहू, उतनी और वैसी भले ही न हो। मगर उसे कैसे भुलाया जा सकता है कि वे लोग दुखियोकी सहूलियतके लिए खुद अड़चन भी उठाते है? अपने ऊपरका बोझ कम करनेका अच्छे-से-अच्छा तरीका यह है कि दु खी लोग अपने ऊपर अचानक आ पडे इस दुःखमेंसे सुख लेना सीख जाय। उन्हे नम्रताका पाठ सीखना चाहिए—ऐसी नम्रता, जिससे वे दूसरोके दोष देखने और उनकी टीका करनेके बदले अपने दोष देख सके। उनकी टीका कई बार बहुत कडी होती है, कई बार अनुचित होती है और कभी-कभी ही उचित होती है। अपने दोष देखनेसे इन्सान

ऊपर उठता है, दूसरोंके दोष निकालनेमे नीचे गिरता है।
इसके सिवा दुखी लोगोको सहयोग जीवनकी कला और उसमें रहनेवाले गुणोको समझ लेना चाहिए। यह सीखते हुए वे देखेंगे कि सहयोगका घेरा बडा होता जाता है, जिसमे उसमे सारे इन्सान समा जाते है। अगर दुखी लोग इतना करना सीख जाय तो उनमेसे कोई अपने आपको अकेला न माने। तब, सभी, चाहे वे किसी प्रांतके हो, अपनेको एक मानेंगे और सुख खोजनेके बदले मनुष्यमात्रके कल्याणमे ही अपना कल्याण देखेंगे। इसका मतलब कोई यह न करे कि आखिरमे सबको एक ही जगह रहना होगा। यह हमेशा असभव ही रहेगा और जब लाखोका सवाल है तब तो बिल्कुल ही असभव है। मगर इसका मतलब इतना जरूर है कि हरएक अपनेको समुद्रमे एक बूंदके समान समझकर दूसरेके साथ सबध रखे, फिर भले ही दु:ख आ पडनेसे पहले सबके दरजे अलग-अलग रहे हो—किसी-का नीचा रहा हो, किसीका ऊचा, और सभी अलग-अलग प्रांतोके हो, और फिर कोई ऐसा तो कह ही नही सकता कि मुझे तो फला जगहपर ही रहना है। तब किसीको न तो अपने दिलमे कोई शिकायत रहेगी और न कोई प्रकट रूपमे शिकायत करेगा। तब मुसलमानोके घर चाहे खाली हो, चाहे भरे हुए, मगर कोई उनपर अपनी मैली नजर नही डालेगा। ऐसे खाली मकानोका क्या किया जाय, इसका फैसला करनेका काम सरकारका है। दुखियोको एक ही फिकर करनी है कि उन सबको साथ रहना है और बहुतसे होते हुए भी ऐसे बरतना है, मानो सब एक ही हो। अगर ऊपर बतलाए हुए विचारोपर अमल होगा और

वह फैलेगा तो दुखियो या शरणार्थियोको रखनेका सवाल बिलकुल हल्का हो जायगा और उनके बारेमे जो डर है, वह दूर हो जायगा।

ऐसी अच्छी व्यवस्थामे वे अपग या लाचार बनकर नही रहेगे। ऐसे सभी दुखी, उनको दिया गया काम करेगे और सभीके खाने, पहनने और रहनेका अच्छा इतजाम हो जायगा। ऐसा करनेसे वे स्वावलबी बनेगे। औरत-मर्द सभी एक दूसरेको बराबर मानेगे। कई काम तो सभी करेगे, जैसे कि पाखाने साफ करना, कूडा-करकट निकालना वगैरह। किसी कामको ऊचा और किसीको नीचा नही माना जायगा। ऐसे समाजमें कोई आवारा, आलसी या निकम्मा नही रहेगा। ऐसी जिदगी शहरी जिदगीसे बहुत ऊंची मानी जायगी। शहरी जीवनमे एक तरफ महल और दूसरी तरफ गंदे झोंपडे होते है, इन दोनोंमेसे कौन-सा ज्यादा घृणा पैदा करता है, यह कहना मुश्किल है।

नई दिल्ली, ९-१२-'४७

: ६६ :

मेव लोग क्या करें ?

-आज मेरी बातका प्रभाव नही रहा, जो पहले था। एक जमाना था जब मेरी हर बातपर अमल किया जाता था। अगर मेरे कहनेमे पहलेकी ताकत और प्रभाव होता तो आज

एक भी मुसलमानको हिंदुस्तानी सघ छोडकर पाकिस्तान जानेकी जरूरत न पडती, न किसी हिंदू या सिक्खको पाकिस्तान-मे अपना घरबार छोडकर हिंदुस्तानी सघमे आसरा खोजनेकी जरूरत होती । हिंदुस्तान या पाकिस्तानमे जो कुछ हुआ—भयानक खूरेजी, आग, लूटपाट, औरतोको भगाना, जबरदस्ती लोगोका धर्म-परिवर्तन करना और इससे भी बुरी जो बाते हमने देखी है—वह सब मेरी रायमे बहुत बडा जगलीपन है । यह सच है कि पहले भी ऐसी बाते हुई है, लेकिन तब इतने बडे पैमानेपर साप्रदायिक फर्क नही पैदा हुआ था । ऐसी बर्बरता-भरी घटनाओकी कहानियोसे मेरा दिल रजसे भर जाता है और सिर शर्मसे गड जाता है । इससे भी ज्यादा शर्मनाक बात मदिरो, मसजिदो और गुरुद्वारोको तोडने और बिगाडने-की है । अगर इस तरहके पागलपनको रोका नही गया तो वह दोनो जातियोका सर्वनाश कर देगा । जबतक देशमे इस तरहके पागलपनका राज है तबतक हम आजादीसे कोसो दूर रहेगे ।

लेकिन इसका इलाज क्या है ? सगीनोकी ताकतमे मेरा विश्वास नही है । मै तो इसके इलाजके रूपमे आपको अहिंसाका हथियार ही दे सकता हू । वह हर तरहके सकटका सामना कर सकता है और अजेय है । हिंदू धर्म, इस्लाम ईसाई धर्म वगैरह सारे बडे धर्मोमे अहिंसाकी बडी सीख भरी है, लेकिन आज धर्मके पुजारियोने उसे सिर्फ किताबी उसूल बना रखा है, व्यवहारमे वे सब जगलके कानूनको ही मानते है । सभव है, आज मेरी आवाज अरण्यरोदन-जैसी साबित हो, लेकिन मै तो आपको अहिंसाके सदेशके सिवा दूसरा कोई सदेश

नही दे सकता । मै तो यही कहूगा कि जगली ताकतकी चुनौतीका मुकावला आत्माकी ताकतसे ही किया जा सकता है।

मेवोके प्रतिनिधिने मुझे यह दरखास्त पढ सुनाई, जिसमे उनकी सारी शिकायते दी गई है और उन्हे दूर करनेकी प्रार्थना की गई है। मैने वह खत आपके प्रधानमत्री डॉ० गोपीचदके हाथमे रख दिया है। खतमे दी हुई बहुत-सी वातोके वारेमे वह क्या करना चाहते है, यह तो वह खुद आपको बताएगे। मै तो सिर्फ यही कह सकता हू कि अगर किसी सरकारी अफसरने बुरा काम किया होगा तो मुझे यकीन है कि सरकार उसके खिलाफ उचित कदम उठानेमे और उसे नसीहत देनेमे नही हिचकिचाएगी। किसी एक आदमीको सरकारकी सत्ता हडपने नही दी जा सकती, न वह यह आशा कर सकता है कि उसके कहनेसे सरकारी अफसरोको एक जगहसे दूसरी जगह वदल दिया जाय। मै यह भी अच्छी तरह जानता हू कि अपनी मरजी या राजी-खुशीकी दलीलपर किसीके धर्म-परिवर्तन या किसी औरतकी दूसरी जातिके मर्दके साथकी शादीको सही व कानूनी करार नही दिया जा सकता। जव चारो तरफ डरका राज फैला हो तव 'राजी-खुशी' या 'अपनी मरजी'की वात करना इन शब्दोके साथ अन्याय करना है।

अगर आपके दुखमे मेरे इन शब्दोसे आपको थोडा ढाढस वधे तो मुझे खुशी होगी। जिन मेवोको अलवर और भरतपुरसे निकाला गया है, उनके साथ मेरी पूरी हमदर्दी है। मै उस दिनकी आशा लगाए वैठा हू, जव सारे वैर भुला दिए जायगे, सारी नफरत दफना दी जायगी

जिन्हे अपने घरोसे निकाला गया है वे सब अपने-अपने घर लौटेंगे तथा पूरी शाति और सलामतीके वातावरणमे पहलेकी तरह अपने धधे चालू करेगे । तब मेरा दिल खुशीसे नाचने लगगा । जबतक मै जिदा रहूगा तबतक यह आशा नही छोडूगा, लेकिन मै कबूल करता हू कि आजकी हालतोमे यह नही हो सकता । मुझे इस बातका भरोसा है कि हमारी यूनियन सरकार इस बारेमे अपना फर्ज अदा करनेमे ढिलाई नही दिखाएगी और रियासतोको यूनियन सरकारकी सलाह माननी पडेगी । यूनियनमे शामिल हो जानेसे रियासतोके शासकोको अपनी प्रजाको दबाने और कुचलनेकी आजादी नही मिल जाती । अगर राजाओको अपना दरजा कायम रखना है तो उन्हे अपनी प्रजाके ट्रस्टी और सच्चे सेवक बनना होगा ।

अतमे मै मेव भाइयोसे एक बात कहना चाहता हू । मुझसे यह कहा गया है कि मेव लोग करीब-करीब जरायमपेशा जातियो-की तरह है । अगर यह बात सही हो तो आप लोगोको अपने आपको सुधारनेकी पूरी कोशिश करनी चाहिए । अपने सुधारका काम आपको दूसरोपर नही छोडना चाहिए । मुझे आशा है कि आप लोग मेरी इस सलाहपर नाराज नही होगे । जिस अच्छी भावनासे मैने आपको यह सलाह दी है, उसे आप उसी भावनासे ग्रहण करेंगे । यूनियनकी सरकारसे मै यह कहूगा कि अगर मेवोके बारेमे यह इलजाम सही हो तो भी, इस दलीलपर उन्हे निकालकर पाकिस्तान नही भेजा जा सकता । मेव लोग हिंदुस्तानी सघकी प्रजा है । इसलिए उनका यह फर्ज है कि

वह मेवोको शिक्षाके सुभीते देकर और उनके वसनेके लिए। वस्तियां वनाकर अपने आपको सुधारनेमे उनकी मदद करे ।[1]

९-१२-'४७

: ६७ :

गहरी जड़ें

एक भाई लिखते है

"आजादी मिल जानेके बाद भी शहरके लोगोपरसे अंग्रेजी भाषाका असर कम हुआ दिखाई नहीं देता । बंबईकी उद्योग-धधो और खेतीकी नुमाइशकी ही मिसाल लीजिए । जिन्होने नुमाइश खोली, उन्होने भी अंग्रेजीमें ही तकरीर की । दूकानोके तख्ते अंग्रेजीमें थे । चिट्ठी-पत्री भी ज्यादातर अग्रेजीमें ही हुई । राशन कार्ड अग्रेजीमें होते है, जिससे अंग्रेजी न पढ़ सकनेवाली आम जनताको वड़ी दिक्कत होती है । हमारे नेता गरीव जनताका विलकुल ख्याल न करते हुए यही समझते है कि उनके खास-खास बयान और ऐलान अंग्रेजीमें ही होने चाहिए ।"

यह शिकायत सच्ची लगती है । इसे तुरत दूर करना चाहिए । इस इतने वडे मामलेमे तवतक कोई खासी तव-दीली सुधारकी तरफ दिखाई नही देगी जवतक हम अपनी सुस्ती न छोडेगे । यह सुस्ती ही हमारी वदकिस्मती है ।

नई दिल्ली, १०-१२-'४७

---

[1] गुडगांव तहसीलके जसरा नामक गांवकी एक सभामें—जिसमें, ज्यादातर मेव लोग ही थे, दिया गया भाषण ।

: ६८ :

मिल जानेका उसूल

कहा जाता है कि दक्षिण यूनियनकी कुछ देशी रियासतो-के लोगोने यह जबरदस्त इच्छा प्रकट की है कि उनके राज-घरानोको खतम कर दिया जाय और रियासतोको हिदुस्तानी सघमे मिला लिया जाय। ब्रिटिश हुकूमतके दिनोमे ब्रिटिश हिदु-स्तान अलग था और रियासते या रियासती हिदुस्तान अलग। अब इस नई तजवीजका मतलब यह लिया जाता है कि रियासते उस जमानेके ब्रिटिश हिदुस्तानमे मिल जाय।

जो समाज अहिसापर कायम हो, उसमे किसी आदमीको धीरज खोकर दूसरेका नाश नही करना चाहिए, क्योकि अगर हर बुराई करनेवाला आदमी अपनेको सुधारेगा नही तो खुद अपना नाश जरूर कर लेगा। बुराई कभी अपने पैरोपर खडी रह ही नही सकती। इसीलिए काग्रेसकी नीति हमेशा देशी राजाओ और उनके राजको सुधारनेकी रही है, उन्हे खतम करनेकी नही। काग्रेस, राजाओको सदा यही समझाती रही है कि वे अपनी प्रजाके सचमुच ट्रस्टी और सेवक बन जाय। इस नीतिके अनुसार काग्रेस सरकारने राजाओकी हुकूमतको खतम करने और उनकी रियासतोको पूरी तरह अपने सूबोमे मिला लेनेकी तजवीज करनेके बजाय रियासतवालोको यही समझानेकी कोशिश की है कि वे यूनियनसे अपना नाता जोड ले। इसमे काग्रेस सरकारको बडे दरजेतक कामयाबी भी मिली है। इसलिए किसी रियासतका पूरी तरह किसी सूबेमे

मिल जाना या बाकी हिंदुस्तानमे लीन हो जाना दो ही सूरतोंमे हो सकता है। एक सूरत तो यह है कि किसी राजाके राजमे अधेर साफ चमकने लगे और उसका कोई इलाज न रह जाय। ऐसी हालतमे वहांके लोगोको हक होगा, उनका धर्म भी होगा कि वे पासके सूबोमे बिलकुल मिल जानेकी कोशिश करे। दूसरी सूरत यह हो सकती है कि राजा और प्रजा दोनो मिलकर इसका फैसला करे। किसी-किसीने यह भी कहा है कि जबतक सब रियासते या ज्यादातर रियासते इस तरह अपनेको मिटा देनेको तैयार न हो तबतक किसी अकेली रियासत या वहाके लोगोको--चाहे वह बडी रियासत हो या छोटी--ऐसा नही करना चाहिए। लेकिन मेरा यह खयाल नही है। यह नही हो सकता कि जबतक दूसरी रियासतोमे भी वैसा ही अधेर शुरू न हो जाय तबतक किसी एक रियासतका अधेर चलता ही रहे और खतम न किया जा सके। इसी तरह अगर कोई राजा खुद अपने राजके अधिकारको खतम करना चाहे तो उसे जवरदस्ती यह नही कहा जा सकता कि जबतक और सब इसके लिए तैयार न हो जाय तबतक तुम भी रुके रहो। आखिर तो हिंद सरकार हर रियासतके मामलेको अलग-अलग, जरूरत या हालतके मुताविक, तय करेगी।

नई दिल्ली, १३-१२-'४७

: ६९ :

अब भी कातें !

एक भाईने मुझे लिखा है

"मैं और मेरे घरके लोग बराबर चरखा कातते रहे हैं और खादी पहनते रहे हैं। अब आजादी मिल जानेके बाद भी क्या आप इसपर जोर देते हैं कि हम चरखा कातते रहें और खादी पहनते रहें ?"

यह एक अजीब सवाल है, पर बहुतसे लोगोकी यही हालत है। इससे साफ जाहिर होता है कि इस तरहके लोगोने चरखा कातना और खादी पहनना इसलिए शुरू किया था कि उनके खयालमे यह आजादी हासिल करनेका एक जरिया था। उनका दिल चरखे या खादीमे नही था। यह भाई भूल जाते है कि आजादीका मतलब सिर्फ विदेशियोके बोझका हमारे कधोपरसे हट जाना ही नही था। यह और बात है कि आजादीके लिए सबसे पहले इस बोझका हटना जरूरी था। खादीका मतलब है ऐसा रहन-सहन, जिसकी नीव अहिंसापर हो। यही मतलब खादीका, आजादीके पहले था, यही आज भी है। ठीक हो या गलत, मेरी यही राय है कि खादी और अहिंसाके करीब-करीब लोप हो जानेसे यह साबित होता है कि इन तमाम बरसोमे हम खादीके असली और सबसे बडे मतलबको कभी नही समझ पाए। इसलिए आज हमे जगह-जगह अराजकता और भाई-भाईकी लड़ाई देखनी पड रही है। मुझे इसमे जरा भी शक नही कि अगर हमे वह आजादी हासिल करनी है जिसे हिंदुस्तानके करोडो गाववाले अपने

आप समझने और महसूस करने लगे तो चरखा कातना और खादी पहनना आज पहलेसे भी ज्यादा जरूरी है। वही इस धरतीपर ईश्वरका राज्य या रामराज्य कहा जायगा। खादी-के जरिए हम यह कोशिश कर रहे थे कि बिजली या भापसे चलनेवाली मशीनके, आदमीपर चढ बैठनेके बजाय, आदमी मशीनके ऊपर रहे। खादीके जरिए हम कोशिश कर रहे थे कि आज आदमी-आदमीके बीच जो गरीब-अमीर और छोटे-बडेका जबरदस्त फर्क दिखाई दे रहा है, उसकी जगह आदमी-आदमीमे और सब मर्दो व औरतोमे बराबरी कायम हो। हम यह कोशिश कर रहे थे कि बजाय इसके कि पूंजीपति मजदूरोपर हावी होकर रहे और उनपर बेजा शान जमावे, मजदूर पूजीपतियोपर हावी बनकर रहे। इसलिए पिछले तीस बरसोमे हमने हिंदुस्तानमे जो कुछ किया, वह अगर उलटी चाल नही थी तो हमे पहलेसे भी ज्यादा जोरोसे और कही ज्यादा समझके साथ चरखेकी कताई और उसके साथके सब कामोको जारी रखना चाहिए।

नई दिल्ली, १३-१२-'४७

: ७० :

प्रांतीय गवर्नर कौन हो ?

आचार्य श्रीमन्नारायण अग्रवाल लिखते है

"एक सवाल है, जो मेरे खयालसे महत्त्वका है और जिसके बारेमें

में आपकी राय जानना चाहता हूं। हिंदका जो नया विधान बनाया जा रहा है उसमें प्रांतोंके गवर्नर चुननेके नियम रखे गए हैं। प्रांतका गवर्नर उस सूबेके सभी बालिगोंके मतसे चुना जायगा। इसलिए यह साफ जाहिर है कि जिसे कांग्रेसका पार्लमेंटरी बोर्ड चुनेगा, उसे ही आम तौरसे प्रांतकी जनता गवर्नर चुन लेगी। प्रांतका प्रधान मंत्री भी कांग्रेस पार्टीका ही होगा। प्रांतका गवर्नर ऐसा ही होना चाहिए, जो उस सूबेकी पार्टीबंदीसे अलग रहे, लेकिन अगर प्रांतका गवर्नर आम तौरसे कांग्रेसी होगा और उसी प्रांतका होगा तो वह कांग्रेसदलकी पार्टीबंदियोंसे अलग नहीं रह सकेगा। या तो वह कांग्रेस प्रधान मंत्रीके इशारोंपर चलेगा या फिर गवर्नर और प्रधानमंत्रीके बीच कुछ-न-कुछ खींचातानी रहेगी।

"मेरे ख्यालसे तो प्रांतोंमें अब गवर्नरकी जरूरत ही नहीं है। प्रधानमंत्री ही सब कामकाज चला सकता है। जनताका ५५००) रु० महीना गवर्नरकी तनखाहपर फजूल ही क्यों खर्च किया जाय ? फिर भी अगर प्रांतोंमें गवर्नर रखने ही हैं तो वे उसी प्रांतके नहीं होने चाहिए। बालिग मतसे उन्हें चुननेमें भी बेकारका खर्च और परेशानी होगी। यही अच्छा होगा कि यूनियनका अध्यक्ष हर प्रांतमें दूसरे किसी प्रांतके ऐसे इज्जतदार कांग्रेसी सज्जनको भेजे, जो उस प्रांतकी पार्टीबंदीसे अलग रह-कर वहांके सार्वजनिक और राजनैतिक जीवनको ऊंचा उठा सके। आज जो प्रांतोंके गवर्नर केंद्रीय सरकारने नियुक्त किए हैं, वे करीब-करीब इन्हीं सिद्धांतोंके अनुसार चुने गए हैं, ऐसा लगता है। और इसलिए प्रांतों-का राजनैतिक जीवन भी ठीक ही चल रहा है। अगर आजाद हिंदके आगे-के विधानमें उसी प्रांतका आदमी बालिग मतसे चुननेका कायदा रखा गया तो, मुझे डर है कि प्रांतोंका राजनैतिक जीवन ऊंचा नहीं रह सकेगा।

"उस विधानमें गाव-पचायतोका और राजनैतिक सत्ताको छोटी इकाइयोमें बांट देनेका किसी तरहका जिक्र नहीं किया गया है; लेकिन मेरा उद्देश्य अपने पूज्य नेताओकी जरा भी टीका करना नहीं है। जो चीज मुझे बहुत खटकती है, उसपर मै आपकी राय 'हरिजन'में चाहता हूं।"

आचार्यजीने प्रातीय गवर्नरोके बारेमे जो कहा है, उसके समर्थनमे कहनेको तो बहुत है, लेकिन मुझे कबूल करना होगा कि मै विधान-परिपद्की सब कार्रवाई नही देख सका हू। मुझे इतना भी मालूम नही है कि गवर्नरके चुनावकी तजवीज किस तरह पैदा हुई। इसको न जानते हुए भी मुझे आचार्य-जीकी दलील मजबूत लगती है। लोगोकी तिजोरीकी कौडी-कौडीको बचाना मुझे बहुत पसद होते हुए भी प्रधान-मंत्रीको ही गवर्नर मान लेकर दूसरा कोई गवर्नर न रखनेकी इनकी बात मुझे नही जचती। किफायतके खयालसे प्रांतमेंसे गवर्नरको ही उडा देना मुझे गलत मालूम होता है गवर्नरोंको रोजानाके कारबारमे दखल देनेका बहुत अधिकार देना ठीक नही है। वैसे ही उनको सिर्फ शोभाका पुतला बना देना भी ठीक नही होगा। वजीरोके कामको दुरुस्त करनेका अधिकार उन्हे होना चाहिए। सूबेकी खटपटसे अलग होनेके कारण भी वे सूबेका कारबार ठीक तरह देख सकेगे और वजीरोको गलतियोसे बचा सकेगे। गवर्नर लोग अपने-अपने सूबोकी नीतिके रक्षक होने चाहिए। आचार्यजी जैसा बताते है, अगर विधानमे गाव-पचायत और सत्ताको छोटी इकाइयोमे बांटने (विकेद्रीकरण)के बारेमे

इशारातक नही है तो यह गलती दूर होनी चाहिए। अगर आम राय ही हमारे लिए सब कुछ है तो पचोका अधिकार जितना ज्यादा हो, उतना लोगोके लिए अच्छा है। पचोकी कार्रवाई और असर फायदेमद हो, इसके लिए लोगोकी सही तालीम बहुत आगे बढनी चाहिए। यह लोगोकी फौजी ताकतकी बात नही है, बल्कि नैतिक ताकतकी बात है। इसलिए मेरे मनमे तो तालीममे नई तालीमका ही मतलब है।

नई दिल्ली, १४-१२-'४७

: ७१ :

उपवास क्यों ?

"जब कभी आपके सामने कोई जबरदस्त मुश्किल आ जाती है तो आप उपवास क्यो कर बैठते है ? आपके इस कामका असर हिंदुस्तानकी जनताकी जिंदगीपर क्या होता है ?"

इस तरहके सवाल मुझसे पहले भी किये गए है। पर शायद ठीक इन्ही शब्दोमे नही। इनका जवाब सीधा है। अहिंसाके पुजारीके पास यही आखिरी हथियार है। जब इन्सानी अक्ल काम नही करती तो अहिंसाका पुजारी उपवास करता है। उपवाससे प्रार्थनाकी तरफ तबियत ज्यादा तेजीसे जाती है। यानी उपवास एक रूहानी चीज है और उसका रुख ईश्वरकी तरफ होता है। इस तरहके कामका

असर जनताकी जिदगीपर यह होता है कि अगर वह उपवास करनेवालेको जानती है तो उसकी सोई हुई अतरात्मा जाग उठती है। इसमे एक खतरा जरूर रहता है। सभव है, लोग अपने प्यारेकी जान बचानेके लिए उसके साथ गलत हमदर्दी दिखाकर अपनी मरजीके खिलाफ काम कर ले। इस खतरेका सामना तो करना ही पडता है। आदमीको अगर अपने किसी कामके बारेमे यह यकीन हो जाय कि वह ठीक है तो उसे उस कामके करनेसे नही रुकना चाहिए। इस तरहका उपवास अदरकी आवाजके जवाबमे किया जाता है, इसलिए उसमे जल्दबाजीका डर कम होता है।

नई दिल्ली, १४–१२–'४७

: ७२ :

सत्यसे क्या भय ?

सत्य वचन कठोर लगता हो तब भी उसका परिणाम शुभ ही होता है। सत्य वचन कभी अप्रस्तुत नही हो सकता। जो अप्रस्तुत है वह सत्य नही। गाय किस रास्ते गई, यह बतानेका मेरा शाश्वत धर्म नही। इसलिए बहुत बार यह बताना अप्रस्तुत हो सकता है। हिदुस्तानमे हिदुओद्वारा किए गए अपकृत्योको ढोडी पीटकर बताना चाहिए। ऐसा करना अप्रस्तुत न होगा। उसे खुले तौरमे स्वीकार कर

लेनेमे ही हिंदूकी रक्षा है। ऐसा करनेसे पाकिस्तानके मुसल-मानोके अपकृत्योकी जल्दी-से-जल्दी समाप्ति हो सकती है। अपनी गलतीको स्वीकार कर लेनेकी प्रवृत्ति मनुष्यको पवित्र करती है, उसे ऊचा उठाती है। उसे दवा देना शरीरमे जहरको दवाकर उसका नाश कर देनेकी भाति होगा। इस-लिए यह सर्वथा त्याज्य है।

नई दिल्ली, १४-१२-'४७

: ७३ :

मिश्र खाद

खाद दो तरहकी कही जा सकती है। एक तो रासायनिक और दूसरी जीवित। कोई पूछ सकता है कि खाद भी कभी जीवित होती है? इसका अर्थ इतना ही है कि यहापर जीवित शब्द नए तरीकेमे इस्तेमाल किया गया है। अग्रेजी शब्द 'ऑरगेनिक' का यह अनुवाद है। जीवित खाद, आदमी और जानवरोके मल और उसमें घास-पत्ते वगैरह मिलावट या उनके विना तैयार होती है। वनस्पतिको हम निर्जीव नही मानते। लोहे वगैराको जड मानते है। इस तरहके मिश्रणसे बनी हुई खादको अग्रेजीमें 'कम्पोस्ट' कहते है। मैने कम्पोस्टकी जगह 'मिश्र' शब्द इस्तेमाल किया है। ऐसी खादको मै सुनहरी खाद मानता हू। ऐसी खादसे जमीनकी ताकत बनी रहती है। उसका शोषण नही होता, जब कि

कहा जाता है कि रासायनिक खादसे जमीन कमजोर हो जाती है और कुछ समयतक इस्तेमाल करनेके बाद उसे (जमीनको) खाली रखना पड़ता है। जीवित खाद हानिकर जीव पैदा नही होने देती।

ऐसी खादका प्रचार करनेके लिए मीराबहनकी प्रेरणा और उत्साहसे दिल्लीमे इस महीनेमे एक सभा बुलवाई गई थी। उसमे डॉ० राजेद्रप्रसाद सभापति थे। इस कामके विशारद सरदार दातारसिह, डॉ० आचार्य वगैरह भी इकट्ठे हुए थे। उन्होंने तीन दिनके विचार-विनिमयके बाद कुछ महत्त्वके प्रस्ताव पास किए है। उनमे यह बताया गया है कि शहरोंमें और सात लाख गांवोमे इस बारेमे क्या करना चाहिए। शहरोंमें और देहातोमे मनुष्यके और दूसरे जानवरोके मलको कूड़े-कचरे, चिथडे व कारखानोमेसे निकले हुए मैलके साथ मिलानेका सुझाव रखा गया है। इस विभागके लिए एक छोटी-सी उप-समिति बनाई गई है।

अगर यह प्रस्ताव सिर्फ अखबारोमे छपकर ही न रह जाय और करोड़ों उसपर अमल करे तो हिंदुस्तानकी शक्ल बदल जाय। हमारी बेखबरीसे जो करोड़ों रुपएका खाद बरबाद हो रहा है, वह बच जाय, जमीन उपजाऊ बने और जितनी फसल आज पैदा होती है उससे कई गुनी ज्यादा फसल पैदा होने लगे। परिणाम यह होगा कि भुखमरी बिलकुल दूर हो जायगी, करोड़ोंका पेट भरनेके लिए अन्न मिलेगा और उसके बाद बाहर भी भेजा जा सकेगा।

आज तो जैसी इन्सानकी और जानवरोकी कंगाल हालत

है वैसी ही फसलकी है। इसमे दोष जमीनका नही, मनुष्यका है। आलस और अज्ञान नामके दो कीडे हमको खा जाते है। मीराबहनने जो काम उठाया है, वह बहुत बडा है। उसमें संकडो मीराबहने खप सकती है। लोगोमें इस कामके लिए उत्साह होना चाहिए, विभागके लोग जाग्रत होने चाहिए। करोडोके करनेका काम थोडेसे सेवक-सेविकाओसे नही हो सकेगा। इसमे तो सेवक-सेविकाओंकी फौज चाहिए।

क्या हिंदुस्तानकी ऐसी अच्छी किस्मत है? हिंदुस्तान यानी दोनो हिस्से। अगर दक्षिणका हिस्सा यह काम शुरू कर दे तो उत्तरके हिस्सेद्वारा भी उसे शुरू हुआ ही समझिए।

नई दिल्ली, २१-१२-'४७

: ७४ :

आरोग्यके नियम

श्री ब्रजलाल नेहरू मेरे-जैसे ही सन्ती है। उन्होने अखबारोमें एक पत्र लिखा है, जिसमें आरोग्य-मन्त्री राजकुमारी अमृतकुवरके इस कथनकी तारीफ की है कि हमारी बीमारिया अपने अज्ञान और लापरवाहीमेंसे पैदा होती है। उन्होने यह सूचना की है कि आजतक आरोग्य-विभागका ध्यान अस्पताल वगैरह खोलनेपर ही रहा है। उसके बदले राज-

कुमारीने जिस अज्ञानका जिक्र किया है, उसे दूर करनेकी तरफ इस विभागको ध्यान देना चाहिए। उन्होने यह भी सुझाया है कि इसके लिए एक नया विभाग खोलना चाहिए। परदेशी हुकूमतकी यह एक बुरी आदत थी कि जो सुधार करना हो, उसके लिए नया विभाग और नया खर्च खडा किया जाय। लेकिन इस बुरी आदतकी नकल हम क्यो करे? वीमारियो-का इलाज करनेके लिए अस्पताल भले रहे, लेकिन उनपर इतना जोर क्या देना? घर वैठे आरोग्य कैसे सभाला जा सकता है, इसकी तालीम देना आरोग्य-विभागका पहला काम होना चाहिए। इसलिए आरोग्य-मत्रीको यह समझना चाहिए कि उसके नीचे जो डाक्टर और नौकर काम करते है, उनका पहला फर्ज है जनताके आरोग्यकी रक्षा और उसकी सभाल करना।

श्री व्रजलाल नेहरूकी एक सूचना ध्यान देने लायक है। वे लिखते है कि वीमारियोके इलाजके वारेमे ढेरो कितावे देखनेमे आती है, लेकिन कुदरती इलाज करनेवालोके सिवा डिग्रीवाले डॉक्टरोने आरोग्यके नियमोके वारेमे कोई किताव लिखी हो, ऐसा कभी सुना नही गया। इसलिए श्री नेहरू यह सूचना करते है कि आरोग्य-मत्री मशहूर डॉक्टरोसे ऐसी किताव लिखवाए। यह किताव लोगोके समझने लायक भाषामे लिखी जाय तो जरूर उपयोगी सावित होगी। शर्त यही है कि ऐसी कितावमे तरह-तरहके टीके लगानेकी वात नही होनी चाहिए। आरोग्यके नियम ऐसे होने चाहिए, जिनका पालन डॉक्टर-वैद्योकी मददके विना घर वैठे हो सके। ऐसा

न हो तो कुएमेंसे निकलकर खाईमें गिरने-जैसी बात होना सभव है।

नई दिल्ली, २१-१२-'४७

: ७५ :

देहातोंमे संग्रहकी जरूरत

श्री वैकुंठभाई लिखते है .

"आजकलकी व्यापार-पद्धतिका परिणाम यह होता है कि देहातोंका अनाज परदेश चला जाता है। देशके बहुतसे हिस्सोंमें गावोंमें स्थानिक सग्रह नहीं रहता। परिणाम स्वरूप मजदूर वर्गको कष्ट उठाना पडता है और चौमासेमें अनाजका भाव खूब बढ जाता है। ऐसी हालतमें यह अच्छा होगा कि गरीब प्रजाको बचानेके लिए देहातमें ही पचके कब्जेमें किसी अच्छे गोदाममें काफी परिमाणमें अन्न इकट्ठा किया जाय और वहाँसे जहा भेजना हो भेजा जाय। इस दृष्टिसे चार साल पहले श्री अच्युतराव पटवर्धन और मैंने एक योजना तैयार की थी। श्री कुमारप्पाने जो योजना बनाई है, उसमें भी उन्होंने इस तरहकी व्यवस्थाकी जरूरत स्वीकार की है।

"आजके नए सयोगोंमें आपको ठीक लगे तो आप प्रातीय सरकारोंको और देहाती प्रजाको इस बारेमें कुछ सूचना कर सकते हैं।"

मुझे तो इस सूचनामें बहुत सचाई मालूम होती है। हमारे देशके अर्थशास्त्र या माली व्यवस्थाके लिए ऐसे सग्रहकी जरूरत है। जबसे नकद टैक्स देनेकी प्रथा जारी हुई तबसे

देहातोंमे अन्नका सग्रह कम हो गया है। यहां मै नकद टैक्सके गुण-दोपोमे उतरना नही चाहता, मगर इतना मै मानता हू कि अगर देहातोमे अन्न-सग्रह करनेकी प्रथा चालू होती तो आजकी विपदासे शायद हम वच जाते। जव अकुश उठ रहे है तव अगर वैकुठभाईकी सूचनाके अनुसार देहातमे अन्नका सग्रह हो और व्यापारी और देहाती ईमानदार वन जाय तो किसीको कष्ट नही होगा। अगर किसानको और व्यापारीको योग्य नफा मिले तो मजदूर-वर्ग और शहरके दूसरे लोगोको महंगाईका सामना करना ही न पडे। मतलब तो यह है कि अगर सवके अनुकूल जीवन वन जाय तो फिर सस्ते और महगे भावका सवाल उठ जायगा।

नई दिल्ली, २२-१२-'४७

: ७६ :

त्याग और उद्यमका नमूना

भाई दिलखुश दीवानजी अपने ४ दिसवरके खतमे लिखते है

"आप टेकपर अडे रहनेवाले कराडीके पाचाकाकाको पहचानते ही हं। २९-११-'४७ की दोपहरको उनके भतीजे वालजीभाई वुनाई-काम करते-करते हृदयकी गति वद हो जानेसे वुनाई-घरके सामने ही मर गए। वालजीभाई वचपनसे ही अपने काकाके पास रहे थे और उनके टेकभरे जीवनका रग उनपर भी चढा था।

"१९२३में पाचाकाकाने कराडीमें पहलेपहल खड्डी चलाई। थोडे ही दिनोंमें वालजीभाई जीन कारखानेकी अधिक तनखाहवाली नौकरी छोडकर कराडीमें खड्डी चलाने लगे। जीवनकी आखिरी घडी-तक उन्होंने खड्डी नहीं छोडी और खड्डीके सामने ही जीवन-लीला समाप्त की। वे बहुत होशियार बुनकर थे। कई युवकोंको उन्होंने बुनाई-काम सिखाया था। वे बहुत शात प्रकृतिके थे। सबके साथ घुलमिल जाते थे और हमेशा हँसते रहते थे। हमारे खादी-काममें वालजीभाईने बुनाई-कामका विकास करके आखिरतक हमारी बहुत मदद की। ऐसे बुनकरके लिए हमें गर्व था। उनकी मौत भी धन्य है! काकाकी टेक भतीजेमें उतरी।

"काकाकी सत्याग्रही जमीनपर बने हुए हमारे बुनाई-घरके सामने ही वालजीभाईने बुनाईका काम करते-करते देह छोडी। उनके श्रमजीवी जीवनमें हमने त्याग, सेवा और उद्यमपरायणताके सुमेलका अनुभव किया।

"उनकी सेवा मूक थी। मगर बुनाई-कामके विकासमें वह जबरदस्त बनती गई। ६–७ नौजवानोंका छोटा-सा समूह उन्हें घेरे रहता था और उनकी देखरेखमें बुनाई-काम सीख गया था। यही उनकी विरासत है।

"पाचाकाकाकी टेक अभी जिंदा है। अपनी जमीनमें हल चलानेकी वे अभी 'ना' ही करते हैं। वे पूछते हैं कि 'सच्चा स्वराज अभी आया कहा है? जब प्रजा पुलिसकी मददके बिना रहना सीखेगी तभी मेरी स्वराजकी टेक पूरी होगी। बापू साबरमती आश्रम वापिस कहा गए हैं? बापू साबरमती जायगे तभी जमीनमें हल चलाऊगा और महसूल भरूगा।' अभीतक उन्होंने वह जमीन हमारे कार्यालयको ही दे रखी है।"

स्व० वालजीभाई जैसे सेवक हिंदुस्तानको या जगतको

कम ही मिले है। 'पेड़ जैसा फल और बाप जैसा बेटा'वाली कहावत उनके बारेमे सच साबित हुई है। पाचाकाकाकी टेक तो अद्वितीय ही रहेगी। सच्चा स्वराज कहा मिला है? आज तो वह बहुत दूर लगता है।

वालजीभाई जैसे बुनकर ६–७ ही कैसे? क्या इतनेसे कराडीने स्वराज्य लिया कहा जा सकता है?

नई दिल्ली, २२–१२–'४७

: ७७ :

सोमनाथके दरवाजे

पडित सुदरलालने ('हरिजन'के) हिंदुस्तानी सस्करणमे सोमनाथ मदिरके प्रसिद्ध दरवाजोके बारेमे एक सुदर लेख लिखा है। उत्सुक जनोको मूल लेख अवश्य पढना चाहिए। लेखकने जो खास बात उठाई है वह यह है कि जो दरवाजे गजनी ले जाये गए थे वे, जैसा कि उस वक्त कहा गया था, वापस नही लाये गए। जो लाये गए वे बनावटी निकले और जब इस जालका पता चला तब दरवाजोका आम-प्रदर्शन आगरेमे आगे नही किया जा सका। पडित सुदरलालजीको डर है कि इस प्रसिद्ध मदिरके जीर्णोद्धारमे भी कही ऐसा ही जाल न किया गया हो!

नई दिल्ली, २२–१२–'४७

: ७८ :

दिल्लीके व्यापारियोंको संदेश

मै समझता हू कि जो अकुश अनाजपर लगाया जाता है, वह बुरा है। हिंदुस्तानका हित उसमे हो नही सकता। कपडेका अकुश भी हटना चाहिए। आज जब हमे आजादी मिल गई है तो उसमे हमपर अकुश क्यो ? जवाहरलालजी, सरदार पटेल वगैरह जनताके सेवक है। जनताकी इच्छाके विरुद्ध वे कुछ कर नही सकते। अगर हम उन्हे कहे कि आप अपने पदोपरसे हट जाइए तो वे वहा रह नही सकते। वे रहना भी नही चाहते। वे लोग हमेशा कहते है कि हम तो लोगोका ही काम करना चाहते है। हम लोगोके सेवक है। बात सच भी है। ३२ बरससे हम अग्रेजोसे लडते आए है और हमने यह बता दिया कि सच्ची लोकसत्ता कैसे चलती है, लेकिन हमारी सत्ता अग्रेजो-जैसी नही है। वे इग्लैडसे फौज वगैरह ला सकते थे। हमारे पास वह सब नही है, लेकिन हमारे मत्रियोके पास इससे भी बडी ताकत है। जवाहरलालजी, सरदार पटेल वगैरहके पीछे फौज और पुलिससे बढकर लोकमतकी ताकत है।

अकुशकी जरूरत क्यो पडी ? व्यापारियोकी बेईमानी और नफाखोरीके डरसे ही अकुश लगानेकी जरूरत पडी। एक मजदूरको अपनी मेहनतके लिए जो पैसा मिलना चाहिए, उससे ज्यादा एक व्यापारीको उसकी मेहनतके लिए क्यो मिलना चाहिए ? उसे अधिक नहीं लेना चाहिए। अगर

व्यापारी लोग इतना समझ ले तो आज हिंदुस्तानमे हमे खाने-पहननेकी चीजोकी जो मुसीबते बरदाश्त करनी पड़ती है, वे न करनी पडे । अगर हम-आप इस अकुशको बरदाश्त नही करना चाहते तो उसे हटना ही होगा । अगर आप सच्चे है, मै सच्चा हूं तो अकुश रह नही सकेगा । हम सच्चे न रहे तब तो अकुश उठनेसे हिंदुस्तान मर जायगा । व्यापारी मडलको और मिल-मालिकको आपसमे मिलना चाहिए, उनके प्रति जो शक किया जाता है उसे दूर करना चाहिए और एक-दूसरेकी शक्ति बढानी चाहिए । गीताजीका श्लोक है "देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु व. ।" देव आसमानमे नही पडे है । हमारी लडकिया जैसे देवियां मानी जाती है, वैसे ही हम भी देव है । लेकिन कोई अपनेको देव कहते नही । वह अच्छा भी है । यह मनुष्यकी नम्रता है । तो हम देवो-जसे शुद्ध बने, शुद्ध रहे और सुखी रहे तब हमारी गरीबी, भुखमरी, नगापन वगैरह सब चला जायगा ।

जहांतक, खासकर कपडेका सबंध है, लोग गावोमे अपनी जरूरतका कपडा खुद तैयार कर सकते है और उन्हे करना चाहिए । हमारी देविया जब अपने पाक हाथोसे सूत कातेगी तभी करोडो रुपये गाववालोकी जेबोमे जायंगे । ऐसा शुद्ध कौडीका सच्चा व्यापार हम करे । मै तो अपनेको किसान, भगी, व्यापारी सभी मानता हू । शुद्ध कौडीका व्यापार आप समझने दीजिए । मै व्यापार करना जानता हूं । आखिर वकालत तो मैने की है । वकालत भी तो एक किस्मका व्यापार ही है न? आज भी सबकी सेवा करता हू तो व्यापार ही करता

हू । किसी भी तरीकेसे पैसे कमा लेना ही व्यापार नही है । आप अगर लोगोकी सेवाके खातिर अकुश निकालना चाहते है, अपने खातिर नही, तो वह जायगा ही । आपने लिखा है कि "अंकुश हटानेमे ही हिंदुस्तानकी उन्नति और आजादी रही है ।" अगर वह सच्चा है तो आपके व्यापारमे वहुत सचाई होनी चाहिए, वहादुरी होनी चाहिए ।

मेरे पास एक पत्र आया है, जिसमे लिखा है कि हिंदुस्तानमें विदेशी कपडा वहुत आने लगा है । यह भी लिखा है कि हमारा कपडा वाहर भेजा जाता है । मेरी रायमे ये दोनो चीजे गलत है । अव तो आप शायद ऐसा भी कहने लगे कि हम हिदुस्तानकी स्त्रियोसे शादी नही करेगे, वाहरकी स्त्रिया लायेगे । तो वह कहाका व्यापार होगा ? मेरी मा तो मेरी ही मा है । क्या दूसरी स्त्री ज्यादा खूवसूरत होगी तो उसे मै अपनी मां वनाऊगा ? ऐसे ही आपको वाहरके खूवसूरत कपडे नही मगाने चाहिए ।

आज व्यापारी लोग पैसा कमानेके लिए वाहरसे कपडा मगाते है, लेकिन हम विदेशी कपडा क्यो मगाए और हमारा कपडा वाहर क्यो भेजे ? यहा जितना कपडा वनता है उसीमे काम चलावे और हमारी जरूरत पूरी होनेके वाद वचे तो वाहर भेजे । मिलका कपडा भले आप वाहर भेजें, लेकिन उसी हालतमें, जव हम जरूरतकी पूरी खादी अपने देशमे तैयार कर लें । कपडेका अकुश तो जाय, मगर साथमें पेट्रोल, लकडी वगैरहका अकुश भी जाना चाहिए ।

यहा लिखा है कि "मिलवालोकी चालमे सावधान रहो ।"

तब तो व्यापारियोकी चालसे और मेरी चालसे भी लोगोको सावधान रहना होगा। अगर मै दगा करता हू, सेवाके नामसे अपना स्वार्थ साधता हू तो मेरा गला काटना होगा। अगर मिल-मालिक या व्यापारी स्वार्थ साधते है तो उनका बहिष्कार करना चाहिए।[1]

नई दिल्ली, २८-१२-'४७

: ७९ :

उर्दू 'हरिजन'

पाठक जानते है कि नागरी लिपिमे और उर्दू लिपिमे भी इसी नामसे अलग-अलग साप्ताहिक 'हरिजन' निकलता है। उर्दू लिपिमे जो निकलता है, वह उर्दू 'हरिजन' है। उसकी गिरती हुई हालतके बारेमे श्रीजीवणजी लिखते है

"आज आपको उर्दू 'हरिजनसेवक'के बारेमें लिखनेकी जरूरत आ पडी है। इस वक्त इस पत्रकी मुश्किलसे ढाई सौ कापिया खपती है। हम लोगोने जब इसे शुरू किया था तब इसकी लगभग अठारह सौ कापिया खपती थीं। धीरे-धीरे बिक्री कम हो गई, खास करके लाहौरके दगेके बाद। पहले अकेले लाहौर शहरमें पाच सौसे सात सौ कापिया जाती थीं। मौजूदा हिसाबसे इसे चालू रखें तो हर माह डेढ हजार रुपयोंका नुकसान सहना पडे, यानी सालभरमें बीसेक हजारका नुकसान हो। आप भी नहीं चाहेंगे कि अखबारको इस तरह चालू रखा जाय। सच पूछा जाय

---

[1] हार्डिंग लाइब्रेरीमें व्यापारियोंकी एक सभामें दिया गया भाषण।

तो सितवरमें मैं आपसे बिडला भवनमें मिला था तब इस बारेमें आपने मुझसे बात की ही थी। मगर मुझे उम्मीद थी कि देशका वातावरण सुधरनेपर इस हालतमें फेर पडेगा। इसके सिवा मेरे मनमें एक ख्याल यह था कि लोकसभामें कोई निश्चित प्रस्ताव पास न हो जाय तबतक नुकसान उठाकर भी इसे चालू रखा जाय, जिससे किसी तरहकी गलतफहमी न हो। अभी लोकसभाकी बैठक अप्रैलमें होगी। इसके बाद भी प्रस्तावका काम कब होगा, यह दूसरा सवाल है। इस तरह इस अखबारको अभी चार महीने और चालू रखें तो कोई खास हर्ज नहीं है, मगर पाच-छ हजारका ज्यादा नुकसान सहना पडेगा। इस तरह पूरी परिस्थितिका ख्याल करके आप अपना जो निर्णय देंगे, उसके मुताबिक मैं काम करूंगा। मौजूदा कलुषित वातावरणमें हमारा अखबार बद होनेसे गलतफहमी न बढे, इसका खास विचार रखना होगा।"

मेरी हमेशा यह राय रही है कि नुकसान उठाकर कोई अखबार न निकाला जाय। लोगोको जिस अखबारकी जरूरत हो, उसे वे कीमत देकर ले। जो अखबार विज्ञापन या इश्तहार छापकर अपना खर्च निकाले, उसे मैं स्वावलबी अखबार नही मानता। उर्दू 'हरिजन'को नुकसान उठाकर इतना भी चलने दिया, इसका कारण यह था कि 'हरिजन'की अलग-अलग भाषाकी प्रतियोमे कुल मिलाकर नुकसान नही हो रहा था। मगर इस तरह अखबार निकालनेकी भी कोई हद होती है। हिदुस्तानी और दो लिपियोके बारेमे मेरे विचार पहले जैसे ही है। इसलिए अभी थोडे समयतक जैसे चलता है वैसे ही उर्दू अखबार निकलता रहेगा। इस अर्सेमे गुजराती 'हरिजन' पढनेवाले और दूसरे लोग सोच ले कि वे उर्दू 'हरिजन' निकल-वाना चाहते है या नही। अगर चाहते है तो उन्हे उसके ग्राहक

बटानेमें तबतक मदद करनी चाहिए, जबतक उनकी तादाद दो हजारतक न पहुच जाय। इसके साथ ही वे दूसरी बात भी सोच ले। अगर उर्दू लिपि पसद न पड़ती हो और उर्दू लिपिमें 'हरिजन' बद करना पडे तो नागरी लिपिमे 'हरिजन' न निकालनेका धर्म पैदा होगा। नागरी लिपिमें 'हरिजन' निकालनेका स्वतंत्र धर्म मै नही समझता। सुधारकके नाते मेरा धर्म है कि या तो मै दोनो लिपियोमें अखबार निकालू या फिर एकमें भी नही।

'हिंदी' नाम न रखकर 'हिंदुस्तानी' क्यो रखा और नागरी-उर्दू दोनो लिपियोका आग्रह क्यो है, इसके बारेमें पहले अच्छी तरहसे लिखा जा चुका है। अब मुझे कोई नई दलील नही सूझती। यह लेख सिर्फ इतना बतलानेके लिए लिखा है कि उर्दू लिपिमे निकलनेवाले 'हरिजन'को किस तरह चालू रखा जा सकता है। मै यह माननेकी हिम्मत रखता हू कि मेरी आशा सफल होगी।

नई दिल्ली, २९-१२-'४७

: ८० :

खादकी व्यवस्था

"इधर-उधर बिखरा हुआ कूडा, द्रव हो या पदार्थ, जनताके स्वास्थ्य और सुविधाका रोड़ा होता है, जब कि अपने उचित स्थानपर इकट्ठे उसी कूड़ेकी खाद काममें आती है। कूडा

बिखराकर भूमिमाताका भोजन छीन लेना सगीन जुर्म है।"
ऐसा मीराबहनने २३–११–'४७के 'हरिजन' (पृष्ठ ४२८–२९)में प्रकाशित अपने एक पत्रमे कहा है, जो इस प्रकार है :

"हम अपनी भूमाताके साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते। वह परिश्रमपूर्वक हमें भोजन देती है, लेकिन इसके बदलेमें हम उसे नहीं खिलाते। सुपुत्रोकी तरह अगर हम अपनी पूजनीया माकी सेवा नहीं करते तो वह हमारा पालन-पोषण कैसे करेगी? हर साल हम खेत जोतकर उनमें बीज बोते और फसल काटते है, लेकिन जमीनको उसकी खूराक, खाद कभी-कभी ही देते हैं। जो देते भी हैं वह अधकच्चा कूड़ा होता है। जिस तरह भलीभाति पकाया भोजन हमें चाहिए, वैसे ही जमीनको भी भलीभाति तैयार की गई खाद जरूरी है।"

उत्सुक जन इस पत्रकी प्रति मीराबहन, किसान आश्रम, ऋषिकेश (हरिद्वारके पास)से मगा सकते है।
नई दिल्ली, २९–१२–'४७

: ८१ :

धूलका धान

'धूलमेंसे धान' ऐसा शीर्षक भी रखा जा सकता था, मगर मैंने 'धूलका धान' शीर्षक रखना पसद किया है।

धूलको छानकर उसमेंसे अनाजके दाने निकाल लेनेकी क्रियाको मैं धूलमेंसे धान निकालना कहता हू। उसी तरह महाउद्योगी चीनके लोग धूल या रेतमेंसे सोनेकी रज धोकर

निकालते है, इस क्रियाको भी मै धूलमेसे धान निकालना कहता हू। यहा धूलका रूप बदल गया और धानका तो बहुत ही बदल गया। मामूली तौरपर हम अनाजको धान कहते है। मगर जब धान शब्द सोनेकी रजके लिए काममे लाया जाता है तब तो उसके रूपमें बहुत बडा फर्क हुआ न ? यहा धानका मतलब ऐसी किसी उपयोगी चीजसे है, जिसकी कीमत आकी जा सके।

मगर 'धूलका धान' शब्दोका प्रयोग करे तब धूलका रासायनिक रूप बदला हुआ माना जायगा। जैसे कि धूल यानी मिट्टीका अनाज बनाएगे तब धूलका धान करना कहा जायगा। मिट्टीमे अनाजके बीज डाले, उसमे जरूरतके मुताबिक पानी दे तो अनाज पैदा हो। इसे मै धूलका धान करना कहता हू। अपनी भाषाका रूप निश्चित नही हुआ, क्योकि उसकी उपेक्षा की गई है।

अब मै मूल चीजपर आता हू। अग्रेजी शब्द 'कम्पोस्ट'-को मै धूलका धान मानता हू। कम्पोस्ट यानी गोबर और मनुष्य, जानवर और पक्षियोकी विष्ठा या मल, घास, कूडा-करकट, छिलके, जूठन और पेशाब-जैसी चीजोके उचित मेलमेसे पैदा होनेवाली सुवर्णरूपी जीवित खाद। इसे खेतकी मिट्टीमे मिलाकर उसमे बीज बोए तो ऐसे खेतमे कम-से-कम दुगुनी फसल तो जरूर पैदा हो और फिर भी जमीन अपना कस न छोडे।

इसके बारेमे मीराबहन खूब मेहनत उठा रही है। उन्होने ऋषिकेशमे किसान-आश्रम खोला है। जो काम उन्होने दिल्लीमे

शुरू किया, उसे वहासे जारी रखना चाहती है, उन्होने इस वारे-मे छोटी-छोटी पत्रिकाए निकालना शुरू किया है। उनके पाससे पत्रिका मगवाई जा सकती है। उनकी पत्रिका उर्दू लिपिमे निकलती है। खुद मीराबहनको हिंदुस्तानीका ज्यादा ज्ञान नही है। इससे वह अग्रेजीमे लिखती है और उनके मातहत काम करनेवाले उसका उर्दूमे तरजुमा करते है।

नई दिल्ली, २९–१२–'४७

: ८२ :

तात्यासाहब केळकर

दोस्तोने मुझे कई वार पूछा कि मैने तात्यासाहब केळकर-जैसे महान् देशभक्तकी मृत्युका उल्लेख क्यो नही किया, खासकर इसलिए कि वे मेरे राजनैतिक विरोधी थे और इससे भी ज्यादा इसलिए कि महाराष्ट्रके एक दलके लोगोमे मेरे वारेमें वहुत वडी गलतफहमी है। इन कारणोने मुझपर असर नही किया, हालाकि मेरे टीकाकारोके मुताविक इन्ही कारणोसे मुझे तात्यासाहवकी मृत्युका उल्लेख करनेके लिए प्रेरित होना चाहिए था।

मृत्यु-जैसी वडी भारी घटनाका आम रिवाजके मुताविक उल्लेख कर देना मै वहुत अनुचित मानता हू, लेकिन देर हो जानेपर भी अपने पुराने-से-पुराने दोस्त हरिभाऊ पाठकके आग्रहके कारण अव मुझे ऐसा करना चाहिए।

यह बात मैं एकदम कबूल कर लूगा कि अगर महत्त्वपूर्ण जन्मो और मृत्युओका उल्लेख करना 'हरिजन'के लिए आम रिवाज होता तो तात्यासाहबकी मृत्युका सबसे पहले उल्लेख किया जाना चाहिए। लेकिन 'हरिजन' पत्रोको ध्यानसे पढने-वाले पाठकोने देखा होगा कि 'हरिजन'ने ऐसे किसी रिवाजको नही माना है। इस तरहकी घटनाओका उल्लेख करना मेरे अवकाश और किसी समयकी मेरी धुनपर निर्भर रहा है। पिछले कुछ अरसेसे तो मै नियमसे अखबार भी नही पढ सका हू।

इसके खिलाफ कोई कुछ भी कहे, लेकिन मेरे राजनैतिक विरोधी होते हुए भी तात्यासाहबको मैने हमेशा अपना दोस्त माना था, जिनकी टीकासे मुझे फायदा होता था। स्व० लोकमान्यके माने हुए अनुयायीके नाते मै उन्हे जानता था और उनकी इज्जत करता था। मेरे खयालमे सन् १९१९ मे अखिल भारत काग्रेस कमेटीकी एक बैठकमे मैने यह सिफारिश की थी कि काग्रेसका एक विधान तैयार किया जाय और कहा था कि अगर लोकमान्य तात्यासाहबको और देशबधु श्रीनिशीथ सेनको मददके लिए मुझे दे दे तो मै विधान तैयार करके काग्रेसके सामने पेश करनेकी जिम्मेदारी लेता हू। अपने साथ काम करनेवाले इन दोनो सज्जनोकी तारीफमे मुझे यह कहना चाहिए कि हालाकि मैने समयपर विधानका अपना मसविदा उनके सामने पेश कर दिया, लेकिन उन्होने कभी उसमे रुकावट नही डाली। विधानके मसविदेपर विचार करनेके लिए जो कमेटी बैठी, उसमे तात्यासाहबने हमेशा ऐसी

टीका की, जिससे उसे सुधारने-सवारनेमे मदद मिली। इसके अलावा मेरे सुझावपर ही तात्यासाहवको हमेशा काग्रेस वर्किंग कमेटीका सदस्य वनाया जाता था। मुझे ऐसा एक भी मौका याद नही आता जव उनकी टीका—हालाकि वह कभी-कभी कडुवी होती थी—रचनात्मक न हुई हो। वह निडर थे, लेकिन सभ्य और मित्रता भरे थे।

मुझे वहुत पहले यह मालूम हो चुका था कि वे मराठीके वडे विद्वान लेखक थे। मुझे इस वातका अफसोस रहा है कि मराठीके तात्यासाहव और स्व० हरिनारायण आप्टे जैसे आधुनिक लेखकोकी वुद्धिका अमृतपान करनेके लिए मराठीका काफी अध्ययन करनेका मुझे कभी समय नही मिला। हिंदुस्तानी आकाशके श्री नरसोपत चितामन केळकर-जैसे चमकीले तारेके अस्तकी उपेक्षा करना मेरे लिए असभ्य और अशोभन वात होगी।

नई दिल्ली, ३१-१२-'४७

: ८३ :

अहिंसा कभी नाकाम नहीं जाती

एक यूरोपियन भाई लिखते है

"रॉय वाकरने आपके कामपर, जो सराहनेके काबिल है, 'स्वोर्ड ऑव गोल्ड' ('सोनेकी तलवार') नामकी एक किताब लिखी है, जिसे पढकर रोगटे खडे होने लगते है। मैंने उस किताबको ध्यानसे पढा। उससे पता

चला कि आपने जिंदगीभर अहिंसापर चलने और दूसरोंको चलानेकी पूरी कोशिश की है। किताब पढकर मेरी तसल्ली हो गई कि कम-से-कम जहांतक हिंदुस्तानके नेताओं और आम लोगोंका सवाल है, अपनी अपार लगनकी बदौलत आपको अपने काममें कामयाबी मिली है। ब्रिटेनने जो जाहिरा तौरपर इस तरह नेकदिली और दोस्तीके साथ हिंदुस्तान छोड दिया, उससे यह उम्मीद मालूम होती है कि अहिंसाकी कदर अब सिर्फ आपके मुल्कतक ही सीमित नहीं है। मालूम होता है कि हिंसाकी मजबूत मोटी दीवारें पहली बार कहीं-कहीं कुछ टूटी है और इन्सानी समाजके लिए कुछ भले दिन आनेवाले है।

"पर जॉर्ज डेवीजके 'पीस न्यूज' के आखिरी सस्करणमें यह छपा है कि आप खुद एक तरह अपनी हार मान रहे है। इसे पढकर मुझे उतनी ही ज्यादा निराशा हुई। मेरा दिल यह पढकर बडा दुखी हुआ कि आपको खुद आज जो निराशा अपने दिलमें महसूस हो रही है, वह पहले कभी न हुई थी। यह बिलकुल सच है कि ईश्वर आदमीकी कामयाबी नहीं देखता, बल्कि उसकी सचाई और प्रेम देखता है। फिर भी यह देखकर दुःख होता है कि इन्सानी समाज हिंसामें इतना डूबा हुआ है कि आपने और आपके थोडेसे साथियोंने जिंदगीभर जो रूहानी ताकत दिखाई है और जबरदस्त कुरबानियां की है, उनका भी समाजपर असर नहीं हुआ।

"मै मानता हूं कि चीजोंकी असलियतको जितनी अच्छी तरह आप देख और समझ सकते है, मै नहीं देख सकता। आप कहीं अच्छा समझ सकते है। फिर भी मै नहीं मान सकता कि आपकी इतनी जबरदस्त और बहादुरीकी कोशिशें निकम्मी जाए और इन्सानी समाजपर उनका असर न हो। आपने अपने शब्दोंसे और अपने कामोंसे जो अच्छे बीज मेहनतके साथ लगातार अपने चारों तरफ बोए है, वे फिजूल जाएं, यह दिल नहीं मानता।

"जो हो, कम-से-कम मैं (और मुझे भरोसा है कि जो बात मैं कहता हू वही करोडोके दिलसे निकल रही है) अपना यह जरूरी फर्ज समझता हूं कि आप जिस चीजको इन्सानी समाजके भले और उसके छुटकारेका एकमात्र रास्ता समझते थे, उसके लिए आपने जो अपनी सारी जिंदगी दे दी, इसके लिए मैं दिलसे आपका हद दर्जेका अहसान मानू।"

जिस रिपोर्टका आपने जिक्र किया है, वह मैंने नही देखी। जो हो, मैंने जो कुछ कहा है उसका मतलब अहिंसाकी असफलतासे नही है। मैंने जो कुछ कहा है, उसका मतलब यह है कि मै खुद वक्तपर इस बातको न देख सका कि जिसे मै अहिंसा समझा था, वह अहिंसा थी ही नही, बल्कि कमजोरोका मद विरोध था, जो किसी मानीमे भी कभी अहिंसा कहा ही नही जा सकता। आज हिंदुस्तानमे जो भाई-भाईकी लडाई हो रही है, वह उन ताकतोका सीधा नतीजा है जो तीस बरसके कमजोरोके कारनामोने पैदा कर दी है। इसलिए आज दुनियाभरमे जो हिंसा फूट पडी है, उसे ठीक-ठीक देखनेका सही तरीका यही है कि हम इस बातको समझे कि मजबूत लोगोकी उस अहिंसाका ढग, जिसे कोई जीत ही नही सकता, अभी हमने पूरी तरह नही समझ पाया है। सच्ची अहिंसाकी ताकतका एक माशा भी कभी जाया नही जा सकता। इसलिए मुझे यह घमड नही करना चाहिए और न आप-जैसे दोस्तोको इस धोखेमे रहना चाहिए कि मैंने अपने अदर भी कोई बडी बहादुरीभरी और टकसाली अहिंसा दरसाई है। मै सिर्फ इतना दावा कर सकता हू कि मै बिना रुके उस तरफ बढा चला जा रहा हू। मेरी इस बातसे अहिंसामे आपका विश्वास

मजबूत हो जाना चाहिए और उससे आपको और आप-जैसे दोस्तोको इस रास्तेपर और तेजीसे बढनेमे मदद मिलनी चाहिए।

नई दिल्ली, १-१-'४८

: ८४ :

नपी-तुली बात कहिए

मलाबारसे एक भाई लिखते है

"२१ दिसंबर, १९४७ के 'हरिजन' में श्री देवप्रकाश नय्यरने 'तकलीकी ज्ञान-शक्ति'के बारेमें जो बातें विश्वासके साथ लिखी है, उनसे आश्चर्य होने लगता है। उन्होने यह बताया है कि तकलीमें सारा ज्ञान समाया हुआ है या तकलीसे सारा ज्ञान हासिल किया जा सकता है या तकली ही सारे ज्ञानका निचोड है। मै खुद लबे समयसे कातता हू और जीवनकी गाधीवादी फिलासफी (दर्शन) में मेरा विश्वास है; लेकिन ऊपरका लेख पढकर मुझे बडा अचरज हुआ। यह कहना कि तकली ज्ञानका 'अत' है और उसके जरिए दुनियाके हर विषयका शिक्षण दिया जा सकता है, नीम हकीमकी उस गोलीकी तरह है, जिसके बारेमें हर तरहकी बीमारीको अच्छा करनेका दावा किया जाता है। गाधीजी भी तकलीके लिए ऐसी जादूभरी ताकतका दावा नहीं करते। इसमें कोई शक नहीं कि तकली, चरखे और कताईका शिक्षाकी उचित योजनामें, खासकर नई तालीममें, एक स्थान है। लेकिन यह कहना कि तकली स्वभावसे हमे गणित, पदार्थ-विज्ञान, अर्थशास्त्र वगैरहके अध्ययनमें ले जाती है, 'भावुक मूर्खता'के सिवा कुछ नही है। शिक्षाके क्षेत्रमें तकलीके गुणो और उपयोगिताको बढ़ा-चढ़ाकर बताना उतना ही बुरा है, जितना कि

दूसरे लोगोद्वारा उसके सही स्थानको माननेसे इन्कार करना, बल्कि उससे भी बदतर है। यह पढकर हँसी आती है कि तकलीके जरिए हम पदार्थ-विज्ञान वगैरहके वैज्ञानिक नियमोका अध्ययन कर सकते हैं। गाधीजीने देशकी माली हालत सुधारने और गरीबीको मिटानेके लिए तकली और चरखेको दाखिल किया और कहा कि जब आम जनता इन दोनोका उपयोग करेगी तो वह नैतिक दृष्टिसे ऊपर उठेगी। इस तरह गाधीजी तकलीके लिए आर्थिक और नैतिक गुणोका ही दावा करते हैं (जिसकी मुझे यहा ज्यादा चर्चा करनेकी जरूरत नहीं)। और इतना दावा काफी है। तकलीके लिए इससे ज्यादा बडा दावा क्यो किया जाय? इसकी जरूरत भी क्या है? तकलीका उत्साह रखनेवालोको कताईके पक्षमें अपनी दलीलें इस हदतक नहीं ले जानी चाहिए कि लोग उनपर हँसें। कताईके मकसदको इस तरह आगे नहीं बढाया जा सकता।"

इससे जाहिर होता है कि खत लिखनेवाले भाईने श्री देवप्रकाश नय्यरके तकलीके बारेमे लिखे लेखको पूरी सावधानीसे नही पढा है। मैंने उसे पढा है। उसमे उन्होने ऐसा कोई दावा नही किया है, जिसकी खत लिखनेवाले भाईने कल्पना कर ली है। 'तकलीकी ज्ञान-शक्ति'के लेखकने यह नही कहा है कि "तकलीमे सारा ज्ञान समाया हुआ है", या कि "वह तकलीके जरिये हासिल किया जाता है", और न उन्होने यह कहा है कि "तकली ज्ञानका निचोड है।" उनका सिर्फ इतना ही कहना है कि जो बहुत-सा ज्ञान हम किताबोंके जरिये हासिल करते है, वह योग्य शिक्षकोद्वारा दस्तकारियों-की मारफत ज्यादा अच्छी तरह सिखाया जा सकता है। यह हकीकत कि खत लिखनेवाले भाईको, जो लम्बे समयसे कताई

करते है, श्री देवप्रकाश नय्यरके दावेसे 'बडा अचरज' हुआ है और वह उसे 'भावुक मूर्खता' कहते है, उस बातको साबित करती है कि शिक्षा तकलीमे नही रहती, बल्कि एक शिक्षा-शास्त्रीमे रहती है, जो श्री देवप्रकाश नय्यरकी तरह तकलीकी शक्तियो और सभावनाओकी परीक्षा करके ऊपरका दावा करनेका हक रखता है।

मुझे डर है कि खत लिखनेवाले भाईके इस आत्म-सतोषको मुझे दूर कर देना पडेगा कि मैने भी निर्दोष दिखाई देनेवाली तकलीके लिए "आर्थिक और नैतिक गुणो"के सिवा दूसरे गुणोका दावा नही किया है। मुझे यह कहते हुए अफसोस होता है कि मेरे इस मामूली दावेको भी सब लोगोंने स्वीकार नही किया है। शायद हिदुस्तानमे मै पहला आदमी था, जिसने तकलीको उन गुणोसे विभूषित किया, जिन्हे बढे-चढे कहा जा सकता है। इस क्षेत्रमे अमली शिक्षा देनेवाले शिक्षकोने दस्तकारियोमे उनसे कही ज्यादा संभावनाए खोज निकाली है, जिनका मैने जिक्र किया था। इसका सारा श्रेय उन्हीको है।

मै खत लिखनेवाले भाईको जोरोसे यह सलाह दूगा कि वह नम्रतासे श्री देवप्रकाश नय्यरके सावधानीसे पेश किए गए दावेको मजूर करे और इस बारेमे उनसे ज्यादा जानकारी पानेकी कोशिश करे कि उन्होने अपने विद्यार्थियोको नई तालीमके पाठ सिखानेमे तकलीके बारेमे यह खोज कैसे की। अगर उनकी खोज कल्पित होगी तो खत लिखनेवाले भाईको जल्दी ही इसका पता लग जायगा और श्री देवप्रकाश नय्यरको अपनी हार माननी पडेगी। कहा जाता है कि एक सेवकके

अपनी डालसे नीचे गिरनेसे न्यूटनका तेज दिमाग गुरुत्वाकर्षणका नियम खोज सका था ।

नई दिल्ली, २-१-'४८

: ८५ :

क्या मैं इसका अधिकारी हूं ?

मेहमानदारी करनेवाले हिंदुस्तानका किनारा छोडनेसे पहले रेवरेंड डॉ० जोन हेनिस होम्सने मुझे एक लंबा खत लिखा था । उसमे वह कहते है

"बेशक, हालके महीनेमें होनेवाली दु खभरी घटनाओसे आप बहुत ज्यादा दुखी हुए हैं—उनके बोझसे आप दब-से गए है, लेकिन आपको कभी यह महसूस नहीं करना चाहिए कि इससे आपकी जिंदगीके कामको किसी तरह धक्का लगा है । मनुष्य-स्वभाव बहुत ज्यादा सहन नहीं कर सकता, वह बहुत बडे दबावके नीचे टूट पडता है, और इस मामलेमें यह दबाव जितना अचानक था, उतना ही भयानक भी था । लेकिन इस मौकेपर भी हमेशाकी तरह आपका उपदेश सच्चा और आपका नेतृत्व ठोस बना रहा । आपने अकेले हायो हिंदुस्तानको बरबादीसे बचा लिया और पलभरके लिए जो हार दिखाई दी, उसमेंसे जीतको जन्म दिया । पिछले कुछ महीनोको मैं आपके अनोखे जीवनकी बडी-से-बडी विजयके महीने मानता हू । इन अधेरेसे भरे दिनोंमें आप जितने महान् साबित हुए हैं, उतने पहले कभी न हुए थे ।"

मुझे ताज्जुब होता है कि क्या यह दावा साबित किया जा सकता है ? उसमे मुझे जरा भी शक नहीं कि अहिंसाने

वारेमे डॉ० होम्सने जो कुछ कहा है, उससे कई गुना ज्यादा साबित करके दिखाया जा सकता है। मेरी कठिनाई बुनियादी है। क्या डॉ० होम्सने अहिंसाकी जितनी तारीफ की है, उसके उतने गुण भी दुनियाको दिखाने लायक योग्यता मैंने हासिल कर ली है? मैं अहिंसाके कामको कितने ही अपूर्ण रूपसे क्यों न जानूं, फिर भी उसके बारेमे ऐसे दावे, जिन्हे विना किसी शकके सावित न किया जा सके, पेश करनेमे ज्यादा-से-ज्यादा सावधानी रखना मैं हर कारणसे जरूरी समझता हूं।

नई दिल्ली, ३-१-'४८

: ८६ :

राष्ट्र-भाषा और लिपि

शिलांगसे श्री रमेशचद्रजी पूछते है

(१) "राष्ट्रभाषाको 'हिंदी' कहिये या 'हिंदुस्तानी' यह कोई खास विवादका सवाल नहीं है। रोजमर्राकी बातचीतमें तो चालू हिंदुस्तानी काममें आएगी ही। ऊंचे साहित्य, विज्ञान व ऐसे दूसरे विषयोके लिए नए शब्दोका कोष संस्कृत भाषासे ही बनेगा, इससे भी शायद ही कोई इन्कार करेगा। यह बात साफ-साफ सबको बतलाई जाय तो क्या हर्ज है?"

इस सवालका पहला हिस्सा तो ठीक है। अगर एक नामके सब एक ही मानी करे तो झंझट रहती ही नही। झगडा नामका नही है, कामका है। काम एक हो तो अनेक नामका विरोध वितंडावाद होगा।

ऊचे साहित्य और विज्ञानके शब्द संस्कृतमेसे ही क्यो हो ? इस बारेमे कोई आग्रह होना ही नही चाहिए। एक छोटी-सी समिति ऐसे शब्दोका कोष बना सकती है। इसमे बात होगी चालू शब्दोको इकट्ठा करनेकी। मान लीजिए कि एक अंग्रेजी शब्द हिंदुस्तानीमे चल पडा है, उसे निकाल-कर हम क्यो खास संस्कृत शब्द बनावे ? ऐसे ही, अगर अंग्रेजी-का चलता शब्द ले ले तो उर्दू क्यो नही ? 'कुरसी' शब्दके लिए 'चतुष्पाद-पीठिका' ले कि बिना रोकटोकके 'कुरसी' ले ? ऐसी मिसाले और भी निकल सकती है।

(२) "जो मसला है, सो लिपिका है। दो लिपि चालू होते हुए भी यह सवाल (और ठीक सवाल) सभी करते है कि दो लिपिका चलन राष्ट्रके कामको चलानेमें बेकार बोझ साबित होगा। तब दो लिपिके बदले एक लिपि, जो सभी प्रातोके लिए सहज और आसान है, क्यो न मानी जाय ?

"दो लिपि माननेके मानी भी मै समझना चाहता हू। क्या उसका यह मतलब होगा कि केंद्रीय सरकारकी सब घोषणाए दोनो लिपियोमें छापी जायगी ?

"फिर, तार-घर वगैरहसे जो तार आदि निकलेंगे, वे तो किसी एक ही लिपिमें लिखे जायंगे। दूसरी लिपिका उपयोग इन जगहोमें किस तरह हो सकेगा, यह भी मै जानना चाहता हू।

"मै यह माननेको तैयार नहीं हू (हालाकि बहुतेरे लोग ऐसा कहते है) कि दूसरी लिपि मुसलमान भाइयोको खुश करनेके लिए रखी गई है। हमें तो यह देखना चाहिए कि किसीपर भी अन्याय किए बिना राष्ट्रका भला किस लिपिके चलनेमें होगा। नागरीके चलनसे मुसलमान भाइयोको नुकसान होगा, ऐसा मानना तो ठीक नहीं है।

"जहातक मै समझता हू, दोनो लिपिका चलन थोडे अर्सेके लिए

ही जरूरी है, जिससे कि वे लोग जो इन लिपियोके जानकार नही है, धीरे-धीरे जान जायं। आखिरमें सभी एक लिपिको अपनावें, इसमें कैसे सदेह हो सकता है?"

दो लिपिको रखते हुए जो आखिरमे आसान होगी वही चलेगी। यहा वात इतनी ही है कि उर्दूका बहिष्कार न हो। इस बहिष्कारमे द्वेष है। इस झगडेकी जडमे द्वेष था, आज वह बढ गया है। ऐसे मौकेपर हम, जो एक हिंदुस्तान चाहते है, और वह हथियारोकी लडाईसे नही, उनका फर्ज होता है कि दोनो लिपिको जगह दे। हम यह भी न भूले कि वहुतेरे हिंदू व सिक्ख पडे है, जो नागरी लिपि जानते ही नही। मुझे इसका तजरबा हमेशा होता है।

करोडोको दोनो लिपि सिखानेकी बात नही है। जिनको अपने सूबेसे वाहर काम करना है, उन्हे वे सीखनी चाहिएं। केद्रके दफ्तरमे सब कुछ दोनो लिपियोमे छापनेकी बात भी नही है। जो इश्तहार सबके लिए हो, उन्हे दोनो लिपियोमे छापना जरूरी है। जब दोनो कौमोके बीच जहर फैल गया है तब उर्दू लिपिका बहिष्कार लोक-वादका विरोध ही बताता है।

तार आदि जब रोमन लिपिमे नही लिखे जायगे तब शायद उर्दू या नागरी लिपिमे लिखे जायगे। इसे मै छोटा सवाल मानता हू। जब हम अग्रेजीका और रोमन लिपिका मोह छोडेगे तब हमारा दिल और दिमाग ऐसा साफ हो जायगा कि हम इस झगडेके लिए शरमाएगे।

किसीको राजी रखनेके लिए कोई बेजा काम हम कभी न करे। पर राजी रखना हर हालतमे गुनाह नही है।

एक ही लिपिको सब खुशीसे अपनावे तो अच्छा ही है। ऐसा होनेके लिए भी दो लिपियोका चलना आज जरूरी है।
नई दिल्ली, ४–१–'४८

: ८७ :

छात्रालयोमें हरिजन

भाई परीक्षितलाल लिखते है

"बबई सरकारने छुआछूत दूर करनेके दो कानून बनाए है। उनके आधारपर मदिर, कुए, धर्मशालाए, स्कूल, होटल वगैरह तमाम जगहे, जहा दूसरे हिंदू जा सकते है, वहा हरिजन भी खुले तौरपर जा सकते है। ऊपर बताए हुए कानूनोमें सार्वजनिक छात्रालय भी आ जाते है और उनके अनुसार बबई प्रातके कई छात्रालय, जो आजतक सिर्फ हिंदुओकी ऊची मानी जानेवाली जातियोके लिए ही खुले थे, अब अपने-आप हरिजनोके लिए भी खुले माने जा सकते है।

"थोडे वक्तमें स्कूलो और कॉलेजोका चालू वर्ष पूरा होगा। यानी ऐसे सार्वजनिक छात्रालयोमें नई भरती करनेका सवाल खडा होगा। मेरा ऐसा अनुभव हुआ है कि ऐसे छात्रालयोमें हरिजन विद्यार्थियोको दाखिल करनेके बारेमें और उनके साथ बैठकर खाना खानेके बारेमें विद्यार्थियोका विरोध जितनी हदतक कम हुआ है, उतनी हदतक छात्रालयोके सचालक आगे नहीं बढ सके है। नतीजा यह हुआ है कि ज्यादातर विद्यार्थियोकी सम्मति होते हुए भी सचालक-मडलोने स्वय आगे बढकर अपने छात्रालयोका दरवाजा हरिजनोके लिए खुला नहीं रखा। सचालक-मडलोको अब कानून भी मदद करता है। ऐसी हालतमें हरिजन

विद्यार्थियोको कानूनका सहारा लेकर छात्रालयोमें दाखिल होनेकी जरूरत पड़े उससे पहले, उम्मीद है कि सचालक-मडल अपने आप छात्रालयोंके दरवाजे खोलकर हिंदुस्तानकी सच्ची सेवा करेंगे।

"सूरतमें पाटीदार आश्रम और अनाविल आश्रममें हरिजन विद्यार्थी बाकायदा दाखिल हुए है। भावनगरके तापीवाई गाधी कन्यागृहमें हरिजन छात्राएं है। इस तरह क्या आप गुजरात-काठियावाडके सभी सार्वजनिक और जातीय छात्रालयोके सचालकोसे सिफारिश करेंगे कि वे हरिजन विद्यार्थियोको समान भावसे दाखिल कर लें?"

इसमे मै इतना और बढा देना चाहता हू कि अगर विद्यार्थी सच्चे हो तो उन्हे कोई रोक नही सकता। इस जमानेमे विद्यार्थियोके आगे सचालकोकी नही चल सकती। उसमे भी जब धर्म विद्यार्थियोके पक्षमे हो और सचालक अधर्म कर रहे हो तब तो सचालकोकी बिलकुल ही नही चल सकती। दुनियाको आम खानेसे काम है, पेड़ गिननेसे नही। चाहे जो कारण हो, छात्रालयोमे हरिजन हक और इज्जतके साथ दाखिल होने चाहिए।

नई दिल्ली, ४-१-'४८

: ८८ :

प्रमाणित-अप्रमाणितका फर्क

नीचेके सवाल आज उठ सकते है। यह जमानेके बदलनेकी निशानी है

"आजादी मिलनेके बाद शुद्ध खादी, अप्रमाणित खादी, मिलके

कपडे और विलायती कपडेमें बहुत फर्क नहीं रह जाता। जितनी जरूरत हो, उतना खुद ही कातकर और बुनकर पहनें तो जरूर फर्क हो जाता है; क्योंकि इससे एक खास विचार-धाराका पता चलता है। पर जितना कपड़ा चाहिए, उतना सूत तो काता नहीं जाता। खादी तो खादी-भंडारसे ही खरीदते हैं। उसके लिए भी जितना सूत देना पडता है, खुद नहीं काता जाता है। शुद्ध खादीमें कोई सुधार नहीं दिखाई देता। अप्रमाणित खादीमें बहुत तरहके कामके कपडे आते हैं। इसका कारण यह दिखाई देता है कि शुद्ध खादीवालोको सुधारमें कोई रस नहीं है। आजकल मजदूरी इतनी ज्यादा हो गई है कि जीवन-वेतनका भी सवाल नहीं रहता। फिर जरूरत हो तो अप्रमाणित खादी लेनेमें क्या हर्ज है?

"सारे देशमें कपडेकी काफी कमी है। राष्ट्रीय सरकार खुद विलायती कपडा मंगाती है। विलायती कपडा मंगाना न मंगाना सरकारके हाथमें है। फिर भी वह कपडा मंगाती है तो फिर खरीदनेमें क्या बुराई है?"

प्रमाणित खादी ही प्रमाण हो सकती है। यहा 'प्रमाणित' शब्दसे असली मतलब पूरी तरह जाहिर नही होता। प्रमाणित-का असली मतलब है—वह खादी जिसमे सूत पूरे-पूरे दाम देकर खरीदा गया है, जिसे ठीक दाम देकर हाथसे बुनवाया गया है और खादीका दाम नफाखोरीके लिए नही, बल्कि लोक-लाभके लिए ही रखा गया है। स्वावलंबी यानी अपनी बनाई खादीके सिवा बाकी ऐसी खादी बाजारसे लेनी पडती है। उस खादीके लिए कुछ प्रमाण जनताके लिए जरूरी है। ऐसा प्रमाण देनेवाली एक ही सस्था हो सकती है। वह है चरखा-संघ। इसलिए चरखा-संघ जिसे प्रमाण दे, वही प्रमाणित खादी।

उसे छोडकर जो खादी मिले, वह अप्रमाणित हो जाती है।

प्रमाण-पत्र न लेनेमे कुछ-न-कुछ दोप तो होना ही चाहिए। दोषवाली खादी हम क्यों ले? दोषवाली और बेदोपकी खादीमे फर्क है, इसमे शकके लिए गुजायश ही नही हो सकती।

यह सवाल किया जा सकता है कि प्रमाण-पत्रकी शर्तमे ही दोष हो सकता है। अगर दोष है तो उसे बताना जनताका धर्म है। आलसके कारण दोष बतानेके बदले अप्रमाणित और प्रमाणितका फर्क उडा देना किसी हालतमें ठीक नही है। हो सकता है कि हममे कुचाल इतनी बढ गई है कि हम ठीक चाल जनतामे चल ही नही सकते, या जिसे हम ठीक चाल मानते है, वह धोखा ही है। इस हदतक जाना जनताके प्रतिनिधिका काम नही है।

खादी, स्वदेशी मिलके कपडे ओर विदेशी कपडेमे फर्क है, इस बातमे शक ही कैसे पैदा हो सकता है? परदेशी राज गया, इसलिए परदेशी कपडा लाना ठीक बात कैसे हो सकती है? ऐसा खयाल करना ही बताता है कि हम परदेशी राजके विरोधका असली कारण ही भूलते है। परदेशी राज होनेसे मुल्कको बडा माली नुकसान होता था। इस माली नुकसानको मिटाना ही स्वराजका पहला काम होना चाहिए।

तात्पर्य यह है कि स्वराजमे शुद्ध खादीको ही जगह है। उसीमे लोक-कल्याण है। उसीसे समानता पैदा हो सकती है।

नई दिल्ली, ५-१-'४८

: ८६ :

खादीकी मारफत

एक सज्जन लिखते है .

"सारे हिंदुस्तानकी कपडेकी कमी ६ माहमें दूर हो सकती है। उसके लिए दो शर्तें है—१. गाव-गावमें सूत कताई और बुनाई कराना प्रातीय सरकारो और हिंद सरकारकी नीति हो, और इस काममें सरकारी नौकरोसे मदद मिले। २ अपने प्रात व देशके वडे नेता इधर अधिक ध्यान देकर इसका काफी प्रचार करें।"

कपडोकी कमी पूरी करनेके लिए ये शर्तें आसान लगनी चाहिए। दोनो शर्तोंका पालन काग्रेसी हुकूमतका धर्म है। जितनी ढिलाई है, सब धर्म-पालनकी कमी सावित करती है। ढिलाई आई है, इसमे शक नही है। उसे मिटानेका आज सबसे अच्छा मौका है; क्योकि कपडोके दाम वहुत वढ गए है। इसका सबब हमारी नादानी ही है। अब यह कैसे मिटे ? जिनका खादीमे अटल विश्वास है, उनके व्यवहारसे, उनकी वुद्धिके तेजसे और तजरवेसे। जब हुकूमतकी नीति खादीके अनुकूल होगी तब कपडे आदिपर अकुशकी वात अपने आप छूट जायगी। इस बीच आज कपडोपर जो अकुश है, वह गरीवोंके हितमें जल्द-से-जल्द जाना चाहिए।

नई दिल्ली, ५-१-'४८

: ९० :

उर्दू लिपिका महत्त्व

करीब दो हफ्ते हुए, मैने 'हरिजन बधु' मे इशारा किया था कि बिक्री कम हो रही है, इसलिए उर्दू 'हरिजन' शायद बद करना पडेगा। घाटेका सवाल छोड दे तो भी जब माग नही तब उसे छापनेमे कोई अर्थ नही। बिक्रीका गिरना मेरे लिए तो इस बातकी निशानी है कि लोगोको यह चीज पसद नही है। लोग इससे नाराज है। अगर मै इस चीजकी तरफ ध्यान न दू तो मेरी मूर्खता होगी।

मेरे विचार बदल नही सकते, खासकर हमारे इतिहासके इस अनोखे मौकेपर। मै मानता हू कि खास सिद्धातका सवाल न हो तो मुसलमानो या किसी दूसरेको दु ख देनेवाली कोई बात करना गलती है। जो नागरी लिपिके अलावा उर्दूलिपि सीखनेकी तकलीफ उठाएगे, उन्हे कोई नुकसान पहुचनेवाला नही। उन्हे यह फायदा होगा कि वे उर्दू भी सीख जायगे। हमारे देशमे बहुतसे लोग उर्दू जानते है। अगर आज हमारी विचारधारा टेढी न चलती तो यह सीधी-सादी बात समझनेके लिए किसी दलीलकी जरूरत ही न थी। उर्दूलिपिमे कई कमिया है। मगर खूबसूरती और शानमे वह दुनियाकी किसी भी लिपिका मुकाबला कर सकती है। जबतक अरबी-फारसी जिदा है, उर्दूलिपि मर नही सकती, अगरचे उर्दूकी आज अपनी स्वतत्र हैसियत है और उसे बाहरकी मददकी जरूरत ही नही। थोडी-सी तबदीली करनेसे उर्दूलिपि शार्ट हैडका

काम दे सकती है। राष्ट्रलिपिके तौरपर अगर पुराने बंधन निकाल दिए जाय तो उर्दूलिपिमे ऐसा फेरफार किया जा सकता है कि बिना किसी तकलीफके उसमे सस्कृतके श्लोक लिखे जा सके।

आखिरमे मुझे यह कहना है कि जो लोग गुस्सेमे आकर उर्दूलिपिका वहिष्कार करते है, वे यूनियनके मुसलमानोकी खामखाह बेअदबी करते है। उनकी आखोमे ये मुसलमान आज अपने देशमे परदेशी हो गए है। यह तो पाकिस्तानके बुरे तरीकोकी नकल करना हुआ और वह भी बढा-चढाकर। मेरी हर एक हिंदुस्तानीसे यह माग है कि वह पाकिस्तानकी बुराईकी नकल करनेसे इन्कार करे। अगर मैने जो लिखा है, उसे वे पूरी तरह समझेगे तो हिंदी और उर्दू 'हरिजन' को बंद होनेसे बचा लेगे। क्या मुसलमान भाई इस मौकेपर पूरे उतरेगे ? उन्हे दो चीजे करनी है। उर्दू 'हरिजन' खरीदना और मेहनतसे नागरी लिपि सीखकर अपने दिल और दिमागको फायदा पहुचाना।

नई दिल्ली, ११-१-'४८

: ६१

लोकशाही कैसे काम करती है ?

एक माने हुए दोस्तने मुझे दो खत लिखे है। उनमें मुझे बिना सोचे-समझे चीजोपरसे अकुश हटानेके बुरे नतीजोके

वारेमे मौकेकी चेतावनी दी है और दूसरेमें हिंदू-मुस्लिम-दगोके फूट पडनेकी सभावना वताई है। मैने एक खतमे उनके दोनो खतोका जवाव दिया है, जो अचानक वाद-विवादका विपय वन गया है और लोकशाहीके वारेमें मेरी राय जाहिर करता है, जो आम जनताके अहिसक कामसे ही कायम हो सकती है। इसलिए मै वह खत नीचे देता हूं। यहा मै वे दो खत नही दे रहा हू, जिनके जवावमे मैने नीचेका खत लिखा है। मेरे जवावमे ऐसी काफी वाते है, जिनसे पढनेवाले उन दो खतोका आशय जान सकेगे। मैने यहा जान-बूझकर खत लिखने-वाले भाईका और जगहका नाम नही दिया है, इसलिए नही कि वे खत निजी या गुप्त रखने लायक है, वल्कि इसलिए कि दोनोको जाहिर करनेसे कोई लाभ नही होगा।

"आप अभी भी इस तरह लिखते है मानो आप गुलाम हो, हालाकि हमारी गुलामी अव खतम हो गई है। अगर आपके कहनेके मुताविक अंकुश हटनेका वुरा नतीजा हुआ है तो आपको उसके खिलाफ आवाज उठानी चाहिए, चाहे ऐसा करनेवाले आप अकेले ही क्यो न हो और आपकी आवाज कमजोर ही क्यो न हो। सच पूछा जाय तो आपके वहुतसे साथी है और आपकी आवाज भी किसी तरह कमजोर नही है, वशर्ते कि सत्ताके नशेने उसे कमजोर न बना दिया हो। अकुश हटनेसे ऊचे चढ़नेवाले दामोका भूत मुझे तो व्यक्तिगत रूपसे नहीं डराता। अगर हमारे वीच वहुतसे धोखेवाज लोग है और हम उनका मुकावला करना नही जानते तो हम उनके द्वारा खा लिए जाने लायक है। वे हमें जरूर खा जायंगे। तब हम मुसी-वतोका वहादुरीसे सामना करना जानेंगे। सच्ची लोकशाही लोग कितावो-से या नामसे सरकार कहे जानेवाले लेकिन असलमें अपने सच्चे सेवकोसे नहीं सीखते। कठिन अनुभव ही लोकशाहीका सबसे अच्छा शिक्षक होता

है। मुझसे अपील करनेके दिन अब चले गए। ब्रिटिश हुकूमतके दिनोंमें हमने अहिंसाका जो जामा पहन रखा था, उसकी अब जरूरत नहीं रही। इसलिए हमें इतनी भयानक हिंसाका सामना करना पड रहा है। क्या आप भी उसके सामने झुक गए या आपमें भी कभी अहिंसा थी ही नहीं ? यह खत मैं इस चेतावनीके लिए नहीं लिख रहा हूं कि आप मुझे लिखकर तसवीरका अपना पहलू न बतावें, लेकिन इसका मकसद आपको यह बताना है कि मेरी अकेली आवाज सुनाई दे तो भी मैं अंकुश हटानेकी बातपर क्यों जोर देता रहूंगा।

"आपका हिंदू-मुस्लिम तंगदिलीके बारेमें लिखा खत पहलेसे ज्यादा प्रासंगिक है। इस बारेमें भी आपको स्थितिका नरमीसे सामना करने या सस्ते आत्म-संतोषके खिलाफ खुले आम अपनी आवाज उठानी चाहिए। मैं अपना काम तो करूंगा ही, लेकिन मैं दुःखके साथ अपनी सीमाओंको मानता हूं। पहले मैं जिधर देखता था, उधर मेरा राज चलता था। आज मेरे कई साथी सत्ताधीश हो गए हैं। यह समय नहीं कि मैं अभी भी अपनेको राजा मान सकूं। अगर मैं ऐसा कर सकूं तो भी मैं उन सबसे छोटी सत्तावाला हूं। लोकशाहीके शुरुआतमें ये बेसुरे रागोंकी तरह होते हैं, जो कानोंको बुरे मालूम होते हैं और सिरदर्द पैदा करते हैं। अगर लोकशाहीको इन गा जानेवाले बेसुरे रागोंके बावजूद जिंदा रहना है तो बाहरसे बेसुरे मालूम होनेवाले कोलाहलमें इस जगी अनुभवमेंसे सुंदर सुर और सुमेल पैदा करना ही होगा। मेरी यही इच्छा है कि आप उन महान् पुरुषोंमेंसे एक हों, जो इस बेसुरे कोलाहलमेंसे सुमेलवाले सुंदर संगीतको जन्म देनेमें हाथ बटायेंगे।

"आप यह सोचनेकी गलती नहीं करेंगे कि अपने अफसरोंकी हालतका मुझे ज्ञान कराकर आपका अपना फर्ज खतम हो जाता है।"

नई दिल्ली, ११-१-'४८

: ६२ :

स्वर्गीय तोताराम सनाढ्य

वयोवृद्ध तोतारामजी किसीकी सेवा लिए वगैर गए। वे सावरमती आश्रमके भूपण थे। वे विद्वान् नही थे, मगर ज्ञानी थे। भजनोके भडार होते हुए भी वे गायनाचार्य न थे। वे अपने एकतारेसे और भजनोसे आश्रमके लोगोको मुग्ध कर देते थे, जैसे वे थे, वैसे ही उनकी पत्नी थी। वह तो तोतारामजीसे पहले ही चली गई।

जहा वहुतसे आदमी एक साथ रहते हो, वहा कई प्रकारके झगडे होते ही है। मुझे ऐसा एक भी प्रसग याद नही है कि जव तोतारामजी या उनकी पत्नीने उनमे भाग लिया हो, या किसी झगडेके कभी कारण वने हो। तोतारामजीको धरती प्यारी थी। खेती उनका प्राण थी। आश्रममे वर्षो पहले वे आए और उसे कभी नही छोडा। छोटे-वडे स्त्री-पुरुष उनकी रहनुमाईके भूखे रहते और उनके पाससे अचूक आश्वासन पाते।

वे पक्के हिंदू थे। मगर उनके मनमे हिंदू, मुसलमान और दूसरे सव धर्म वरावर थे। उनमे छुआछूतकी गध न थी। किसी किस्मका व्यसन न था।

राजनीतिमे उन्होने भाग नही लिया था, फिर भी उनका देशप्रेम इतना उज्ज्वल था कि वह किसीके भी मुकावले खडा रह सकता था। त्याग उनमे स्वाभाविक था। उसे वे सुशोभित करते थे।

ये सज्जन फिजी द्वीपमे गिरमिटिए मजदूरकी तरह गए

थे और दीनवन्धु एड्रूज उन्हे ढूढ लाये थे। उन्हे आश्रममे लानेका यश श्री वनारसीदास चतुर्वेदीको है।

उनकी अतिम घडीतक उनकी जो कुछ सेवा हो सकती थी, वह भाई गुलाम रसूल कुरैशीकी पत्नी और इमाम साहवकी लडकी अमीनावहनने की थी।

'परोपकाराय सता विभूतय' (सज्जनपुरुष परोपकारके लिए ही जीते है) यह उक्ति तोतारामजीके वारेमे अक्षरश सच थी।

नई दिल्ली, १२-१-'४८

: ९३ :

घुड़दौड़ और बाजी बदना

घुडदौडके मैदानपर वाजी वदनेके सिलसिलेमे मद्रासने एक सवाददाताका दुखद पत्र आया है। वे लिखते है कि ये दोनो काम साथ-साथ चलते है। वाजी वदनेका काम चल पडता है तो घुडदौड वहुधा वद हो जाती है। घुडदौडकी खातिर घोडोकी रखवालीके लिए यह प्रथा एकदम अनावश्यक है। वहा जानेवाले लोग मनुष्यताकी बुराइयोको पाल लेते है और अपना पैसा तथा वहुत-सी जमीन वरवाद करते है। घुडदौडी जुएके शौकीन अच्छे लोगोकी वरवादी मैने ही नही किसने नही देखी है? यही वक्त है जब कि हम पश्चिमके दोषोसे मुक्ति पाकर वहाकी सर्वोत्तम देन अपनाये।

नई दिल्ली, १२-१-'४८

: ६४ :

गुजरातके भाई-बहनोंसे

यह खत मै बुधवारके बडे सवेरे बिस्तरपर पड़ा-पडा लिखवा रहा हू। आज उपवासका दूसरा दिन शुरू हुआ है। फिर भी अभी उसे शुरू हुए २४ घटे नही हुए है। 'हरिजन' की डाक जानेका यह आखिरी दिन है। इसलिए गुजरातियोको दो शब्द भेजना मै ठीक समझता हू।

इस उपवासको मै जैसा-तैसा नही मानता। मैने बहुत विचारपूर्वक इसे शुरू किया है। फिर भी विचार उसका प्रेरक नही; बल्कि विचारका स्वामी राम या रहमान उसका प्रेरक है। यह उपवास किसीके सामने नही, या सबके सामने है। इसके पीछे न तो किसी तरहका गुस्सा है और न थोड़ी भी जल्दबाजी। हर बातके करनेका अवसर होता है। वह अवसर चूक जानेके बाद उसे करनेमे क्या फायदा? इसलिए अब विचारनेकी यही बात रही कि हरएक हिंदुस्तानीके लिए कुछ करना रहा या नही? हिंदुस्तानी कहनेमे गुजराती लोग शामिल है। और चूकि यह खत गुजराती भाषामे लिखवाया जा रहा है, इसलिए यह गुजराती बोलनेवाले हर हिंदुस्तानीके लिए है।

दिल्ली हिंदुस्तानकी राजधानी है। अगर हम मनसे हिंदुस्तानके दो विभाग न माने, यानी हिंदू-मुसलमान दो न माने, तो हिंदुस्तानका जो नकशा हम अभीतक जानते आए है, उस हिंदुस्तानकी राजधानी दिल्ली आज नही बनी है, हालाकि वह हमेशासे सारे हिंदुस्तानकी राजधानी रही है।

हस्तिनापुर भी वही थी और इंद्रप्रस्थ भी वही। उनके खडहर आज भी पडे है। यह दिल्ली तो हिंदुस्तानका हृदय है। ऐसा कहनेमे जरा भी अतिशयोक्ति नही है कि उसे सिर्फ हिंदुओ या सिक्खोकी मानना मूर्खताकी सीमा है। यह बात भले कठोर मालूम हो, फिर भी यह शुद्ध सत्य है। इस दिल्ली-पर कन्याकुमारीसे लेकर काश्मीर तक और कराचीसे लेकर आसामके डिब्रुगढतक रहनेवाले और इस प्रदेशको सेवाभाव और प्रेमभावसे अपना बनानेवाले सारे हिंदू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, पारसी और यहूदियोका हक है। इनमे बहुमत-वालोके लिए ही जगह है या अल्पमतवालोकी अवगणना है, ऐसा कहा ही नही जा सकता। जो उसका शुद्धतम सेवक है वही बडे-से-बडा हकदार है। इसमे मुसलमानोको निकाल बाहर करनेवाला शख्स इस दिल्लीका पहले नबरका दुश्मन है और इससे वह हिंदुस्तानका दुश्मन है। इस अवसरके पास हम आ रहे है। हरएक हिंदुस्तानीको इस कुअवसरको टालनेमें हिस्सा लेना चाहिए। यह हिस्सा किस तरह लिया जा सकता है? अगर हम पचायती राज चाहते है, लोकशाही तत्र कायम करनेका इरादा रखते है, तो छोटे-से-छोटा हिदुस्तानी बडे-से-बडे हिदुस्तानीके बराबर ही हिदुस्तानका राजा है। इसके लिए उसे शुद्ध होना चाहिए। न हो तो बनना चाहिए। वह जैसा शुद्ध हो वैसा ही समझदार हो। इससे वह जातिभेद, वर्णभेदको नही मानेगा। सबको अपने समान समझेगा। दूसरोको अपने प्रेमपाशमें बाधेगा। उसके लिए कोई अछूत नही होगा। उसी तरह मजदूर और धनवान दोनो उसके

लिए बराबर होंगे। इससे वह करोडो मजदूरोंकी तरह पसीनेकी रोटी कमाएगा और कलम और कड़छीको एक-सा समझेगा। इस शुभ अवसरको नजदीक लानेके लिए वह खुद भगी बन जायगा। वह समझदार होगा, इसलिए अफीम या शराबको छुएगा ही क्यो? स्वभावसे ही वह स्वदेशी-व्रत पालेगा। अपनी पत्नीको छोडकर वह सभी स्त्रियोको उम्रके मुताबिक मा, बहन या लडकी मानेगा। किसीपर बुरी नजर नही डालेगा। मनमे भी दूसरी भावना नही रखेगा। जो हक उसका है, वही अपनी स्त्रीका समझेगा। वक्त आनेपर खुद मरेगा, दूसरेको कभी नही मारेगा और बहादुर ऐसा होगा कि गुरुओके सिक्खोकी तरह अकेला सवालाखके सामने अडा रहेगा और एक कदम भी पीछे नही हटेगा। ऐसा हिंदुस्तानी यह नही पूछेगा कि इस यत्नमे मुझे कौन-सा पार्ट अदा करना है।

नई दिल्ली, १४-१-'४८

: ६५ :

क्रोध नहीं, मोह नहीं

एक भाई लिखते है—

"उर्दू 'हरिजन'के बारेमें आपका लेख देखा। यदि वह आपका लिखा न होता तो मैं यही समझता कि किसीने बहुत ही क्रोधमें लिखा है। जीवणजीभाईने जो कुछ लिखा है, उससे सिर्फ यही साबित होता

है कि लोगोंको उर्दूलिपिमें 'हरिजन'की जरूरत नहीं है। पर आप उसके कारण नागरी 'हरिजनसेवक'को क्यों बंद करें? क्या आप समझते हैं कि पहले हिंदी 'नवजीवन' निकालते थे (उर्दू नहीं) तब कोई गुनाह करते थे? उसके बाद भी नागरी 'हरिजनसेवक' निकलता रहा, पर आपने उर्दू 'हरिजन' उस समय नहीं निकाला।

"अगर आपने उर्दू और नागरी 'हरिजन' केवल हिंदुस्तानीका प्रचार करनेके लिए निकाले होते तो बात ठीक थी, पर नागरी 'हरिजनसेवक' पहलेसे ही निकल रहा है। उसमें घाटा हो तो आप भले ही बंद करें। आपने जो चेतावनी नागरी 'हरिजनसेवक' बंद करनेकी दी है, उसमें मुझे एक प्रकारका बलात्कार लगता है।

"क्या अंग्रेजी 'हरिजन'से भी ज्यादा नागरी 'हरिजनसेवक'ने गुनाह किया है? सच बात तो यह है कि पहले अंग्रेजीका 'हरिजन' बंद हो जाना चाहिए। पर होता यह है कि अंग्रेजी 'हरिजन'को जितना महत्त्व मिलता है, उतना दूसरे संस्करणोंको नहीं।

"यह कितने बड़े दुःखकी बात है कि आप अपने प्रार्थना-प्रवचन हिंदुस्तानीमें देते हैं। उसका सारांश आपके दफ्तरमें अंग्रेजीमें होता रहा है और फिर उसका उल्था नागरी और उर्दू 'हरिजन'में छपता था, यह कहकर कि 'अंग्रेजीसे'। अब तो यह नहीं लिखा रहता। शायद अब सीधा हिंदुस्तानीमें ही लिया जाता हो।

"आपने कई वर्ष पहले लिखा था कि जहांतक मुमकिन होगा, आप केवल गुजराती या हिंदुस्तानीमें ही लिखेंगे और उसका उल्था अंग्रेजीमें आवेगा। पहले ऐसा चला भी, लेकिन बादमें यह सिलसिला शिथिल हो गया।

"मैं फिर आपसे अनुरोध करता हूं कि आप अंग्रेजी 'हरिजन' बंद कर दें और दूसरे संस्करण जारी रखें।"

जो वात वाकई सही है, वह अगर कही जाय तो उसे क्रोध मानना शब्दका सही प्रयोग नही होगा। क्रोधमें आदमी वेतुका काम कर लेता है। अगर 'उर्दू हरिजन' वद करना पडा तो साथ-साथ नागरी भी वद करना आवश्यक हो जाता है। आवश्यक वात करनेमे क्रोध कैसा? जिसे मैं आवश्यक समझूं, उसे दूसरे न भी समझें, जैसे कि इस पत्रके लेखक, उससे मुझे क्या? हम जिसे लाजमी माने, वही सारा जगत भी माने, ऐसा हो तो अच्छा है; लेकिन ऐसा होता नही है। हर चीजके कम-से-कम दो पहलू होते ही है।

अव यह वताना वाकी रहा कि एकको छोडूँ या दोनोको। यह ठीक है कि जव मैने नागरीमे 'नवजीवन' निकाला और 'हरिजन' निकालना शुरू किया तव दोनो लिपिकी चर्चा नही थी। अगर थी तो मुझे उसका पता नही था।

वीचमे स्व० भाई जमनालालजीकी इच्छासे हिंदुस्तानी प्रचार-सभा कायम हुई। इससे उर्दू रिसाला निकालना लाजमी हो गया। अव माना कि उर्दू रिसाला वंद हो और नागरी निकलता रहे तो यह मेरी निगाहमे वड़ा ही अनुचित होगा, क्योकि हिंदुस्तानी प्रचार-सभाकी हिंदुस्तानीके मानी यह है कि वह जैसी नागरी लिपिमे लिखी जाती है, वैसी ही उर्दूलिपिमे भी लिखी जा सकती है।

इसलिए जो अखवार दोनो लिपिमे निकलता था, उसे ऐसे ही निकलना चाहिए, वह भी एक ऐसे मौकेपर जव कि हिदके लोग चारो ओरसे कह रहे है कि राष्ट्रभाषा हिंदी ही है और वह नागरी लिपिमे ही लिखी जाए। यह विचार

ठीक नही है, यह वताना मेरा काम हो जाता है। यह दलील अगर ठीक है तो मेरा कर्त्तव्य हो जाता है कि मै नागरी लिपिके साथ उर्दूलिपिको भी रखू और न रख सकू तो मुझे उर्दू 'हरिजनसेवक' के साथ नागरी 'हरिजनसेवक' का भी त्याग करना चाहिए ।

लिपियोमे मै सवसे आलादर्जेकी लिपि नागरीको ही मानता हू । यह कोई छिपी वात नही है, यहातक कि मैने दक्षिण अफ्रीकासे गुजराती लिपिके वदलेमे नागरी लिपिमे गुजराती खत लिखना शुरू किया था । इसे मै समय न मिलनेके कारण आजतक पूरा न कर सका । नागरी लिपिमे भी सुधारके लिए गुजाइश है, जैसे कि करीव-करीव सव लिपियोमे है । लेकिन यह दूसरा विपय हो जाता है । यह इशारा जो मैने किया है सो यह वतानेके लिए कि नागरी लिपिका विरोध मेरे मनमे जरा भी नही है । लेकिन जव नागरीके पक्षपाती उर्दूलिपिका विरोध करते है तव उसमे मुझे द्वेपकी और असहिष्णुताकी वू आती है । विरोधियोमें इतना भी आत्मविश्वास नही है कि नागरी लिपि यदि सपूर्ण है––दूसरी लिपियोके मुकावलेमें पूर्ण है––तो उसीका साम्राज्य अतमे होगा । इस निगाहसे देखा जाय तो मेरा फैसला निर्दोप लगना चाहिए और जरूरी भी ।

हिंदुस्तानीके वारेमे मेरा पक्षपात है जरूर । मै मानता हू कि नागरी और उर्दूलिपिके वीच अतमे जीत नागरी लिपिकी ही होगी । इसी तरह लिपिका ख्याल छोडकर भापाका ही ख्याल करे तो जीत हिंदुस्तानीकी ही होगी,

क्योकि सस्कृतमयी हिंदी विलकुल वनावटी है और हिंदुस्तानी विलकुल स्वाभाविक। उसी तरह फारसीमयी उर्दू अस्वाभाविक और वनावटी हे। मेरी हिंदुस्तानीमे फारसी शव्द बहुत कम आते है तो भी मेरे मुसलमान दोस्तो और पजावी और उत्तरके हिंदुओने मुझे सुनाया है कि मेरी हिंदुस्तानी समझनेंमे उनको दिक्कत नही होती। हिंदीके पक्षमे मै तो वहुत कम दलील पाता हू। खूवी यह है कि पहलेपहल जव हिंदी-साहित्य-सम्मेलनमे मैने हिंदीकी व्याख्या दी तव उसका विरोध नहीके वरावर था। विरोध कैसे शुरु हुआ इसका इतिहास वडा करुणाजनक है। मै उसे याद भी नही रखना चाहता। मैने यहातक वताया था कि 'हिंदी-साहित्य-सम्मेलन' नाम ही राष्ट्रभापाके प्रचारके लिए सूचक नही था, न आज भी हे।

लेकिन मै साहित्यके प्रचारकी दृष्टिसे सदर नही बना था। स्व० भाई जमनालालजी और दूसरे अनेक मित्रोने मुझे बताया था कि नाम चाहे कुछ भी हो, उन लोगोका मन साहित्यमे नही था, उनका दिल राष्ट्रभाषामे ही था और इसलिए मैंने दक्षिणमे राष्ट्रभाषाका प्रचार वडे जोरोसे किया।

प्रात कालमे उपवासके छठे दिन प्रार्थनाके बाद लेटे-लेटे मै यह लिखा रहा हू। कितने ही दु खदायी स्मरण ताजा होते है, पर उन्हे और बढाना मुझे अच्छा नही लगता है।

नामका झगडा मुझे बिलकुल पसद नही है। नाम कुछ भी हो; लेकिन काम ऐसा हो कि जिससे सारे राष्ट्रका कल्याण हो। उसमे किसी भी नामका द्वेष होना ही नही चाहिए।

"सारे जहासे अच्छा हिंदोस्ता हमारा,"—इकबालके इस वचनको सुनकर किस हिंदुस्तानीका दिल नही उछलेगा ? अगर न उछले तो मै उसे कमनसीब समझूगा। इकबालके इस वचनको मै हिंदी कहू, हिंदुस्तानी कहू, या उर्दू ? कौन कह सकता है कि इसमे राष्ट्रभाषा नही भरी है उसमे मिठास नही है, विचारकी बुजुर्गी नही है ? भले ही इस विचारके साथ आज मै अकेला होऊ, यह साफ है कि जीत कभी संस्कृतमयी हिंदीकी होनेवाली नही है, न फारसीमयी उर्दूकी। जीत तो हिंदुस्तानीकी ही हो सकती है। जब हम अदरूनी द्वेषभावको भूलेंगे तब हम इस बनावटी झगडेको भूल जायगे, उससे शरमिंदा होगे।

अब रही अग्रेजी 'हरिजन'की बात। इसे मै छोटी बात मानता हू। अग्रेजी 'हरिजन'को मै छोड नही सकता, क्योकि अग्रेज लोग और अग्रेजीके विद्वान हिंदुस्तानी लोग मानते है कि मेरी अग्रेजीमें कुछ खूबी है। पश्चिमके साथ मेरा सबंध भी बढ रहा है। मुझमे अग्रेजोका या दूसरे पश्चिमी लोगोका द्वेष न कभी था, न आज है। उनका कल्याण मुझे उतना ही प्रिय है जितना कि हमारे देशका। इसलिए मेरे छोटेसे ज्ञान-भडारमेसे अग्रेजी भाषाका बहिष्कार कभी नही होगा। मै उस भाषाको भूलना नही चाहता, न चाहता हू कि सारे हिंदुस्तानी अग्रेजी भाषाको छोडे या भूले। मेरा आग्रह हमेशा अग्रेजीको उसकी योग्य जगहसे आगे न ले जानेका रहा है। वह कभी राष्ट्रभाषा नही बन सकती और न हमारी तालीमका जरिया। ऐसा करके हमने

अपनी भाषाओंको कगाल बना रखा है। विद्यार्थियोपर हमने बडा बोझ डाला है। यह करुण दृश्य, जहातक मुझे इल्म है, सिर्फ हिंदुस्तानमे ही देखा जाता है। इस भाषाकी गुलामीने हमारे करोडो लोगोको बहुतेरे ज्ञानसे बरसोतक वचित रखा है। इसकी हमे न समझ है, न शरम, न पछतावा! यह कैसी बात? यह सब साफ-साफ जानते हुए भी मै अग्रेजी भाषाका बहिष्कार नही सह सकता। जैसे तामिल आदि सूबाई भाषाएं है और हिंदुस्तानी राष्ट्रभाषा, ठीक इसी तरह अग्रेजी विश्वभाषा है—जगतकी भाषा है, इससे कौन इन्कार कर सकता है? अग्रेजोका साम्राज्य जायगा, क्योकि वह दूषित था और है, लेकिन अग्रेजी भाषाका साम्राज्य कभी नही जा सकता।

मुझे ऐसा लगता है कि गुजराती भाषामे या अग्रेजी भाषामे मै कुछ भी लिखूं तो भी अंग्रेजी 'हरिजन' और गुजराती 'हरिजन-बंधु' अपने पैरोपर खड़े रहेगे।

नई दिल्ली, १८-१-'४८
सुबह ५ बजकर ४५ मिनिट

: ९६ :

विचारने लायक

एक नौजवान भाई लिखते है

"आज दोपहरको मुझे मालूम हुआ कि आपने उपवास शुरू किया

हैं। उपवासके बीच आपको तकलीफ देनेकी इच्छा नहीं हो सकती, लेकिन आज तो लिखे विना रहा नहीं जाता।

"१. आपके उपवासके पाच-सात दिनमें हिंदू-मुसलमानोके बीच दिली एकता कायम होना सभव नहीं है। हा, ऐसी एकता पैदा हुई है, यह बतानेवाले जुलूसो और सभाओका प्रदर्शन खूब होगा। ऐसा होना ठीक भी है, लेकिन यह सब दिली एकताका सबूत नहीं होगा। इसलिए अगर आपका उपवास छूटे तो आप इस भुलावेमें न रहें कि हिंदू-मुसलमानोके बीच दिली एकता पैदा हो गई है। कलकत्तेकी शातिको मै दिली एकता नहीं मानता, लेकिन आपके उपवाससे यह हो सकता है कि हिंदू अपने गुस्सेको जरा काबूमें रखकर निर्दोष मुसलमानोको कतल न करें। मै मानता हू कि आपका उपवास छूटनेके लिए इतना काफी होगा।

"२ आपने अपनी तपस्यासे लोगोके दिलोमें अनोखा स्थान पा लिया है, लेकिन दूसरी तरफ लोगोमें यह ज्ञान प्रकट नहीं हुआ है कि शरीर मरे तो कोई चिता नहीं, आत्मा तो अमर है। इस कारणसे लोग आपके शरीरको कमजोर और क्षीण होते देखनेके लिए तैयार नहीं है। इसलिए आपके शरीरको बचानेके लिए लोग अपना गुस्सा और नफरत दबा देंगे। लेकिन दबा हुआ गुस्सा मौका मिलते ही फूट पडनेवाला है। मुझे लगता है कि इसी विचारके बाद आपने देशके सामने हिंदके टुकडे करनेके बजाय घरेलू लडाई पसद करनेकी सूचना रखी होगी।

"३ अगर लोगोके दिलोमेंसे वैर और गुस्सा निकालना हो तो सरकारको चाहिए कि वह लोगोको अपना जीवन रचनात्मक कार्यक्रमके ऊपर ही रचना सिखावे, लेकिन आज तो मै अखबारोमें देखता हू कि थोडे ही समयमें ६०० विदेशी ट्रैक्टर और ८००० टन या इससे ज्यादा एमोनियम सल्फेटकी खाद देशमें आनेवाली है। देशकी रक्षाके लिए देशमें उद्योग-धधे और कारखाने खोलनेकी बातें भले हो, लेकिन लोगोको

दो खास जरूरतो—खुराक और कपडे—पर केंद्रीय उत्पादनका उसूल किसलिए लागू किया जाता है ? यह समझमें नहीं आता । जब अमेरिकाके लोग कुदरती खादकी तरफ जा रहे हैं तब हम रासायनिक खादकी शुरुआत कर रहे हैं ।

"४. मैं यह अपने अनुभवसे कहता हू कि हिंदके मुसलमान आपको जितने निर्दोष दीखते है, उतने वे सचमुच हैं नहीं । और दिल्लीके मुसलमान आपको अपनी करुणाजनक हालत बतावें तो उससे आप यह न समझें कि हिंदके सारे मुसलमान या उनका बड़ा हिस्सा भी निर्दोष है और करुणा-जनक हालतमें जीता है । इससे उलटे, मुसलमानोका बहुत बड़ा हिस्सा यह आशा करके बैठा है कि कब पाकिस्तान हिंदपर चढ़ाई करे और हम उसमें हिस्सा लें । ऐसे आदमियोमें मैं गावोके अज्ञान आदमियोकी कल्पना नहीं करता । फिर भी ये लोग आगमें सूखी लकड़ीका काम जरूर करेंगे । इसलिए मैं तो यह मानता हू कि पाकिस्तान आज जो अपनी मर्यादा नहीं समझता, इसका कारण यह है कि उसे पूरा विश्वास है कि हिंदके मुसलमान उसीके हैं और वे आपकी हस्तीका पूरा लाभ उठाएगे । और इसके पीछे भी स्वार्थी राष्ट्रोकी मदद है, यह तो मैं मानता ही हूं ।

"५. इन सब विचारोको देखते हुए मैं यह मानता हू कि आपका उपवास हिंदुओसे थोडा संयम रखनेकी ही अपेक्षा रखता है ।

"६. मैं मानता हू कि हिंदू-मुसलमानोका झगड़ा दो तरहसे ही शांत हो सकता है । एक तो हिंदू अगर शुद्ध हृदयके बन जाय तो—इस आशाको तो कबसे ही निष्फल हुई समझना चाहिए । आपने ही कहा है कि आजतककी कांग्रेसकी लड़ाई कमजोरोकी अहिंसा थी, यानी जब सत्ता हाथमें आ गई है तब यह संस्था दूने जोरसे हिंसाके रास्ते ही जायगी । मौजूदा काग्रेसी सरकारोके लक्षण देखते हुए यह बात साबित हो सकती है । दूसरा रास्ता यही है कि हिंद-सरकार दृढ़तासे काम ले । मुझे लगता

है कि अभी वह ऐसा नहीं करती। और जिस हदतक आपके अमलके परिणाम-स्वरूप इसमें ढिलाई है, उस हदतक देशका नुकसान है।"

ऊपरका खत विचारने लायक होनेके कारण यहा दिया गया है। क्षणभरमे हृदय-परिवर्त्तन होनेके उदाहरण मिल सकते है। यह कहना ज्यादा मौजू है कि ऐसे परिवर्त्तन टिक नही सकते। उपवास छुट गया, अब यह देखना बाकी है कि इसका टिकाऊ परिणाम क्या आता है। इतना कहकर मैं ऊपरके खतमे लिखी बातोकी कीमत कम करना नही चाहता। हिंदू, सिक्ख, मुसलमान सब उसमेंसे सबक ले सकते है। साप्रदायिक मेल-जोल कोई नई बात नही है। इसकी कोशिश हमेशा चलती रही है। हिंदुस्तानकी आजादीका यह एक स्तभ है। यह न हो तो आजादी टिक नही सकती। इसे स्वय-सिद्ध बात मानना चाहिए। बीचका जो समय बीता (अगर बीत गया हो तो) वह हमारी बेहोशीका समय माना जा सकता है। इसलिए यह आशा रखी जा सकती है कि दिल्लीमे हुई एकता टिकेगी और पक्की साबित होगी।

यह बात याद रखने लायक है कि एकता टिकनेका आधार रचनात्मक कामके ऊपर रहता है। यह किस तरह हो सकता है, इसकी खोज करनी है। इस बातको माननेवाले हरएक सेवकको इसे अपने जीवनमे उतारना चाहिए और अपने पड़ो-सियोको समझाना चाहिए। रचनात्मक कामको ठीक समझनेसे उसे दिलचस्प बनाया जा सकता है। हम रोजाना यह अनुभव करते है कि मशीनकी तरह बिना समझे-बूझे नकल करनेसे यह काम आगे नही बढाया जा सकता।

इस विपयमे मुझे कोई शक नही है कि ट्रैक्टर और रासायनिक खाद नुकसानदेह है।

मै यह नही मानता कि हिंदुस्तानके सारे मुसलमान निर्दोष है। मै तो यह मानता हू कि पाकिस्तान वन जानेसे वे यहा ऐसी मुश्किल स्थितिमे पड गए है, जिसकी कल्पना भी नही थी। वहुसख्यकोको उनके प्रति शुद्ध इन्साफ करना चाहिए। अगर वहुसख्यक जाति अपनी सत्ताके नशेमे यह माने कि अल्पसख्यकोको कुचला जा सकता है और वह केवल हिंदू-राज कायम करनेकी वात सोचे तो इसमे मै वहुसंख्यकोका और हिंदू-धर्मका नाश देखता हू। यह वक्त ऐसा है कि जव शुभ और लगातार कोशिश करनेसे दोनोके दिलमेसे मैल और अज्ञान दूर हो सकते है।

पाचवे पैरेकी गुजराती अगर वरावर (?) पढनेमे आई हो तो वह कुछ अस्पष्ट मालूम होता है। चाहे जो हो, मेरा उपवास सवकी शुद्धिके लिए था। वह हिंदू, सिक्ख, मुसलमान और दूसरे सव लोगोसे शुद्धिकी अपेक्षा रखता था और रखता है।

छठे पैरेमे सिर्फ बुद्धिवाद है। उसमे हृदयको जगह नही दी गई। जो बात आजादीकी लडाईके दरमियान नही हुई, वह अव हो ही नही सकती, ऐसा कोई निश्चयपूर्वक नही कह सकता। अहिसाका साम्राज्य बतानेका आज सच्चा मौका है। यह सच है कि लोग आम जनताको हथियारबंद करनेके भवरम फँस गए है। इस भवरमेसे थोडे भी वच जाय तो माना जायगा कि वे वहादुरकी अहिसाके जोरसे वचे है और वे हिंदके सबसे श्रेष्ठ सेवक माने जायगे। यह बात

बुद्धिसे साबित करके नहीं बताई जा सकती। इसलिए जब-तक अनुभव न हो तबतक श्रद्धाका ही आसरा लेना होगा। श्रद्धा न हो तो अनुभव कहांसे आवे?

स्वराजकी सरकारके लिए दृढतासे और हिम्मतसे काम लेनेके सिवा दूसरा कोई रास्ता नहीं है। जो सरकार कमजोर है या किसीसे भी प्रेरित होकर बिना समझे काम करती है, वह सरकार हुकूमत करनेके काबिल नहीं है। उसे हटकर दूसरोंके लिए जगह खाली करनी चाहिए। मेरे अनशनके कारण पंडित नेहरू या सरदारमें ढिलाई आती है, ऐसा कहनेमें और माननेमें, उनके बारेमें अज्ञान दिखाई पड़ता है। मेरे स्पर्शका अगर यह असर हो तो यह मेरे लिए शर्मकी बात है और देशके लिए यह नुकसानदेह है।

नई दिल्ली, २३–१–'४८

: ९७ :

हरिजन और मंदिर-प्रवेश

एक भाई वढवाणसे लिखते है

"हरिजन भाइयोंके मंदिर-प्रवेशके बारेमें आपको समाचार मिले ही होंगे। आजकल हरिजन भाइयोंको ट्रस्टियोंकी मरजीसे या मरजीके खिलाफ मंदिरोंमें प्रवेश कराया जाता है। मामूली तौरपर अमुक सम्प्रदाय-के मंदिरोंमें—जैसे राम-मंदिरों और विष्णु सम्प्रदायकी हवेलियोंमें—प्रवेश करनेका आग्रह रखा जाय तो यह समझमें आने लायक बात है।

लेकिन ऐसे बहुतसे सम्प्रदाय है---जैसे स्वामीनारायण सम्प्रदाय, जैन सम्प्रदाय और दूसरे---जिनके धर्मोको हरिजन भाई नहीं मानते। मदिरोमें प्रवेशके बाद वे उन धर्मोको एकदम मानने लग जायगे, यह मान लेना बहुत ज्यादा होगा। ऐसे मदिरोमें हरिजन भाइयोको जबरन प्रवेश करानेसे क्या फायदा होगा, यह समझमें नहीं आता ?"

दूसरा पत्र अहमदाबादसे आया है। उसमे दस्तखत नही है। आखिरमे लिखा है---"आपके पीडित"। अक्षर बहुत अच्छे है। मै जिन हरिजनोको पहचानता हू, उनकी न तो यह भाष। है और न ये अक्षर। उस पत्रका खास हिस्सा जैसा है वैसा नीचे देता हू

"मकरसक्राति १४ जनवरीको थी। उस दिन हरिजनोने मदिरमें प्रवेश करनेकी कोशिश की। सवेरे आठ बजे भजन-मडलियोके साथ जब स्वामीनारायणके मदिरमें पहुचे तो वहा खभाती ताले लगाए हुए थे। आज भी वे वहासे हटे नही है। वे भजन गाया करते है और रात-दिन मदिरके दरवाजेपर सत्याग्रह करके बैठे रहते हैं। कामसे कही जाते नहीं शहर-समिति हरिजनोके इस कदमकी निदा करती है। यह कैसी विचित्र बात है ! आजादीके आनेपर भी हरिजनोको उनके हक न मिलें तो फिर कब मिलेंगे ? शहरके कांग्रेसी लोग आकर ५--१० मिनिट खड़े रहते है और चले जाते है, वे किसी तरहकी कोशिश नहीं करते। मदद भी नहीं करते। और बेचारे हरिजन सर्दीमें 'मदिरके दरवाजेपर बैठकर भजन किया करते है। इसका फैसला आखिर कौन करेगा ? यहाके काग्रेसियोमें कोई चरित्रवाला आदमी नहीं है। डाकोरमें तो पूज्य रविशकर महाराजने अपनी कोशिशसे हरिजनोको दर्शन कराए। यहा ऐसा कुछ नहीं है तो यह हक हरिजनोको कब मिलेगा ? आप बीचमें पडें तो कुछ असर

होगा। आज ३ दिन हुए। बेचारे हरिजन सर्दी और धूपमें बैठे रहते हैं। और हजारोंकी संख्यामें मंदिरके दरवाजेपर सत्याग्रह कर रहे हैं। उन्हें कायदेकी शरण नहीं लेनी है और नामधारी सवर्णोंका हृदय कभी पलटनेवाला नहीं। तो आखिर क्या फैसला किया जाय, इस बारेमें आप कुछ रहनुमाई करेंगे?"

पहले पत्रमे लिखनेवाले भाईने मदिरोके जो अलग-अलग भाग किए है, उसमे मुझे कोई सचाई नही मालूम होती। स्वामी नारायणके मदिर, जैन मदिर वगैरहमे हरएक हिंदू जा सकता है और जाता है। उनमे हरिजनोको भी जाना चाहिए। यह बात सिद्ध करनेवाली हलचल वरसोसे चलती आई है कि हरिजनो और ब्राह्मणोके एक-से हक है। उसमे बहुत हद-तक सफलता मिली है। अब तो बबई सूबेमे एक कानून बन गया है। इसलिए अब सत्याग्रहका कोई स्थान है, ऐसा मुझे नही लगता। जो कायदा लोकमतके अनुसार होगा, उसे स्वभावसे जनताका आदर मिलेगा। अगर कायदा लोकमतके खिलाफ होगा तो उसका अमल धीरे-धीरे होगा। लोकशाहीमे कायदेका अमल जबरन नही हो सकता। उसमे विवेककी जरूरत हमेशा रहती है। सुधारक समझपूर्वक कायदेकी मदद ले तो वह सफल होता है। अगर वह जल्दबाजी करता है तो कायदा बेकार साबित होता है।

ट्रस्टी मदिरोके मालिक नही होते। मदिरका बनानेवाला भी, जब वह आम जनताके लिए उसे बनाता है, मालिक नही रह जाता। मदिरोके मालिक उनके पुजारी है। पुजारी वह है, जो उसमे पूजा करने या पूजाका दिखावा करने जाता है।

इस दृष्टिसे जैन-मंदिर, स्वामी नारायण-मंदिर वगैरा हिंदुओंके माने जाते हैं। इन मंदिरोंमें मैं खुद गया हूं। मुझे या मुझ-जैसे सैकडों आदमियोंको कोई पूछता नहीं कि तुम किस जातिके हो। हिंदू-जैसा लगूं, इतना बस है। इसलिए जहां हिंदू जाय, वहां हरिजन भी जाय। हरिजन नामकी कोई अलग जाति आज नहीं है। वह चार या अठारह वर्णोंमें शामिल है। जाग्रत लोकमत ऐसा कहता है, उसे आदर देनेवाला कानून ऐसा कहता है। उसके खिलाफ जानेवालेका मत आज नहीं चल सकता। देवमें प्राण डालनेवाले पुजारी होते हैं। वे अच्छे तो देव अच्छे।

अब दूसरे पत्रको लेता हूं। ऊपर कहे मुताबिक मेरा दृढ मत होते हुए भी हरिजनोंका आग्रह मेरी समझमें नहीं आता। जो हठ पकडकर बैठे हैं, वे सच्चे भक्त नहीं हैं। उन्हें देव-दर्शनकी नहीं पडी है। वे हकके पीछे दौडते हैं और इसलिए धर्मसे दूर जाते हैं। वे लिखें, उसपर सही न करें और अपनी तरफसे दूसरेको लिखने दें। सच्चा पुजारी तो भक्त नंदनारका अनुसरण करता है। नंदनारकी पीठपर ईश्वरके सिवा दूसरा कोई नहीं था। उस नंदनारको आज अपनेको ऊंचा माननेवाले ब्राह्मण भी उत्साहसे पूजते हैं। अपनी इच्छासे हरिजन बना हुआ मैं हरिजनोंमें नंदनारको देखनेकी इच्छा रखता हूं। और उसी तरह जन्मसे माने जाने-वाले हरिजन भी इच्छा रखें। अगर गैर-हरिजन हिंदूसमाजको गरज हो तो वह हरिजन-हिंदूको इज्जतके साथ मंदिरमें ले जाय। ऐसा न हो तबतक हरिजन घर बैठे गंगा लावें

और उसमें स्नान करें। उन्हें किसी मंदिरके सामने जाकर फाका करनेकी जरूरत नहीं। इसे मैं अधर्म मानता हूं। जैसे फाकेको हिंदीमें 'धरना देना' कहते हैं, गुजरातीमें इसे लंघन करना या 'त्रागा'[1] कहते हैं। उसमें पुण्य तो नहीं, पाप ही है। ऐसे पापसे सब सौ कोस दूर रहें।

नई दिल्ली, २७-१-'४८

: ९८ :

कांग्रेसका स्थान और काम

कांग्रेस देशकी सबसे पुरानी राष्ट्रीय राजनैतिक संस्था है। उसने कई अहिंसक लडाइयोंके बाद आजादी हासिल की है। उसे मरने नहीं दिया जा सकता। उसका खात्मा सिर्फ तभी हो सकता है, जब राष्ट्रका खात्मा हो। एक जीवित संस्था या तो जीवित प्राणीकी तरह लगातार बढती रहती है, या मर जाती है। कांग्रेसने सियासी आजादी तो हासिल कर ली है, मगर उसे अभी माली आजादी, सामाजिक आजादी और नैतिक आजादी हासिल करनी हैं। ये आजादियां चूंकि रचनात्मक हैं, कम उत्तेजक हैं और भडकीली नहीं हैं, इसलिए उन्हें हासिल करना राजनैतिक आजादीसे ज्यादा मुश्किल

---

[1] दूसरेको रास्तेपर लानेके लिए अपने ऊपर की जानेवाली जबरदस्ती।

है । जीवनके सारे पहलुओको अपनेमे समा लेनेवाला रचनात्मक कार्य करोडो जनताके सारे अगोकी शक्तिको जगाता है ।

काग्रेसको उसकी आजादीका प्रारभिक और जरूरी हिस्सा मिल गया है, लेकिन उसकी सबसे कठिन मजिल आना अभी बाकी है । जनतन्त्रात्मक व्यवस्था कायम करनेके अपने मुश्किल मकसदतक पहुचनेमे उसने अनिवार्य रूपसे दलबदी करनेवाले गदे पानीके गड्हो-जैसे मडल खडे किए है, जिनसे घूसखोरी और बेईमानी फैली है और ऐसी सस्थाए पैदा हुई है, जो नामकी ही लोकप्रिय और प्रजातत्री है । इन सब बुराइयोके जगलसे बाहर कैसे निकला जाए ?

काग्रेसको सबसे पहले अपने सदस्योके उस विशेष रजिस्टरको अलग हटा देना चाहिए, जिसमे सदस्योकी तादाद कभी भी एक करोडसे आगे नही बढी और तब भी जिन्हे आसानीसे शनाख्त नही किया जा सकता था । उसके पास ऐसे करोडोका एक अज्ञात रजिस्टर था, जो कभी उसके काममे नही आए । अब काग्रेसका रजिस्टर इतना बडा होना चाहिए कि देशके मतदाताओकी सूचीमे जितने मर्द और औरतोके नाम है, वे सब उसमे आ जाय । कांग्रेसका काम यह देखना होना चाहिए कि कोई बनावटी नाम उसमे शामिल न हो जाय और कोई जायज नाम छूट न जाय । उसके अपने रजिस्टरमे उन देश-सेवकोके नाम रहेगे जो समय-समयपर उनको दिया हुआ काम करते रहेगे ।

देशके दुर्भाग्यसे ऐसे कार्यकर्त्ता फिलहाल खास तौरपर शहरवालोमेसे ही लिए जायगे, जिनमेसे ज्यादातरको देहातोके

लिए और देहातोमे काम करनेकी जरूरत होगी। मगर इस श्रेणीमे ज्यादा-से-ज्यादा तादादमे देहाती लोग ही भर्ती किए जाने चाहिए।

इन सेवकोसे यह अपेक्षा रखी जायगी कि वे अपने-अपने हलकोमे कानूनके मुताबिक रजिस्टरमे दर्ज किये गए मतदाताओके बीच काम करके उनपर अपना प्रभाव डालेगे और उनकी सेवा करेगे। कई व्यक्ति और पार्टिया इन मतदाताओको अपने पक्षमे करना चाहेगी। जो सबसे अच्छे होगे उन्हीकी जीत होगी। इसके सिवा और कोई दूसरा रास्ता नही है, जिससे काग्रेस देशमे, तेजीसे गिरती हुई अपनी अनुपम स्थितिको फिरसे हासिल कर सके। अभी कलतक काग्रेस बेजाने देशकी सेविका थी। वह खुदाई खिदमतगार थी, भगवानकी सेविका थी। अब वह अपने आपसे और दुनियासे कहे कि वह सिर्फ भगवानकी सेविका है, न इससे ज्यादा, न कम। अगर वह सत्ता हडपनेके व्यर्थके झगडोमें पडती है तो एक दिन वह देखेगी कि वह कही नही है। भगवानको धन्यवाद है कि अब वह जन-सेवाके क्षेत्रकी एकमात्र स्वामिनी नही रही।

मैने सिर्फ दूरका दृश्य आपके सामने रखा है। अगर मुझे वक्त मिला और स्वास्थ्य ठीक रहा तो मै इन कालमोमे यह चर्चा करनेकी उम्मीद करता हू कि अपने मालिकोकी, सारे बालिग मर्द और औरतोकी, नजरोमे अपनेको ऊचा उठानेके लिए देशसेवक क्या कर सकते है।

नई दिल्ली, २७-१-'४८

: ६६ :

आखिरी वसीयतनामा

देशका बटवारा होते हुए भी, हिंदकी राष्ट्रीय कांग्रेस-द्वारा तैयार किए गए साधनोके जरिए हिदुस्तानको आजादी मिलनेके कारण मौजूदा स्वरूपवाली काग्रेसका काम अब खत्म हुआ—यानी प्रचारके वाहन और धारासभाकी प्रवृत्ति चलानेवाले तंत्रके नाते उसकी उपयोगिता अब समाप्त हो गई है। शहरो और कसबोसे भिन्न उसके सात लाख गांवोकी दृष्टिसे हिदुस्तानकी सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना अभी बाकी है। लोकशाहीके ध्येयकी तरफ हिदुस्तानकी प्रगतिके दरमियान फौजी सत्तापर मुल्की सत्ताको प्रधानता देनेकी लडाई अनिवार्य है। काग्रेसको हमे राजनैतिक पार्टियो और साप्रदायिक सस्थाओके साथकी गंदी होडसे बचाना चाहिए। इन और ऐसे ही दूसरे कारणोसे अखिल भारत कांग्रेस कमेटी नीचे दिए हुए नियमोके मुताबिक अपनी मौजूदा संस्थाको तोडने और 'लोक-सेवक-संघ'के रूपमे प्रकट होनेका निश्चय करे। जरूरतके मुताबिक इन नियमोंमे फेरफार करनेका इस सघको अधिकार रहेगा।

गाववाले या गांववालो-जैसी मनोवृत्तिवाले पांच बालिग मर्दो या औरतोकी बनी हुई हरएक पंचायत एक इकाई बनेगी।

पास-पासकी ऐसी हर दो पचायतोकी, उन्हीमेसे चुने हुए एक नेताकी रहनुमाईमे, एक काम करनेवाली पार्टी बनेगी।

जब ऐसी १००पंचायते बन जायं तब पहले दरजेके पचास

नेता अपनेमेंसे दूसरे दरजेका एक नेता चुने और इस तरह पहले दरजेके नेता दूसरे दरजेके नेताके मातहत काम करें। दो सौ पचायतोके ऐसे जोड कायम करना तबतक जारी रखा जाय, जबतक कि वे पूरे हिंदुस्तानको न ढक ले। और बादमें कायम की गई पचायतोका हरएक समूह पहलेकी तरह दूसरे दरजेका नेता चुनता जाय। दूसरे दरजेके नेता सारे हिंदुस्तानके लिए सम्मिलित रीतिसे काम करें और अपने-अपने प्रदेशोमे अलग-अलग काम करे। जब जरूरत महसूस हो तब दूसरे दरजेके नेता अपनेमेसे एक मुखिया चुने, जो चुननेवाले चाहें तबतक, सब समूहोको व्यवस्थित करके उनकी रहनुमाई करे।

(प्रातो या जिलोकी अतिम रचना अभी तय न होनेसे सेवकोके इस समूहको प्रातीय या जिला समितियोमे बाटनेकी कोशिश नहीं की गई। और किसी भी वक्त बनाए हुए समूह या समूहोको सारे हिंदुस्तानमें काम करनेका अधिकार रहेगा। सेवकोके इस समुदायको अधिकार या सत्ता अपने उन स्वामियो-ने यानी सारे हिंदुस्तानकी प्रजासे मिलती है, जिसकी उन्होने अपनी इच्छासे और होशियारीसे सेवा की है।)

(१) हरएक सेवक अपने हाथो कते हुए सूतकी या चरखा-सघद्वारा प्रमाणित खादी हमेशा पहननेवाला और नशीली चीजोसे दूर रहनेवाला होना चाहिए। अगर वह हिंदू है तो उसे अपनेमेसे और अपने परिवारमेसे हर किस्मकी छुआछूत दूर करनी चाहिए और जातियोके बीच एकताके, सब धर्मोके प्रति समभावके और जाति, धर्म या स्त्री-पुरुषके,

किसी भेदभावके विना सवके लिए समान अवसर और दरजेके आदर्शमे विश्वास रखनेवाला होना चाहिए ।

(२) अपने कर्मक्षेत्रमे उसे हरएक गाववालेके निजी ससर्गमे रहना चाहिए ।

(३) गाववालोमेसे वह कार्यकर्त्ता चुनेगा और उन्हे तालीम देगा । इन सवका वह रजिस्टर रखेगा ।

(४) वह अपने रोजानाके कामका रेकार्ड रखेगा ।

(५) वह गावोको इस तरह सगठित करेगा कि वे अपनी खेती और गृह-उद्योगोद्वारा स्वयपूर्ण और स्वावलवी वने ।

(६) गाववालोको वह सफाई और तदुरुस्तीकी तालीम देगा और उनकी वीमारी व रोगोको रोकनेके लिए सारे उपाय काममे लाएगा ।

(७) हिदुस्तानी तालीमी सघकी नीतिके मुताबिक नई तालीमके आधारपर वह गाववालोकी पैदा होनेसे मरने तक सारी शिक्षाका प्रबध करेगा ।

(८) जिनके नाम मतदाताओकी सरकारी सूचीमे न आ पाए हो, उनके नाम वह उसमे दर्ज कराएगा ।

(९) जिन्होने मत देनेके अधिकारके लिए जरूरी योग्यता अभी हासिल न की हो, उन्हे उसे हासिल करनेके लिए वह प्रोत्साहन देगा ।

(१०) ऊपर वताए हुए और समय-समयपर बढ़ाए हुए मकसद पूरे करनेके लिए , योग्य फर्ज अदा करनेकी दृष्टिसे सघके द्वारा तैयार किये गए नियमोके मुताबिक वह खुद तालीम लेगा और योग्य वनेगा ।

सघ नीचेकी स्वाधीन सस्थाओको मान्यता देगा

(१) अखिल भारत चर्खा-सघ

(२) अखिल भारत ग्रामोद्योग-सघ

(३) हिदुस्तानी तालीमी-सघ

(४) हरिजन-सेवक-सघ

(५) गोसेवा-सघ

सघ अपना मकसद पूरा करनेके लिए गाववालोसे और दूसरोसे चदा लेगा। गरीब लोगोका पैसा इकट्ठा करनेपर खास जोर दिया जायगा।

नई दिल्ली, २९-१-'४८

: १०० :

हे राम !

नई दिल्ली, ३०-१-'४८